अध्याय-सूची

१—माङ्गलिका	३	३२—वेणु-वादन	१८६
२—गोकुल	८	३३—वत्सोद्धार	१९१
३—मथुरा	१४	३४—बक-वध	१९५
४—श्रीबलराम	२२	३५—व्योम-वध	१९९
५—श्रीकृष्णचन्द्र	२८	३६—अघ-अर्दन	२०३
६—कंस की कूटनीति	३८	३७—वन-भोजन	२१०
७—जय कन्हैयालाल की	४४	३८—विधि-विडम्बना	२१४
८—वंदे नंदनंदनं देवं	५३	३९—ब्रह्म-स्तुति	२२१
९—पूतना-परित्राण	६२	४०—गो-चारण	२२६
१०—दुग्धपान	७४	४१—कालिय-मर्दन	२३३
११—शकट-भञ्जन	७८	४२—धेनुक-वध	२४५
१२—नामकरण	८५	४३—दधि-दान	२५०
१३—भूमि का भाग्य	९०	४४—दुगढा की होली	२५५
१४—व्रजराज के प्राङ्गण में	९३	४५—प्रलम्ब का पाखण्ड	२५८
१५—अन्न-प्राशन	९९	४६—दावानल-पान	२६३
१६—तृणावर्त-त्राण	१०४	४७—गोवर्धन-पूजन	२६९
१७—वर्षगाँठ	१०९	४८—गिरिधर	२७५
१८—बालक्रीड़ा	११३	४९—गोविन्द	२८३
१९—मृद्-भक्षण	११८	५०—दिव्यदर्शन	२८८
२०—फल-विक्रयिणी	१२४	५१—चीर-हरण	२९४
२१—विप्र का सौभाग्य	१२८	५२—विप्र-पत्नियाँ	३०२
२२—व्रजजनानन्द	१३२	५३—मदन-विजय	३१०
२३—माखन-चोर	१३६	५४—मान-भङ्ग	३१९
२४—तस्कराणां पतये नमः	१३९	५५—महारास	३२८
२५—दामोदर	१४७	५६—सुदर्शन-उद्धार	३३३
२६—कर्ण-वेध	१५७	५७—शङ्खचूड़-वध	३३८
२७—गोकुल-परित्याग	१६१	५८—अरिष्ट-संहार	३४१
२८—वृन्दावन	१६९	५९—केशी-वध	३४६
२९—ऊधम	१७२	६०—अक्रूर का आगमन	३५१
३०—गोदोहन	१७६	६१—मथुरा-प्रस्थान	३६०
३१—गोपाल	१८१	६२—नगर-दर्शन	३७०

वर्ष-गाँठ

'शिशिरीकुरुते कदा नु नः शिखिपिच्छाभरणः शिशोर्दृशः ।
युगलं विगलन्मधुद्रवस्मितमुद्रामृदुना मुखेन्दुना ॥'

—श्रीलीलाशुक

'आज तो आप को मौन ही रहना होगा !' श्रीवृषभानुजी ठीक ही तो कहते हैं, आज कृष्णचन्द्र की वर्षगाँठ है; आज भला, व्रजेन्द्र कैसे किसी का प्रेमोपहार अस्वीकार कर सकते हैं। आज ही तो गोपों को सुअवसर मिला है। आज ही तो वे अपने हृदय की लालसा का एक क्षुद्र अंश पूर्ण कर सकते हैं। श्याम अब चलने लगा है, बोलने लगा है तोतली वाणी में और कुछ खाने लगा है। अब उसे आभूषित किया जा सकता है, वस्त्रों से सुसज्ज किया जा सकता है। अपनी रुचि के खिलौने वह स्वयं चुन सकता है। गोपों के उपहार क्या मनुष्य ला सकते हैं। छकड़ों की पंक्तियाँ चली आ रही हैं। बाबा क्या कहें किससे। बाबा ने तनिक पूछा था कि यह सब क्या है तो वृषभानुजी ने हँसकर उन्हें चुप रहने का आदेश दे दिया और कह दिया–'आपके लिये क्या है। हम अपने कुमार को जो जी में आयेगा, देंगे। जो मन में आयेगा, पहिनायेंगे !, और आज अकेले गोकुल और बरसाने की ही बात तो नहीं है; आज तो प्रत्येक व्रज, समस्त दूरस्थ गोष्ठों के गोप भी अपनी उमंग पूरी करके रहेंगे।'

'कन्हैया एक बार भी यदि इन गायों में से किसी का दूध पी लेगा, यदि वह किसी खिलौने को एक बार देखकर हँस पड़ेगा, यदि एक बार वह किसी भी वस्त्र या आभूषण से सज्जित हो जायेगा·····।' प्रत्येक हृदय इतने की ही कल्पना से विभोर हो रहा है। फिर कन्हैया ही अकेला कहाँ है, दाऊ तो उसका अग्रज है न और इस अवसर पर उसके सखाओं को आभूषित किये बिना वह भूषित होगा? वस्त्र, आभूषण, खिलौने, गौ तथा शिक्षित पक्षी—पता नहीं क्या-क्या आ रहे हैं। पता नहीं कब से इन गोपों ने कितनी तन्मयता से इन वस्तुओं को चुना है। इनकी अपार राशि के कण-कण में हृदय का कितना धवल स्नेह है, यह तो इनका वह नन्हा उपभोक्ता ही जानता है।

'श्याम आज कुछ खायेगा। यदि वह मेरे व्यञ्जनों में से कुछ पसंद कर ले।' गोपियों के पकान्न आज गोकुल के गृहों तक ही सीमित नहीं हैं। किसके हृदय में लालसा नहीं है कि उसके करों से सजाये थाल का एक कण नीलसुन्दर के नन्हे लाल अधरों तक पहुँचे। छकड़ों के साथ दूरस्थ गोष्ठों तक से ये जो स्वर्ण-सम्पुट, आच्छादित रत्नथाल चले आ रहे हैं····· !

व्रजराज को बहुत कार्य है आज। इस पिछली रात्रि में वे सोये कहाँ हैं। ब्राह्ममुहूर्त से भी पूर्व तो छकड़ों में जुते वृषभों के गले की घंटियाँ गोकुल को गुञ्जित करने लगी हैं। उपहार के लिये गोप जो कपिला, कृष्णा, पद्मगन्धा सुरभियों के यूथ ला रहे हैं– वे तो हुंकार करती स्वतः इस प्रकार व्रजेन्द्र के गोष्ठ में भागती-दौड़ती चली जा रही हैं, जैसे सदा से वहीं रहती आयी हैं।

'श्रीव्रजराजकुमार की जय !' तुरही, शृङ्ग और शङ्खों के साथ जयघोष गूँज रहा है। गोपों की मण्डलियाँ आ रही हैं—चली आ रही हैं। स्वस्थ, सबल प्रसन्न गोप और अलंकृत, विविध रङ्गों के वस्त्रों से सज्जित छकड़ों पर बैठी गोपियाँ—आज जैसे गोकुल में महापर्व है। आज महापर्व ही तो है-कन्हाई की वर्षगाँठ है न।

व्रजेन्द्र गोपों का अभिवादन स्वीकार करके कुशल प्रश्न कर लें, यही बहुत है। उन्हें सत्कार करने का अवसर कौन देगा। गोप तो आते हैं और बिना पूछे कोई न कोई साज-सज्जा महोत्सव की

प्रस्तुति में लगते जाते हैं। यहाँ भी क्या कोई अतिथि है? कन्हैया उनका अपना है और यह नन्द-भवन तो सदा से उनका गृह है।

गोपियों के उपहार—उन्हें ही तो पता है कि कैसी अङ्गुलियाँ कब शोभा देती हैं। राम-श्याम के वस्त्र, आभूषण उन्होंने कितने दिनों से बनाना प्रारम्भ किया, कुछ ठिकाना है? यह कन्हाई—इसके उपयुक्त आभरण और वस्त्र कैसे बनें, कहाँ से बनें—गोपियों में किसी को संतोष नहीं। सबको लगता है, उनकी कला में कहीं कुछ रह गया है, कुछ अब भी शेष है। कितनी बार उन्होंने उलट-पुलट की है; उन्हें संतोष तो जीवनभर श्रम करके भी होगा, ऐसी आशा नहीं है; पर आज वर्ष-गाँठ है न। उनके उपहार कोई स्वीकृत करेगा—नन्दभवन क्या किसी और का है जो वे उपहार देंगी और कोई स्वीकार करेगा? कनूँ उनका ही है न, तब वे चाहे जो पहिनायेंगी, चाहे जो देंगी उसे। वे अपनी राशि-राशि सामग्री को अपनी ही रुचि से रखने में पूरी स्वाधीन हैं और यहीं तक बात कहाँ है, उत्सव के प्रबन्ध में उन्होंने अपना भाग चुन लिया है और लग गयी हैं उसमें।

× × × ×

यह भी कोई बात है कि पावस में भी कोई पात्र में जल लेकर स्नान कराये!' उमड़ते घुमड़ते भूरे, काले, धूसर मेघ; उनकी गर्जनध्वनि और विद्युत् का आड़े तिरछे चमक जाना—कन्हाई को तो मयूरों के साथ दोनों हाथ फैलाकर रिम-झिम बूँदों में ठुमकना, गोल-गोल फिरना पसंद है। यह नीलसुन्दर मैया की तनिक-सी दृष्टि बचाकर जब वर्षा में भाई और सखाओं के साथ खुले गगन के नीचे भाग पाता है—गगन धरा के इस रसवर्षी नव जलधर का सौन्दर्य कहाँ से पाये, वह तो अपनी फुहारों से इस पर निछावर ही हो सकता है।

मैया को पावस के प्रारम्भ से ही निरन्तर सावधान रहना पड़ा है। उसका यह चञ्चल मानता ही नहीं कि मैया उसे स्नान करा देगी। वह तो ऊपर के पानी में नहायेगा। पता नहीं क्या बात है, नहाने का मन करके, मैया से रूठकर, मचलकर वह आँगन में आया और नन्हे सीकरों की झड़ी लगी; जैसे मेघ भी अपने इस समानवर्णी की प्रतीक्षा ही करते रहते हैं। दाऊ--वह तो छोटे भाई से और आगे है। मानता तो नहीं यह भद्र और यह नन्हा तोक, सब-के-सब पता नहीं क्यों जलमें ही मग्न रहते हैं। एक बार स्नान की बात हो तो कुछ वह भी सही, वर्षा प्रारम्भ हुई और ये सब बस, बाहर भागने को देखेंगे। एक बार कन्हाई निकल गया बाहर तो फिर मैया के पकड़ने के प्रयत्न में वह इधर-से-उधर किलकता भागता रहेगा। वर्षा तक ही बात कहाँ है, ये सब तो आँगन में, बाहर, कहीं भी जल पा जायँ--बस, श्याम वहीं जमकर बैठ जायगा। सब अपने कोमल चरण और हाथ भिगा लेंगे। कीचड़, जल एक दूसरे के ऊपर, कंधे, अलक, भाल पर लगायेंगे—जैसे यह भी कोई अङ्गराग हो। मैया बार-बार पकड़ लाती है, बार-बार उसका कौशेय वस्त्र लथपथ होता है और बार-बार ये भाग जाते हैं।

आज श्याम की वर्षगाँठ है। आज यह उल्लास में है। आज मैया ने इसे उष्णोदक से स्नान करा दिया और आज यह भी झट से स्नान करने को प्रस्तुत हो गया। 'आज ब्राह्मणों को बड़ी बड़ी बहुत-सी गायें देगा, महर्षि शाण्डिल्य के चरणों में प्रणाम करेगा, भगवती पूर्णमासी अङ्क में लेकर आशीर्वाद देंगी।' आज पूजा—दान--उत्सव का उल्लास है। आज इसने स्नान के लिये मचलने का नाम भी नहीं लिया। ठीक तो है, आज आकाश निर्मल है, सम्पूर्ण मार्ग रंग-विरंगे वितानों से आच्छादित हैं, भूमि विविध मण्डलों से भूषित है, ऐसे समय मेघों को बुलाना कैसे ठीक हो सकता है। कनूँ यही तो जानता है कि जैसे उसके नन्हे करों की अङ्गुलियों की चुटकी देखकर और पुचकारने पर उसके श्वान, बिल्लियाँ, मयूर, बछड़े और गायें दौड़ आती हैं, वैसे ही जब वह नहाने के लिये आँगन में या बाहर खड़ा होकर ऊपर मुख उठाता है तो भूरे-भूरे, काले-काले झुंड-के-झुंड मेघ दौड़ आते हैं। नहीं--आज मेघों को बुलाना ठीक नहीं।

मैया ने एक यह क्या पोटली बाँध दी नन्ही सी उसकी दक्षिण कलाई में ? पीतपट में बँधी यह नीम, गुग्गुल, सरसों, दूर्वा, और गोरोचन की पोटली। मैया कहती है कि इसे खोलना मत और यह कनूँ दूसरे हाथ से इसे टटोल कर ही जान लेना चाहता है। उसीके हाथ में क्यों ? दाऊ के, भद्र के, तोक के हाथ में क्यों नहीं ? मैया कैसे बताये कि आज केवल उसी की वर्षगाँठ है, वह तो कहता है—'नहीं, दाऊ को नहीं तो भद्र को ही बाँध ! इसकी भी आज ही वर्षगाँठ होगी !' अब उसकी समझ में क्या यह आने को है कि तोक की, सुबल की, वरूथप की, सबकी वर्षगाँठ क्यों आज नहीं हो सकती। सब उत्सव साथ हुए तो यह वर्षगाँठ ही ऐसी क्या बड़ी है कि उसे साथ नहीं होना है। यह श्याम हठ कर रहा है—'होगी कैसे नहीं, तू कर दे तो !'

'तू भद्र से बड़ा है न ? बस, यह बड़ा होने से तेरी वर्षगाँठ है !' हाँ, माता रोहिणी की यह बात ठीक ! यह बड़ा है—बड़ा है भद्र से, सुबल से तोक से—सबसे बड़ा है। तब ठीक है, इसी की वर्षगाँठ होगी।

× × × ×

ताम्र के सुदीर्घ पात्र पर दुग्धधवल कौशेय वस्त्र और उसपर विराजमान ये श्रीनारायण, जैसे वे क्षीराब्धिशायी ही आ विराजे हों ! गणनायक तो प्रथम पूज्य हैं ही और मातृकाओं के साथ कलश में भगवान् वरुण पूजा प्राप्त कर चुके हैं। नवग्रहों के साथ पितामह पूजित हो चुके। अब तो यह गोपकुल के कुलदेव का पूजन चल रहा है। महर्षि शाण्डिल्य का मन्त्र-पाठ, विप्रों की सामध्वनि और व्रजराज दधि, अक्षत से आराध्य का पूजन कर रहे हैं।

'शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।'

महर्षि ध्यान के मन्त्र बोलने लगे हैं; पर बाबा—बाबा के अङ्क में यह जो द्विभुज पीतपरिधान इन्दीवराभनील अपना कुटिल-चिकुर-मण्डित नन्हा मुख उठाकर उनके मुख की ओर ही देख रहा है, बाबा के बाहर और भीतर दूसरी मूर्ति कहाँ आती है। वे ध्यान कर रहे हैं; वे सोच रहे हैं—कहना ठीक है; वे ठीक ही सोच रहे हैं—'बालक को इतनी देर हो गयी ! यह अब भूखा होगा ! इसके अधर कुछ सूखे-से हो गये हैं। संकोचवश कुछ कह नहीं सकता। कितना विलम्ब और होगा ? कितनी देर लगेगी ? यह कैसे रहेगा तब तक ?'

बाबा प्रत्येक अवसर पर चाहते हैं कि समस्त विधान साङ्गोपाङ्ग पूर्ण हों; कृष्णचन्द्र को समस्त देवताओं की सम्यक् प्रसन्नता प्राप्त हो; किन्तु कन्हैया अभी कितना सुकुमार है ! अभी उसे कैसे तनिक भी क्षुधातुर रक्खा जा सकता है। उसे क्या वायु, शीत आदि में रक्खा जा सकता है ?'

महर्षि शाण्डिल्य तो जैसे श्याम के अनुकूल विधान लिये ही रहते हैं। श्याम है—बस, विधान तो पूर्ण हो गये और ये सर्वज्ञ जब कहते हैं कि देवताओं की पूर्ण प्रसन्नता प्राप्त हो गयी तो संदेह को स्थान कहाँ रहता है। महर्षि का अमोघ आशीर्वाद ही तो निखिलसुमङ्गलसाधक है।

श्याम के नक्षत्रेश चन्द्रदेव, भगवान् सूर्य, षष्ठीदेवी, अग्निदेव, देवगुरु, कालाधिदेव, द्वापर-संवत्सर-मास-पक्ष-तिथि-नक्षत्र-राशि के अधिदेवता, जन्मदेव, स्थानदेव, पञ्चभूत, महामाया, परमपुरुष, भगवान् शिव, सम्भूति, प्रीति, संनति, क्षमा, विघ्नवती, भद्रा, इन्द्रादि लोकपाल, भगवान् शेष तथा कुमार कार्तिकेय—पता नहीं महर्षि शाण्डिल्य ने कैसे सबकी पूजा इतने अल्पकाल में करा दी। पूजा तो हो चुकी चिरंजीवियों में भगवान् परशुराम, वानरश्रेष्ठ हनुमान्, भक्तराज प्रह्लाद, बलि तथा श्रीविभीषणजी की और अब तो क्षेत्रपाल ने अपना भाग प्राप्त कर लिया।

महर्षि ! आप अपना तथा विप्रवर्ग का पूजन समाप्त करा लें ! मैं अपनी बात अपने-आप देख लूँगा !' आज गोकुल का परम सौभाग्य—महर्षि शाण्डिल्य ने वर्षगाँठ के परम पूज्य मार्कण्डेयजी के लिये आह्वान-मन्त्र प्रारम्भ भी नहीं किया और ये तेजोमय—ये स्वयं पधारे ! गगन से जैसे स्वयं भगवान् आदित्य अवतीर्ण हो रहे हों ! सबने उत्थान दिया और व्रजेन्द्र के आनन्द की क्या सीमा है अब। लेकिन महर्षि तो अर्घ्य लेना चाहते ही नहीं इस प्रकार। वे इस संस्कार के अधिष्ठाता

हैं, उनकी आज्ञा ही विधि है और इससे श्रेष्ठ विधि और क्या होगी कि आराध्य अपनी पूजामें स्वयं आचार्य बन रहा है। महर्षि शाण्डिल्य और विप्रवृन्द--उनकी संकोचशीलता, शालीनता; किंतु महर्षि मार्कण्डेय ने बाबा से उनका पूजन प्रारम्भ जो करा दिया।

'वह प्रलय-पयोधि, उसमें वट-पत्र पर वह मरकतमृदुल शिशु अपने हाथ से पैर पकड़कर अँगूठे को चूसता और श्री नन्दराय की गोद में बैठा यह चञ्चल!' पता नहीं महर्षि क्या क्या सोच रहे हैं। उनके नेत्र स्थिर हैं, अश्रुधारा चल रही है और कण्ठ गद्गद हो रहा है।

'आचार्य-पूजन में यह पुरुषसूक्त का स्तवन!' बाबा क्या जानें, ये कल्पान्तजीवी महर्षि भूल तो कर नहीं सकते। 'होगी यह भी विधि; किंतु महर्षि तो कृष्णचन्द्र की ओर ही देख रहे हैं; जैसे इसी की स्तुति कर रहे हों!'

अर्घ्य, पाद्य, आचमन, धूप, दीप—बाबा ने षोडशोपचार से पूजन किया महर्षि ने स्वीकार कर लिया। श्याम को स्वयं अङ्क में लेकर यह पूजन! 'तुम तनिक पी लो तो मैं आज आकण्ठ तृप्त होऊँ! तुम्हारी पद्मगन्धा का यह पुनीत पय--लो, तुम तनिक पी तो लो!' यह महर्षि क्या कन्हाई का उच्छिष्ट लेंगे? ये तो उसी का अनुरोध करने लगे हैं।

'आज इसे आपका परम पावन प्रसाद प्राप्त होना चाहिये!' सदा से वर्षगाँठ के समय शिशु महर्षि के प्रसाद से ही परिपूत होते हैं और आज तो स्वयं महर्षि पधारे हैं। बाबा अपने कृष्णचन्द्र के लिये वह सुयोग कैसे छोड़ दें।

'आचार्य, आप भी कहते हैं? भगवान् शशाङ्कशेखर जिसका चरणोदक मस्तक पर धारण करते हैं ...।' महर्षि मार्कण्डेय इतने क्यों विह्वल हो रहे हैं? वे भी महर्षि शाण्डिल्य को आचार्य कहते हैं! जो बाबा के, इस कनूँ के आचार्य हैं, वे सबके आचार्य हों तो बड़ी बात क्या।

'आप और हम सभी उसके नित्य आदेशों को पालन करने को विवश हैं। उसकी लीला का अनुसरण ही तो करेंगे! आप नैवेद्य स्वीकार करें! व्रजेन्द्र अपने कुमार को यह पावन प्रसाद देने के लिये अत्यन्त उत्कण्ठित हैं।' पता नहीं क्या कहते हैं यह ऋषिगण। इनका मर्म ये ही जानें। जो भी कहा गया हो, मार्कण्डेयजी ने दूध अधरों से लगा लिया है और अब श्याम दूध पी सकेगा।

'यह महर्षि का प्रसाद--इसे श्याम क्या अकेले पी लेगा? यह तो बाबा से आग्रह करने लगा है, यह अकेले दूध नहीं पियेगा। 'दाऊ, भद्र, तोक, सभी को दो! सबको!' और बाबा अपने कुमार की उदारता पर मुग्ध हो विभाजित करने लगे हैं यह प्रसाद!

—❀⊃❀⊃❀—

बाल-क्रीडा

"बालोऽयमालोलविलोचनेन वक्त्रेण चित्रीकृतदिङ्मुखेन ।
वेषेण घोषोचितभूषणेन मुग्धेन दुग्धे नयनोत्सवं नः ॥"

—श्रीलीलाशुक

ये बालक बड़े चपल हैं, ये इधर-से-उधर दिनभर कूदते, फुदकते ही रहते हैं। मैया कितना चाहती है कि ये सब उसके नेत्रों के सम्मुख ही रहें। इसका नीलमणि बहुत सुकुमार है, बहुत दुर्बल है। वह खेलने में लगता है तो फिर क्या उसे क्षुधा का स्मरण रहता है। मैया कितने स्नेह से, कितने आग्रह से उसे दूध पिलाने का प्रयत्न करती है। उसे तो भागने की लगी रहती है। कब मैया छोड़े और वह उसके अङ्क से भागकर सखाओं में जा मिले। कितना प्रयत्न करना पड़ता है दूध पिलाने के लिये। तनिक-सा दूध मुखसे लगाने में भी वह मचलता है। बालक कुछ नवनीत खाय, थोड़ा दूध पिये तो शक्ति आये। यह श्याम तो बस हाथ-पैर नचाता, भूमि में लोट-पोट होता है दूध के नाम से और प्रयत्न करता है कि हाथ मारकर स्वर्णपात्र का दूध गिरा दे।

'लाल, तेरी कामदा का दूध है न यह! मैंने इसमें पद्ममधु मिलाया है! तू तनिक पी तो ले!' मैया आग्रह करती है और यह मचलता ही जाता है। इसे तो दूध पीना नहीं है; फिर मैया चाहे दाऊ को पिला दे या भद्र को। 'मैं दूसरे को दे दूँगी!' मैया जानती है कि कृष्ण से यह बात नहीं कही जा सकती। दूसरे को देने की बात सुनकर तो यह हठ पकड़ लेगा कि अवश्य दूसरे को दिया जाय। यह तो अपना भाग भी बाँटने को अभी से उत्सुक रहता है; फिर मैया देना चाहे किसी को तो यह उसे कैसे ले लेगा।

'देख न, तेरी चोटी कितनी छोटी-सी है! तू यह कृष्णा का दूध पी ले तो तेरी चोटी भी दाऊ की भाँति बड़ी हो जाय!' मैया को सदा कोई-न-कोई बहाना ढूँढ़ना पड़ता है और उसका यह कन्हाई अपनी चुटिया टटोलने लगा है। मैया कहती है तो अवश्य उसकी चुटिया दाऊ से छोटी है—छोटी तो है ही। तब क्या दूध पीले वह? तनिक संदिग्ध तो हो गया दीखता है।

'ले, तू दूध पी तो ले!' मैया का आग्रह कहीं शिथिल हो सकता है।

'तू रोज मुझे दूध पिलाती है! मेरी चोटी तो बड़ी नहीं हुई!' कन्हाई बराबर चुटिया टटोल रहा है।

'लाल, बड़ी क्यों नहीं होगी। इतनी बड़ी तो हुई है। तू दूध पी तो यह खूब बड़ी हो जाय!' मैया का स्वर उमग उठा है। यदि चोटी बढ़ जाय तो दूध पी लेना ही ठीक है। श्याम ने कुछ नहीं कहा, मैया के लिये तो इतना ही बहुत है। उसने पात्र मुख से लगा दिया।

'कहाँ, यह कहाँ बढ़ रही है! एक घूँट, दो घूँट और मुख हटा लिया इसने। यह भी कोई बात है कि दूध पिया जाय और चोटी न बढ़े। एक हाथ से चोटी पकड़े यही तो देख रहा था कि कितनी बढ़ती है वह।

'बढ़ती क्यों नहीं है! तू इसे छोड़कर दूध पिये, तब तो बढ़ेगी!' मैया हँस पड़े तो उसका यह नटखट भाग खड़ा हो। इसे तो किसी प्रकार दूध पिलाना है। 'बात ठीक है, हाथ से पकड़ने पर चुटिया कैसे बढ़ती; किन्तु अब तो बढ़ गयी होगी। अब तो हाथ छोड़कर दूध पिया है। अब देख लेना चाहिये!' यह चुसकीभर दूध पीकर ही फिर टटोलने लगा है।

'मैं नहीं पीता दूध !' अब हो गया। इस समय तो इसे रोका नहीं जा सकता। अब तो पकड़ने पर लोट-पोट होने लगेगा।

'एक घूँट ! बस एक घूँट !' मैया अब कितना भी कहे, अब क्या यह सुननेवाला है।

अरे, सब कहाँ गये ?' मैया क्या करे, तनिक इधर-उधर दृष्टि गयी और सब-के सब बच्चे कहीं खिसके। पता नहीं कहाँ गये होंगे, क्या करते होंगे सब। मैया तो सेविकाओं को इधर-उधर दौड़ाकर भी कभी निश्चिन्त नहीं हो पाती। सेविकाओं का और गोपियों का ही क्या भरोसा ? सब-की-सब खड़ी-खड़ी देखती और हँसती हैं। श्याम को देखते ही सब खड़ी रह जाती हैं। कोई समाचार नहीं देता। कोई उसके चपल को उठा नहीं लाता।

अभी उसी दिन की बात है; मैया सबको ढूँढ़ते-ढूँढ़ते गोष्ठ पहुँच गयी। ओह, उसका नीलमणि, दाऊ, भद्र—सबने एक-एक बछड़े की पूँछ पकड़ रक्खी थीं। बछड़े इधर-उधर हो रहे थे और बालक किलकते उनके साथ डगमग पदों से चल रहे थे। गोपियाँ हँस रही थीं खड़ी हुई। 'चञ्चल बछड़े—नारायण ने कुशल की, कोई कूदा नहीं। कोई बालक गिरा नहीं।' मैया ने देखते ही श्याम और भद्र को उठा लिया, दाऊ को हाथ पकड़कर ले आयी।

'अवश्य सब गोष्ठ में ही गये होंगे। इन सबों को बछड़ों के साथ खेलना ही अच्छा लगता है।' मैया सीधे गोष्ठ पहुँचेगी ही। गायें भी तो इनको देखते ही हुंकार करने लगती हैं। बछड़े तो इन सबों के पास ही घूम-फिरकर कूदते होंगे।'

यह क्या है—यह क्या देखती है मैया ? उसका श्याम दूध पी रहा है। कामदा के स्तनों में मुख लगाये वह दूध पी रहा है। उसकी देखा-देखी यह दाऊ भी इसी गौ के दूसरे स्तन में मुख लगा रहा है और तब भद्र ही क्यों छोड़ दे ? मधुमङ्गल भी इन सबों के साथ ही लगा है दूध पीने में।

श्याम दूध पी रहा है--गोपियाँ, दासियाँ गोष्ठ-सेवक, सब चुपचाप मूर्ति की भाँति खड़े हैं। मैया को भी खड़ा ही होना है। उसका लाल दूध पी रहा है--अपनी कपिला का धारोष्ण दूध। उसके इस दुग्धपान में बाधा नहीं पड़नी चाहिये।

काली, स्निग्ध, घुँघराली अलकों में गुम्फित मुक्तादाम, भाल पर कज्जल-बिन्दु, अञ्जन-रञ्जित दीर्घ लोचन, कण्ठ में बाल-विभूषण, कटि में रत्नमेखला, करों में कङ्कण, पदों में नुपूर और यह दिगम्बर शिशु-मण्डली दूध पीने में लगी है। अरुण कर-चरण गोमयमण्डित हो गये हैं, घुटनों तक पैरों में गोबर लगा है। दोनों कर भूमि पर टेककर, घुटनों के सहारे बैठे, मुख ऊपर किये, गायों के स्तन मुख में लिये ये सब दूध पी रहे हैं। लाल-लाल अधर और उनसे झरती दूध की धारा--चिबुक, वक्ष, कर—सभी पर उज्ज्वल दूध गिर रहा है। गायों के स्तन से जो अजस्र धारा चल रही है, वह क्या इन नन्हे मुखों में आ सकती है ? अलकों पर, भाल पर, और स्कन्धों पर भी दुग्ध-बिन्दु जगमग कर रहे हैं।

कपिला हुंकार कर रही है स्नेह से बार-बार और बार-बार श्याम को सूँघ रही है। 'कहीं यह कन्हाई के मृदुल अङ्ग को चाटने न लगे।' मैया के, गोपियों के, हृदय बार-बार धक्-धक् करते हैं। यह कामदा भी सम्भवतः समझती है—उसकी रूक्ष जिह्वा से यह किसलयकोमल कैसे चाटा जा सकता है। बार-बार वह सूँघती है, मुख हटाकर जिह्वा निकालती है और फिर हटा लेती है। वह हुंकार कर रही है। उसके स्तनों की धारा तो मधुमङ्गल के मुख से भी बाहर निकल रही है। सभी गौएँ हुंकार कर रही हैं। बालकों ने अनेकों के स्तनों से मुख लगा लिये हैं; किंतु कामदा—आज कामदा की तुलना किससे है। श्याम उसका दूध पी रहा है और पी रहे हैं उसका दूध दाऊ, भद्र, मधुमङ्गल। उसके चारों स्तन धन्य हो गये हैं। गायें उसकी ओर मुख उठाकर देख रही हैं। सबके स्तनों से झरती दुग्ध-धारा से गोष्ठ पिच्छल हो उठा है।

यह कूद रहा है कामदा का सौष्ठव ! यह तो कभी श्याम, कभी दाऊ, कभी भद्र और कभी मधुमङ्गल को सूँघता कूद रहा है। कितना प्रसन्न है यह। बार-बार विचित्र स्वर में 'बें' करके फुदकता

है। जैसे सबको प्रोत्साहित करता हो—'पिओ, खूब पिओ! मेरी माँ का दूध कितना मीठा है। तुम सब भरपेट छक कर पी लो।'

कन्हाई ऊपर मुख किये, अर्ध-मुकुलित लोचनों से आनन्दमग्न दूध पी रहा है—दूध पी रहा है वह। कुछ आहट हुई, किसी की चूड़ियाँ या कङ्कण खनके, या उसका नन्हा उदर भर गया? कौन जाने, उसने गौ का स्तन छोड़ा और तनिक मुख मोड़ा पीछे को। जैसे कोई बड़े संकोच में पड़ गया हो—'कब आयीं ये गोपियाँ? यह मैया कब आयीं?' और अब तो वह दोनों हाथ उठाकर मैया की गोद में आने को दौड़ आया है। श्याम के अङ्ग दूध और गोमय से लिप्त हैं, मैया के कौशेय वस्त्र—कहीं माँ इसे सोचा करती है। मैया के अङ्क में तो पता नहीं कितनों को आना है। सभी तो दूध पीना छोड़कर दौड़े आ रहे हैं। अब इन सबसे उलझने में भी एक आनन्द ही है।

'मैं तुझे नहीं लूँगी। मैं तो भद्र को लूँगी।' कन्हाई दोनों हाथ उठाये, अञ्चल पकड़े मचल रहा है और मैया उसके मुख की ओर देखती हँस रही है मन्द-मन्द। यह श्याम हठ कर रहा है, अनुरोध कर रहा है—मैया उसे गोद में ले ले। भद्र को भी ले ले तो आपत्ति नहीं और मन में आये तो दाऊ को भी ले ले; पर उसे भी ले ले। ले ले उसे।

श्याम आग्रह कर रहा है—कोई युग-युग, कल्प-कल्प की अविरल साधना, अविश्रान्त अभीप्सा लिये प्रतीक्षा करता है कि यह नील-सुन्दर एक क्षण को अपने श्रीचरणों से उसके अन्तर को आलोकित कर दे, योगीन्द्र, मुनीन्द्र तथा भगवान् शशाङ्कशेखर भी शत-सहस्र वर्षों की समाधि में इसे अपने हृदय में आसीन ही करना चाहते हैं और आज यह मचल रहा है—मचल रहा है कि मैया इसे अङ्क में उठा ले। मैया उठायेगी तभी तो उसकी महिमामय गोद मिल सकेगी इसे।

कन्हाई हाथ उठाये है और मैया हँस रही है—'मैं भद्र को लूँगी!' श्याम ने अपने सखाओं से अमर्ष करना कहाँ सीखा है। वह तो कह रहा है—'भद्र, तू आ! तू आ जा तो यह मुझे भी ले लेगी!'

× × × ×

श्याम रूठ जाय—मैया कितना बचाती है कि यह न रूठे। भूमि में लोट-पोट होने लगेगा, कोई गोद में लेना चाहे तो और खीझेगा, और रोयेगा! उठानेवाले को अपने चरणों, करों से मारेगा, उसकी नासिका, नेत्र, कान, मुख नोचना चाहेगा और बार-बार भूमि में उतरने को उझकेगा! रोते-रोते कमल-दल-लोचन लाल हो जायँगे, कज्जल कपोलों पर फैल जायगा और हिचकेगा, रोयेगा ही फिर। फिर इसे क्या चुप करना सरल होता है?

मैया के प्राण व्याकुल हो उठते हैं, उसके हृदय को जैसे कोई मुट्ठियों से पकड़कर मरोड़ने लगता है।—उसके नीलमणि के नेत्रों में आँसू आयें····! बाबा, गोप, गोपियाँ, माता रोहिणी—फिर कहाँ किसे दूसरा कुछ कार्य दिखायी दे सकता है। राशि-राशि खिलौने, विविध प्रकार के मिष्टान्न, अद्भुत-अद्भुत पक्षी—पर जब यह मचलता है, कुछ भी पास आया और फेंक देगा उठाकर उसे। मैया को छोड़कर तब उसे कौन छू सकता है। दाऊ, भद्र, तोक—श्याम रोने लगा और फिर सब रोयेंगे—सब रोयेंगे। सब न रोयें तो बात सरल है, श्याम अपने किसी सखा के हाथ को रोते में भी हटा नहीं सकता। दाऊ अपने नन्हे हाथों भाई के आँसू पोंछने लगे—कन्हाई चुप तो हो ही जायगा तब और कहीं भद्र या तोक पास पहुँच जायँ, श्याम तो इनको उदास देखकर ही हँसने लगेगा; पर जब ये सब उसे रोता देखकर स्वयं रोने लगते हैं—मैया, माता रोहिणी, सभी अत्यन्त व्यग्र हो उठते हैं।

आज अँधेरा होने लगा और बालक खेल में लगे तो फिर क्या प्रकाश और क्या अँधेरा; पर मैया को तो क्षण-क्षण भारी होने लगा था। उसने किसी प्रकार श्याम को उठाया अङ्क में और वह रूठ गया। अब तो रूठ गया वह! वह अभी खेलना चाहता था, मैया क्यों उसके साथियों को घर-घर भेजने लगी। अब तो मचल गया वह! लो, लेट गया भूमि पर और लगा चरण उछालने।

'लाल, तू देख तो सही! देख, सब हँस रहे हैं! सब कहते हैं कि कनूँ रोता है और यह चन्द्रमा—देख तो तू कि यह चन्द्रमा कितना बड़ा, कितना सुन्दर निकला है!' मैया ने अपने रोते,

धूलि-सने नीलमणि को अङ्क में लिया ! उसके हाथ-पैर चलते रहे, रोता रहा, उतरने को मचलता रहा वह और मैया ने ठुड्ढी पकड़कर उसका मुख पूर्व की ओर कर दिया। यह शशि--पूर्णिमा का यह चन्द्र; किन्तु कृष्णचन्द्र की तुलना कैसे करे वह। मैया तो एकटक अपने इस नित्यपूर्ण, नित्य निर्मल चन्द्र को एकटक देख रही है। रोने से नेत्र और मुख अरुण हो गये हैं, कपोलों पर अञ्जन के साथ बड़ी-बड़ी बूँदें झलमल कर रही हैं, पलकें भीगी हैं ! मैया अञ्चल से मुख पोंछने लगी है इसका। यह किसी प्रकार चुप तो हुआ। चन्द्र इसे बहुत सुन्दर लगा है आज, कितने ध्यान से देख रहा है।

'मैया, मैया री, मैं इसे खाऊँगा !' दोनों हाथ उठा कर यह जैसे पकड़ लेगा चन्द्रमा को। इतना उज्ज्वल, इतना चिकना चन्द्र—अवश्य यह मीठा होगा ! अब मैया को हँसी न आये तो क्या हो और यह उसके मुख पर हाथ रखकर खीझने लगा है—'तू दे, दे मुझे ! मुझे भूख लगी है !'

'लाल, तू माखन खा ले ! खूब मीठा माखन !' कहीं श्याम फिर न रोने लगे ! मैया का हृदय अभी से शङ्कित हो गया है।

'ना, मैं तो इसे खाऊँगा !' यह हठी इस प्रकार भुलावे में कहाँ आता है।

'छिः ! यह रोयेगा; यह तो तेरे प्राणियों-जैसा चलता-फिरता है ! इसे कहीं खाया जाता है !' मैया ने समझाने का प्रयत्न किया।

'मैं इससे खेलूँगा !' श्याम ने पता नहीं क्या समझा प्राणियों-जैसा चलता-फिरता—कोई बछड़ा, कोई बिल्ली, कोई श्वान, कोई पक्षी—ऐसा ही कुछ; इतना सुन्दर प्राणी—तब तो इसके साथ खेलना बड़े मजे की बात है। कनूँ अपने दोनों हाथों की अँगुलियों से बुलाने लगा है—'आ, आ जा !'

'मैया, तू इसे पकड़ दे ! मेरे बुलाने से तो नहीं आता यह !' जब कोई मयूर, कोई बिल्ली पकड़ में नहीं आती तो यह कनूँ माता रोहिणी या मैया से ही तो कहता है। यह चन्द्रमा भी बुलाने से नहीं आता।

'लाल, यह नहीं आयेगा ! इसे तो दूर से ही देखते हैं !' मैया समझ गयी है कि यह बहाना ठीक नहीं हुआ। अभी से वह सोचने लगी है, क्या किया जाय।

'आयेगा क्यों नहीं ! तू पकड़ दे ! पकड़ दे तू !' अब कन्हाई माता के हाथ खींचने लगा है। मैया हाथ उठाकर कहे कि दूर है, मेरे हाथ नहीं आता, तो यह कैसे मान ले। मैया पकड़ती नहीं, यह कैसे हो सकता है कि मैया के हाथ न आये यह। 'तू दौड़, पकड़ ला इसे ! मैं इसे लूँगा ! मैं खेलूँगा इसके साथ !' गोपियाँ हँस रही हैं, माता रोहिणी आशङ्कित हो गयी हैं और मैया तो पुचकारने में लगी है।

'मैं चन्द्र लूँगा ! ला तू !' श्याम मचलने लगा ! मचलने लगा ! अब रोयेगा वह !

'श्याम रोयेगा ! रोयेगा यह सुकुमार ! इसके ये नेत्र लाल हो जायँगे !' मैया व्यग्र है, प्राण तड़प रहे हैं। क्या करे— क्या करे ? और वह तो हँस पड़ी—'तू चन्द्र ही लेगा न ! ले, मैं इसे बुलाये देती हूँ ! तू तनिक बैठ तो यहाँ !' श्याम प्रसन्न हो गया है। आनन्द से बैठ गया है। वह चन्द्र लेगा ! चन्द्र के साथ खेलेगा !

'ले, चन्द्र इसमें आ गया ! अब तू ले ले इसे !' मैया ने भी अच्छी युक्ति सोच ली। जल-पूर्ण स्वर्ण-पात्र हाथ में ऊपर उठाकर पुकार लिया चन्द्रमा को और पात्र रख दिया भूमि पर कन्हाई के सम्मुख।

'हाँ, चन्द्र आ तो गया !' कन्हाई ने मस्तक झुकाकर देख लिया है और अब प्रसन्न होकर ताली बजा रहा है। यह रहा चन्द्र ! अब पकड़ेगा इसे और फिर दाऊ, भद्र, सबको दिखायेगा ! दोनों हाथ डाल दिये हैं जल में ! गोपियाँ हँस रही हैं। मैया भी मन्द-मन्द हँस रही है; पर श्याम अपनी धुन में है। यह चन्द्र बड़ा चञ्चल है। इतने वेग से जल में नाचता है कि पकड़ने में ही नहीं

आता। 'कहाँ गया ?' जल और वेग से हिला और श्याम हाथ निकालकर पात्र के इधर-उधर झाँकने लगा है। है तो पात्र में ही; पर पकड़ में जो नहीं आता।

'तू पकड़ ! पकड़ इसे !' बहुत प्रयत्न कर लिया, अब स्वयं नहीं पकड़ सकता तो मैया का हाथ पकड़कर आग्रह करने लगा है।

'कनूँ, देख न ! यह चन्द्र तो रोता है ! तेरे भय से काँपता है ! तू जाने दे अब इस बिचारे को !' मैया को तो भय है ही कि कहीं फिर यह हठ न करने लगे।

'चन्द्र रोता है !' श्याम कुछ सोचने लगा है। रोता ही होगा, काँपता तो है ही और क्या पता यह सब पानी उसका आँसू ही हो तो। कोई रोता है, कोई भय से काँपता है, यह कल्पना भी इसे कहाँ सह्य है। 'ना, ना, छोड़ दे ! छोड़ दे तब इसे !' मैया का हाथ पकड़ कर वह स्वयं रोकने लगा है।

'मेरे, लाल ! देख, चन्द्र कितना प्रसन्न हो गया ! वह तुझे आशीर्वाद देता है !' मैया ठीक कहती है। श्याम तो देखता ही है कि चन्द्र ऊपर आकाश में अब काँपता नहीं। खूब प्रसन्न दिखायी पड़ता है।

आज बहुत रोया है मैया का यह हृदयधन, बहुत देर रोया। अब थक गया है। रात्रि हो गयी है। अब तो इसे दूध पीकर सो जाना चाहिये।

—❀⊂❀⊂❀—

मृद्-भक्षण

"मध्येगोकुलमण्डलं प्रतिदिशं हम्भारवोज्जृम्भिते
प्रातर्दोहमहोत्सवे नवघनश्यामं रणन्नूपुरम् ।
भाले बालविभूषणं कटिलसत्सत्किङ्किणीमेखलं
कण्ठे व्याघ्रनखं च शैशवकलाकल्याणकातन्यं भजे ॥"

—श्रीलीलाशुक

"कनूँ, यह मेरा ग्रास है ! यह बाबा का है ! यह तेरी बड़ी माँ का है—बस !" मैया अपने नीलमणि को भोजन करा रही है। यह कन्हाई एक ग्रास किसी प्रकार लेता है मुख में और फिर इधर-उधर नाचने, घूमने लगता है। मैया पात्र लेकर बार-बार उसके पास जाती है। किसी प्रकार एक नन्हा-सा ग्रास दे पाती है और फिर यह इधर-उधर फुदकने लगता है।

दही-भात से सने लाल-लाल ओष्ठ, चिबुक और वक्षपर भी गिरा लिया है इसने। मैया कितना प्रयत्न करती है कि यह कुछ खा लिया करे ! व्रजेन्द्र नित्य भोजन के समय इसकी प्रतीक्षा करते हैं। दाऊ तो बुलाने पर आ भी जाता है और व्रजेश के थाल के पास बैठ जाता है; किंतु इस चञ्चल को बुलाने के लिये कितना मैया को श्रम करना पड़ता है। यह न आये तो व्रजेश कैसे मुख में ग्रास दे लें। इसे और भद्र को अङ्क में बैठाकर ही तो वे भोजन प्रारम्भ करते हैं। बालकों के मुख में नन्हे-नन्हे ग्रास देनेपर ही उन्हें भोजन रुचिकर हो सकता है। लेकिन यह चञ्चल—इसे तनिक अवसर मिला और भागा किलकता हुआ। इसे तो मैया ही किसी प्रकार दो-चार ग्रास खिला पाती है।

'अरे, तनिक ठहर तो ! ला, तेरा मुख तो धो दूँ ! कहीं जूठे मुख भी खेलने जाते हैं !' अब तो मैया को जल लेकर इसके पीछे चलना है। यह क्या खड़े होकर सीधे मुख धुला लेगा। मैया पकड़कर किसी प्रकार ही धो सकती है अब तो इसके हाथ, मुख, चिबुक और वक्ष।

× × × ×

"मैया, तू मुझे छोटी-सी मोटी रोटी तो दे ! खूब चुपड़ दे माखन ! हाँ, सब-की-सब मैं अकेला खाऊँगा ! दाऊ को नहीं दूँगा !" आज बड़े भाई से यह मान पला नहीं क्यों जग उठा है।

"क्यों लाल ? दाऊ को तू क्यों नहीं देगा ?" मैया को रोटी बनाकर देते कितनी देर लगती है अपने नीलमणि के लिये ही तो वह इतने सबेरे स्वयं रोटी बनाने लगी है।

"नहीं दूँगा—तुझे क्या ! खूब मोटी, खूब छोटी रोटी दे तो तू ! मेरे हाथ-जैसी छोटी !" कन्हाई रूठा नहीं है, वह तो आनन्दमग्न है और यह रोटी लेकर आ गया आँगन में वह। तनिक तनिक, दो-तीन चावल-जितनी तोड़ता है और मुख में डाल लेता है

बायें हाथ पर छोटी-सी माखन-चुपड़ी रोटी, दाहिने हाथ से तनिक-तनिक तोड़कर मुख में देता यह कन्हाई ! यह दिगम्बर नवजलधरसुन्दर अपने कटि की किङ्किणी, नूपुर को रुन-झुन करता घूम-घूमकर नाच रहा है ! ये कपि, ये म्याऊँ-म्याऊँ करती बिल्लियाँ, ये संग-संग नाचते मयूर—मैया ने सबके लिये व्यवस्था कर दी है; किंतु न बिल्लियों को दूध पीना है, न मयूरों को दाना चुगना है और न कपियों को मोदक ही चाहिये। ये काक तक तो दधि-चावल की ओर देखते नहीं। सब कन्हाई को घेरे हैं, सब इसके साथ लगे हैं। यह दाहिने हाथ के अङ्गुष्ठ और तर्जनी से नन्हा-सा कण रोटी में से तोड़कर कभी अपने मुख में रख लेता है और कभी किसी की

और फेंक देता है। इसके एक कण पर जब सब दौड़ते हैं तो यह किलकता है, हँसता है और मैया की ओर देखता है। रोटी लिये-लिये नाच रहा है।

'कनूँ, कनूँ, देख मेरी रोटी!' अब तो यह आया दाऊ और यह भद्र! सखाओं की मण्डली ही आ गयी मैया के प्राङ्गण में। मैया, गोपियाँ, सब एकटक मूर्ति-सी देखने लगी हैं इस बाल-मण्डली को। सब रोटियाँ लिये नाचने में लगे हैं, सब दो अँगुलियों से तनिक-सा टुकड़ा तोड़ते हैं और या तो मुख में रख लेते हैं या किसी दूसरे सखा के मुख में दे देते हैं अथवा किसी कपि, पक्षी या बिल्ली की ओर फेंकने का प्रयत्न करते हैं।

'दाऊ को नहीं दूँगा!' कन्हाई तो कब का भूल गया इसे। वह तो बार-बार बड़े भाई को, भद्र को, तोक को सभी सखाओं को, खिलाने का प्रयत्न कर रहा है और सभी तो उसे खिला रहे हैं।

इस काग पर कनूँ की कुछ विशेष कृपा दीखती है! यह कौआ बिचारा अब तक कोई कण न पा सका। श्याम इसे पूरी रोटी ही दिखाता है और जब कौआ उड़ता है पास आने को तब रोटी पीछे करके मैया की ओर भागता है! कौए को भी अँगूठा दिखा कर चिढ़ा रहा है। 'लो अब!' कौआ कब तक इस प्रकार ठगा जाय। अबकी तो उसने रोटी लपक ही ली! सब-की-सब रोटी लेकर वह उड़ा, वह उड़ा जा रहा है। उसके भाग्य जग गये। श्याम के हाथ की जूठी रोटी—यह सुर-मुनि-दुर्लभ परमपावन प्रसाद आज वह छककर खायेगा!

बड़ा ढीठ है यह काक! कोई तो कनूँ के करों से कुछ नहीं छीनता। ये कपि तक तो कुछ उसके सम्मुख धरे पात्र से उठाने का साहस नहीं करते। मयूर, बिल्लियाँ, कोई कभी उससे कुछ इस प्रकार नहीं लेता और यह काक—यह तो अद्भुत काक है, कोई काक भी इतना साहस कहाँ करता है; किंतु कन्हाई तो वैसे ही हाथ फैलाये रोटी लेकर जाते काक को देख रहा है। कुछ आश्चर्य, कुछ प्रसन्नता ही है उसके मुखपर। उसका मुख तो कहता है—'बड़ा अच्छा है, बड़ा अच्छा है यह काला पक्षी! मैं इसे फिर रोटी लेकर बुलाऊँगा और यह फिर ऐसे ही रोटी लेकर उड़ेगा।' सम्भवतः इतने छोटे कौए का इतनी बड़ी रोटी लेकर उड़ना ही श्याम के कुतूहल का कारण है। कौन जाने भुशुण्डि ही इस प्रसाद से पवित्र होने आये हों!

× × × ×

'कनूँ, ला, मुझे तो दे!' कोई गोपी श्याम के हाथ का मोदक माँगे; परिणाम एक ही है, यह देने को हाथ बढ़ाकर झट खींच लेगा और अँगूठे दिखायेगा। यह अँगूठे दिखाना सम्भवतः मधुमङ्गल ने सिखा दिया और यह उसे तो बार-बार अँगूठे दिखाकर चिढ़ा देता है।

'लाल, तू मुझे नहीं खिलायेगा!' माता रोहिणी, मैया—भला, इनको भी कहीं अँगूठा दिखाया जा सकता है। यह तो कन्हाई के मनकी बात है कि वह दो अँगुलियों से तनिक-सा मोदक तोड़कर मुख में देगा या पूरे-का-पूरा ही खिलाना चाहेगा; पर हाथ पर देना तो उसने सीखा है नहीं। हाथ पर तो वह किसी सखा के नहीं देना चाहता। वह तो अपने करों से ही खिलायेगा और जब वह एक हाथ से किसी के अधर पकड़कर 'मुख खोल' का हठ करने लगे तो मुख न खोलने का एक ही अर्थ है कि फिर वह अपने नन्हे बायें हाथ से चपत लगाने का प्रयत्न करेगा! मुख तो खोलना ही पड़ेगा। किसी के मुख में अपना पूरा मोदक देकर दोनों हाथों से तालियाँ बजाता, मस्तक हिला-हिलाकर फिर खूब प्रसन्न होता है यह।

'कनूँ! कनूँ! श्याम! आजा भैया!' माता रोहिणी पुकारती रहें, खेल में लगने पर कन्हाई कहाँ सुनता है। माता को पास आते देख यह भाग खड़ा होता है हँसता हुआ और बलात् पकड़ने पर तो रोने लगेगा। धूलि में लोट-पोट होने लगेगा। माता को तो सदा लौटकर व्रजरानी को ही भेजना पड़ता है।

"श्यामसुन्दर, देख न, कितनी देर हो गयी! तू भूखा है, आ दूध पी ले! तेरे बाबा भोजन करने बैठे हैं और तुझे पुकार रहे हैं!" श्याम कहाँ ध्यान देता है।

"देख, तेरे सब सखा कैसे स्नान किये हैं ! इनकी माताओं ने इनको कैसे अलङ्कार पहिनाये हैं ! तू भी स्नान कर ले ! मैं तुझे भी आभूषण पहिना दूँ ! तू इनसे कम कैसे रहेगा !" लेकिन कन्हाई तो सुनता ही नहीं। वह तो हँसता हुआ भाग ही रहा है।

"हाँ, तू विप्रों को गोदान करेगा न ! चल तो, आज तो तेरा उत्सव है !' यह बात है कुछ सोचने की। विप्रों को गोदान—श्याम का सबसे प्रिय कार्य है यह और अब मैया ने उसे पकड़ पाया है। गोदान तो होगा ही, कृष्णचन्द्र प्रसन्न रहे तो व्रजेश नित्य सहस्रशः गोदान करने में क्यों न संतुष्ट रहें। मैया ने बालकों को समझा लिया है। सबको साथ ले आ रही है। गोपियाँ अपने पुत्रों को ले जायँगी नन्दभवन से। श्याम अपने सखाओं को छोड़कर खेल से पृथक् भी तो नहीं हो सकता और अब उसे भोजन करना चाहिये। भूखा हो गया होगा वह।

× × × ×

'मैया, मैया, देख, दाऊ मुझे चिढ़ाता है !" आज कनूँ अपने भाई से झगड़ आया है। यह भी कोई बात है कि वह किसी के धूलि के घरौंदे न बिगाड़े। उसने भद्र के घरौंदे बिगाड़ दिये तो क्या हुआ। दाऊ को भद्र ने क्यों पुकारा और दाऊ तो कहता है—'कनूँ, काला है ! काला भी कहीं अच्छा होता है !' काला तो तोक भी है, वह क्या अच्छा नहीं है ? वह तो बहुत अच्छा है। कनूँ को तो वह बहुत अच्छा लगता है। लेकिन दाऊ तो चिढ़ाने ही लगा तब, यह मैया से क्यों उलाहना न दे। उलाहना तो बड़ी माँ से भी दिया जा सकता है, ना—ऐसी बात कन्हाई कैसे सोचे। कहीं बड़ी माँ उसके बड़े भाई पर सचमुच खीझने लगे तो ? उसे तो तनिक धमकी देनी है। मैया ही ठीक है, मैया तो कभी दाऊ पर नहीं खीझती, इसी से तो यह मैया के पास आ गया है अपना अभियोग लेकर।

'दाऊ चिढ़ाता है तुझे ?' मैया तो अपने नीलमणि का यह रूप देख रही है एकटक ! ये घुँघराली अलकें, ये धूलिसने कपोल और यह तनिक अरुणाभ हुआ क्षोभभरा मुख—यह कनूँ उसकी भुजा पकड़कर झकझोर रहा है।

'दाऊ कहता है कि मैया ने तुझे हँडिया भर दही दे कर खरीदा है ! तू बाबा का लड़का होता तो गोरा होता न ! मैया, दाऊ ने सबको सिखा दिया है ! सब ताली बजा-बजा कर हँसते हैं, सब मुझे दही से खरीदा बताते हैं।' कन्हाई कहता ही जा रहा है। मैया भी हँस रही है उसकी ओर देखकर।

'तू भी हँसती है—तू तो मुझे ही डाँटती है, मुझे ही मारना सीखा है तूने ! दाऊ को तो तू कभी डाँटती ही नहीं !' श्याम रुष्ट हो गया है। उसका मुख और अरुण हो चला है। उसके विशाल लोचन भर आये हैं। यह भी कोई बात है कि वह उलाहना दे और मैया हँसे। दाऊको यह डाँटती क्यों नहीं।

'मेरे लाल, मेरे नीलमणि !' मैया इन नयनों को भरा कैसे देख सकती है। 'मैं तेरी जननी हूँ, लाल !' मैया का कण्ठ भर आया है। उसके लोचन गोष्ठ की ओर उठ गये हैं, जैसे वह गोष्ठ को—गो माता को साक्षी करके यह बात कह रही हो।

"श्रीकृष्ण, क्या है ?" अरे, यह उपनन्द-पत्नी—बड़ी ताई कहाँ से आ गयीं ? कान्ह तो इधर-उधर देखने लगा है। उसके नेत्र कह रहे हैं कि उसे आशङ्का हो गयी है—मैया कहीं इनसे कह न दे ! ये अवश्य माता रोहिणी से, गोपियों से कह देंगी ! दाऊ—उसका अग्रज—माता खीझेंगी उस पर, उसके सखा डाँटे जायँगे ! अब क्या यह यहाँ टिक सकता है। यह भागा, यह मैया के करों से अपने को छुड़ाकर भागा। अब कहाँ स्मरण है कि इसे कोई चिढ़ाता था। मैया पुकार रही है; लेकिन इसे तो खेलना है और सखा प्रतीक्षा करते होंगे।

× × × ×

'कनूँ, तू मिट्टी खाता है ? देख, मैं मैया से कह दूँगा !' आज इसे क्या हो गया है ? मिट्टी खाने की कैसे सूझ गयी ? व्रजकी यह परम पावन रज—कौन जाने इस रज के स्वाद ने ललचाया या कुछ और बात है; किन्तु श्याम ने एक चुटकी धूलि डाली तो है मुख में। इस धूलि के बड़े ढेर पर बैठकर खेलते-खेलते उसके मन में आयी होगी--'देखें तो धूलि कैसी लगती है !' इधर-उधर देखकर चुपके से एक चुटकी डाल ली मुख में; किंतु यह भद्र बड़ा विचित्र है। यह उसे देखा ही करता है। इसने देख ही लिया उसे मिट्टी खाते।

'खाता हूँ, तेरा क्या। मैं खाऊँगा; जा, कह दे तू !' श्याम कहीं धमकाने से मानता है। यह तो सदा से हठी है। भय कहाँ सीखा है इसने और यह भद्र धमकाने चला है उसे !

लेकिन-लेकिन भद्र तो सचमुच मैया से कहने चला गया। बड़ा मानी—बड़ा क्रोधी है भद्र भी। तनिक भी किसी की सह नहीं सकता। अनुनय करना तो दूर—कन्हाई अकड़ता है उससे ! और वह जा रहा है दौड़ता भद्र। 'तब क्या सचमुच कह देगा मैया से ?' श्याम संकुचित हो गया है, सोचने लगा है।

'कह लेने दो !' अपना मानकर कहता है और यह हठी अपने सम्पूर्ण नील अङ्ग में धूलि लगाये अभी भी धूलि के ढेर पर ही बैठा है !

'नहीं, भद्र कहेगा नहीं ! वह तनिक द्वार की ओट में जाकर फिर लौट आयेगा ! वह क्या पीछे बार-बार देखता जा रहा है मुड़ करके !' यह मुख को दूसरी ओर घुमाये बैठा है। भद्र की ओर नहीं देखता है—किंतु कहीं कह दे तो ?' मन में भय तो है ही। पता नहीं मैया क्या कहेगी। भद्र तो चला ही जा रहा है।

'कनूँ, तू मिट्टी मत खा !' यह भी कोई बात है कि सब-के-सब एक ही बात लेकर उसके पीछे पड़ गये हैं। वह खायगा ! खायगा मिट्टी ! उसने सबको झगड़े के स्वर में कह दिया है। अब सब जाते हैं मैया से कहने तो जायँ।

'मैया कहती है, मिट्टी खाने से पेट में कीड़े पड़ जाते हैं !' भद्र बार-बार देख रहा है पीछे। कन्हाई धूलि पर से उतर तो नहीं गया। वह उतर जाय—वह मान जाय ! मैया यदि इसे खीझने लगे....! कहीं मिट्टी खाने से कीड़े...।' भद्र के नन्हे हृदय में पता नहीं क्या-क्या हो रहा है। वह जा रहा है, मैया के समीप जा रहा है। श्याम उसकी बात नहीं मानता और मिट्टी—कीड़े—नहीं, उसे मैया से कहना ही है।

'मैया, कनूँ मिट्टी खाता है ! हम सब मना करते हैं तो मानता नहीं !' यह दाऊ, ये सुबल, वरूथप, मणिभद्र—भद्र को साथ भर आना पड़ा है। उसकी बात तो दूसरों ने ही कह दी। बात किसी ने कही हो—मैया कहीं कन्हाई को मारेगी तो नहीं ? वह तो सुनते ही दौड़ पड़ी है—कनूँ मिट्टी खाता है ? मिट्टी !'

× × × ×

'क्यों रे, तू मिट्टी खाता है ?' अब क्या हो ? मैया तो आ गयी। वह खूब रुष्ट जान पड़ती है।

'ना मैया, मैंने मिट्टी नहीं खायी !' मैया ने हाथ पकड़ लिया है। अब भागने का भी कोई उपाय नहीं। कन्हाई क्या करे ? उसने सचमुच मिट्टी खायी कहाँ है ? तनिक-सी धूलि जिह्वापर रखना भी क्या कोई खाना है ? वह तो स्वाद ले रहा था।

'तेरे ये सब सखा कहते हैं और तेरा यह बड़ा भाई दाऊ भी तो कहता है !" बड़ी कठिनाई है। इतने सब साक्षी हैं और वे भी सब तुले दीखते हैं। श्याम इधर-उधर देख गया चञ्चल नेत्रों से। कोई उसे सङ्केत से भी आश्वासन नहीं देता। सब दाऊ के पक्ष में हो गये हैं—अच्छा !

"ये सब-के-सब झूठ बोलते हैं !" ऐसे सत्यवादी से काम पड़ जाय तो क्या आपका रोष टिका रह सकेगा ? आप हँसेंगे नहीं ? लेकिन मैया को भय है कि उसके पुत्र ने मिट्टी खायी है और मिट्टी से तो हानि होगी। वह इस बात को हँसी में कैसे टाल दे।

"सब झूठे हैं और अकेला तू सच्चा है!" मैया धूलि में इधर-उधर देखने लगी है। पता नहीं उसे वहाँ क्या पाना है।

"तू मेरी बात सच नहीं मानती तो मेरा मुख तो तेरे सम्मुख ही है, देख ले!" कन्हाई ने तो मुख तभी पोंछ लिया जब सब मैया से कहने चले। मुख में तो ब्रजरज थी, उसे भी झटपट मुख चलाकर उदरस्थ कर लिया अब मैया देखे तो भी क्या मिलेगा। श्याम को कहाँ पता है कि जिह्वापर, दन्तों के मध्य में अब भी रज के कुछ कण एवं चिह्न हैं।

"अच्छा, खोल तो मुख!" मैया ने तो सचमुच चिबुक पकड़कर मुख ऊपर उठा दिया। अब तो कन्हाई को मुख खोलना ही पड़ेगा।

× × × ×

मैया रुष्ट है, अब तक क्या तनिक-सी रज मुख में ही होगी?" श्याम ने मुख खोल दिया।

योगमाया—वे उद्भव-स्थिति-संहार-कारिणी निखिललीलामयी क्या कभी प्रमाद करती हैं। श्यामसुन्दर के मुख में अब भी रज के कण हैं, अब भी जिह्वापर एक पतला-सा चिह्न है और मैया के सूक्ष्म निरीक्षण से वह छिपा नहीं रह सकता। वात्सल्यमयी जननी—मैया अवश्य कृष्ण-चन्द्र पर खीझेगी। मृत्तिका तो शिशु के लिये हानिकर है न! मैया कैसे यह क्षमा कर देगी। श्रीकृष्णचन्द्र ने कह दिया है कि उन्होंने मृत्तिका नहीं खायी। ये नीलसुन्दर—ये सर्वेश सत्यवाक् सत्यसङ्कल्प हैं। ब्रज में ये कोई भी लीला करें—हाँ, कहाँ खायी मृत्तिका इन्होंने। ब्रज-रज क्या मृत्तिका है? नन्हा-सा कमलसुन्दर मुख, मैया ठुड्डी पकड़कर उसे ऊपर उठा चुकी और झुक गयी उस मुख के सम्मुख देखने के लिये। ये खुले अधर, यह दीखी उज्ज्वल दन्तपंक्ति—योगमाया अब कैसे प्रमाद कर सकती हैं। तनिक-सा मस्तक झुका, पता नहीं अपने आराध्य के लिये या आराध्य को भी सम्मुख खड़ा करके उसका मुख देखने को झुकी ब्रजेश्वरी के लिये। नेत्रों में तनिक-सी गति हुई—बस!

श्याम का नन्हा-सा सुन्दर मुख, पतले-पतले लाल-लाल अधर, उज्वल दन्तछवि और इस नीलसुन्दर के कमल-नेत्रों में आशङ्का का भाव कितना सलोना बन गया है। यह डर रहा है, कहीं कोई रेणुका कण रह न गया हो! कहीं मैया देख न ले उसे!

'मैया को क्या हो गया?' सब बालक आश्चर्य से मैया की ओर ही देख रहे हैं। 'यह खीझती तो नहीं, पर इसके नेत्र ऐसे क्यों हो रहे हैं?'

मैया ने चिबुक पकड़कर मुख उठाया श्याम का। कृष्णचन्द्र ने मुख खोला। झुककर मैया ध्यान से देख लेना चाहती थी कि कहीं सचमुच कन्हाई ने मिट्टी तो नहीं खायी है। वह तो जैसे मूर्ति की भाँति स्थिर हो गयी है। उसके नेत्र आश्चर्य से पूरे खुल गये हैं। पलक गिरते ही नहीं। क्या बात है?

"ये जीव! यह काल! ये नाना प्रारब्ध और उनके सञ्चालक! यह कारण-तत्त्व और यह प्रकृति, महत्, अहङ्कार! यह मन, इन्द्रियाँ, त्रिगुण! ये वायु, अग्नि, आकाश, वरुण, इन्द्रादि अधि-देवता! ये सूर्य, चन्द्र, तारकमण्डल! ये महासागर, महाद्वीप, गिरिश्रेणियाँ! ये कानन! ये नदियाँ और ये नगर!" मैया तो अधिदैव जगत् का पूरा दर्शन करके अब अधिभूत जगत् को देखते देखते पृथ्वी देखने लगी हैं।

ये नगर! यह मथुरामण्डल और यह कालिन्दी! यह गोकुल, यह गोष्ठ और ये गोपगण, गौएँ और गोपियाँ! ये व्रजेश्वर! ये बालक और—और यह क्या? यह क्या दूसरी ब्रजरानी!' मैया चौंकी। वह अपना ही यह दूसरा रूप कैसे देख रही है? उसका शरीर स्वेदपूरित हो गया है, काँप रहा है। कन्हाई के चिबुक से लगा हाथ नीचे चला गया है और अब नहीं देख सकेगी।

"मैं स्वप्न देख रही हूँ? कहीं मुझे कोई बुद्धिभ्रम तो नहीं हो गया?" स्वप्न कैसे मान ले, वह तो स्पष्ट जग रही है और बुद्धि में भ्रम कैसा। 'मेरे इस पुत्र में जन्म से ही कोई सिद्धि तो नहीं?'

जन्म से सिद्धि होती है, यह सुना तो है। स्मरण आता है कि एक दिन दूध पीते समय जम्हाई लेने पर भी इसके मुख में ऐसे ही अद्भुत दृश्य दिखायी पड़े थे।

"कुछ पता नहीं ! तर्क काम नहीं करता। बुद्धि कुछ समझ नहीं पाती। सिद्धि ऐसी कैसे हो सकती है ? महर्षि गर्ग ने कहा था कि यह गुणों में नारायण के समान है ! कहीं यह साक्षात् नारायण ही तो नहीं ? नारायण—मेरे, व्रजेश्वर के, समस्त गोप, गोधन एवं गोकुल तथा सचराचर के स्वामी श्रीनारायण ! नारायण प्रसन्न हों ! मैं बुद्धिहीना उनकी शरण हूँ !" मैया के नेत्र भाव-पूरित होकर बंद हो गये। उसने अञ्जलि बाँधकर मस्तक झुका लिया।

"हो चुकी लीला—मैया को यह लगने लगा कि यह चञ्चल नन्हा-सा उसका कन्हाई श्री नारायण है, तब तो बन चुकी !" योगमाया चौंकी। उनके आराध्य इसे क्षमा नहीं करेंगे। उनकी पलकों में पुनः एक मन्द कम्पन हुआ। मैया को तो उसका परम पावन वात्सल्य ही चाहिये। उसे ऐश्वर्यबोध के निम्न स्तर में लाने पर क्या श्यामसुन्दर क्षमा करेंगे ? यह एक क्षण का विनोद हुआ—बहुत हुआ ! मैया का नित्य भाग तो पराभक्तिरूप नित्यवात्सल्य है।

"मैया तो कनूँ को हाथ जोड़ रही है !" बालकों को बड़ा विचित्र लगा। हाँ, उनके ऊधम से ऊबकर गोपियाँ कितनी बार हाथ जोड़ती हैं। जब वे किसी पर धूलि डालने लगते हैं, वह हाथ ही तो जोड़ता है। 'मैया हाथ जोड़कर श्याम को कदाचित् चिढ़ा रही है !' सबने तालियाँ बजायीं।

सब हँस रहे हैं, सब ताली बजा रहे हैं और सब के नेत्रों में व्यङ्ग है। मैया हाथ जोड़कर, मस्तक झुकाकर उसे चिढ़ा रही है। कनूँ क्या इतना भी नहीं समझता ! यह मैया भी चिढ़ाती है उसे !

"मैया, भूख लगी है मुझे ! दूध ! दूध !" श्याम मैया के वस्त्र पकड़कर लटक गया। सब इसे चिढ़ाते हैं, बड़े खराब हैं सब ! मैया भी--पर अभी तो भूख लगी है और इन चिढ़ानेवाले सखाओं से एक बार मैया की गोद में पहुँचकर पीछा भी तो छुड़ाना है।

"भूख लगी है !" मैया ने सुना, नेत्र खोले और जैसे उसे अभी कुछ और भी बात हुई हो—स्मरण ही नहीं। 'यह नीलमणि भूखा है। उसके वस्त्र पकड़कर गोद में आने को मचल रहा है ! इसका मुख क्षुधा से सूख-सा रहा है। अधर किञ्चित् म्लान-से हो रहे हैं।' मैया ने उठा लिया गोद में स्नेहविभोर होकर ! 'इसे दूध पिलाना है--यही तो !'

फल-विक्रयिणी

"मधुरिमभरिते मनोऽभिरामे मृदुलतरस्मितमुद्रताननेन्दौ ।
त्रिभुवननयनैकलोभनीये महसि वयं व्रजभाजि लालसाः स्मः ॥"

—श्रीलालशुक

'कोई फल लो ! फल ! जम्बू, नारङ्ग, प्रियङ्गु के फल !' बेचारी वृद्धा आज अपने फलों की टोकरी लिये प्रातः से गली-गली भटक रही है। आज वह नन्दग्राम आ गयी है फल बेचते हुए और कौन ले यहाँ उसके फल ? उसने प्रातः इस ओर बड़ी आशा से प्रस्थान किया। पुलिन्दपल्ली में एकाकिनी बुढ़िया वह—अब उससे बन-बन जाकर फल एकत्र नहीं किये जाते। वृक्षों पर चढ़ने की शक्ति रही नहीं और अच्छे फल क्या यों ही मिल जाते हैं ? जीवन में कभी कच्चे, खट्टे फल बेच कर उसने किसी को धोखा नहीं दिया। अनेक ग्राम—यहाँ तक कि मथुरा के भी अनेक पथ के भवनों के लोग उसके शब्द सुनकर ही फल लेने दौड़ पड़ते हैं। कभी उसे श्रम नहीं करना पड़ता फल बेचने में; किंतु उसके कौन है जो बन से फल एकत्र करके ला देगा। फल हों, तभी तो बेचे जायँ। वह वृद्धा हो गयी, बन-बन नित्य भटकना बड़ा कष्टकर है; पर पेट—पेट की क्षुधा कैसे माने। उसने सुना है कि व्रजपति नन्दराय और उनके व्रज के सभी गोप बड़े उदार हैं। कितने श्रम से कई दिनों में इतने उत्तम फल वह एकत्र कर पायी है। 'अवश्य गोकुल में कोई उसके फलों के सञ्चय का मूल्य समझेगा और तब ठीक मूल्य मिलेगा उसे। कुछ दिन तो विश्राम कर सकेगी वह।' उसके समान फलों को देख-कर ही उनकी श्रेष्ठता को पहिचाननेवाला कदाचित् ही कहीं मिले और आज तो वह अपने फलों पर गर्व कर सकती है। जीवन में इतने उत्तम फल उसे प्रथम बार मिले हैं।

'फल लो ! फल !' वृद्धा का कण्ठ सूख गया है। ध्वनि उच्च होने पर भी रूक्ष है और उसका स्वर खिंचाव नहीं ले पा रहा है। भला, कौन लेगा गोकुल में उसके फल। वह तो प्रातः इधर आकर ही निराश हो गयी। ये झुककर फलभार से झूमते पादप और इनके ये अनोखे फल—वृद्धा फल-विक्रयिणी ने जीवन में ऐसे फल देखे ही नहीं। ये प्रियङ्गु, ये नारङ्ग, ये जम्बू—इतने सुरङ्ग, सुगन्धित फल भी होते हैं—हो सकते हैं, यह तो उसने कभी सोचा ही नहीं था। किस गिनती में हैं उसकी टोकरी के फल यहाँ ! इच्छा हुई थी कि लौट जाय—आशा बड़ी बलवती होती है। वृद्धा के लिये यहाँ से लौट जाना और फिर दूसरे स्थान पर जाने का श्रम सहज नहीं। यह अपार वैभव, ये स्वच्छ मणिजटित भवन—गोपों का ऐश्वर्य तो मथुरा से भी अधिक है। भला, ये सम्राट् की सम्पत्ति को भी लज्जित करने वाले भवन—इनके निवासी क्या स्वयं वृक्षों से फल तोड़ते होंगे ! उसे आशा है कि कोई-न-कोई अवश्य उसके फल ले लेगा।

'फल लो ! फल !' मध्याह्न होने को आया, चरण थक गये, कण्ठ की पुकार मन्द पड़ने लगी, श्वासों की गति बढ़ गयी और अब क्या करे वृद्धा ! गोकुल में किसी ने उसकी ओर—उसकी पुकार की ओर ध्यान ही नहीं दिया। किसी ने सुना ही नहीं। कोई झूठ-मूठ पूछ ही लेता—वह क्या बेचती है ? आज कैसा दिन है ? किसी बालक तक ने उससे फलों के लिये पूछा नहीं। अब नहीं चला जा सकेगा भाग्य ! क्या लाभ और भटकने से ? सभी गलियों में पुकार आयी वह, सभी गृहों के सम्मुख हो आयी।

यह उच्च भवन—यहाँ कदाचित् कोई पुकार ले ! यही तो श्रीनन्दराय का भवन दीखता है, यहाँ से यदि कोई फल लेना चाहे—आज भाग्य ठीक नहीं, जब गोपों ने, बालकों तक ने फल नहीं लेना चाहा तो व्रजाधिप के यहाँ तो वैसे ही उपहार के फलों की राशियाँ लगी होंगी ! कौन

पूछेगा यहाँ ! पर—पर एक बार पुकार तो ले, पुकार लेने में क्या हानि। जैसे प्रातः से अबतक पुकार लगी—वैसे एक और सही ! लेकिन फलविक्रयिणी वृद्धा जाने या न जाने, इस द्वार की पुकार क्या और द्वारों की पुकार-जैसी हो सकती है ? यहाँ आकर भी कोई निराश जा सकता है ? यह बाबा का द्वार है और यहाँ एकबार पुकारकर फिर कहीं पुकारना--फिर कहीं भटकना कहाँ शेष रह जाता है।

× × × ×

'फल लो ! कोई फल ले लो ! जम्बू, नारङ्ग, प्रियङ्गु···फल !' कोई नहीं आता--किसी ने सुना नहीं जान पड़ता। वृद्धा हताश लौटने जा रही है ! आज फल नहीं बिकेंगे उसके ?

'फल लो !' कन्हैया चौंका। उसकी घुँघराली अलकें कपोलों पर झूम गयीं और उसने झटके से द्वार की ओर मुख किया--'फल क्या ? फल कैसी वस्तु ?' वह झटपट दौड़ा द्वार की ओर। दाऊ, भद्र, सब सखा मैया के पास हैं। श्याम अकेले आज इधर खिसक आया है। यहाँ कहीं छिप जाय और सखा तथा मैया ढूँढ़ें तो आनन्द आये; किन्तु यह फल ? अब वह छिपने की तो बात ही भूल गया। फल लेगा और मैया को, दाऊ को, सब को ले जाकर देगा ! वह शीघ्रता से द्वार पर आ गया।

'फल ! ओ फलवाली, मैं फल लूँगा !' अरे, फल लेकर तो बुढ़िया लौटी जा रही है ! द्वार पकड़कर श्रीकृष्णचन्द्र ने देखा और तब जल्दी से पुकारा उसे।

'फल ! ओ फलवाली, मैं फल लूँगा !' कौन बोला ? किसकी वाणी है यह ? यह कोमल, अमृत-मय स्वर--वृद्धा ने मुड़कर देखा और उसके पैर वहीं रह गये ठिठके हुए। नेत्र स्थिर हो गये। स्निग्ध घुँघराली अलकें, विशाल भाल, दीर्घ नयन, लाल अधर, कानों में कुण्डल, कण्ठ में मणि-माला, भुजाओं में केयूर-कङ्कण, कटि में रत्न-मेखला, चरणों में नूपुर, एक हाथ से द्वार पकड़े, देहली पर खड़ा यह जो इन्दीवरदलश्याम दिगम्बर सौन्दर्यधन शिशु खड़ा है—वृद्धा का शरीर निश्चल हो गया है उसके नेत्रों की पलकें तक नहीं गिरतीं !

'फलवाली, मैं फल लूँगा !' कन्हाई ने पुनः पुकारा। यह बुढ़िया तो सुनती ही नहीं। यह तो बोलती भी नहीं ! कब तक इसकी प्रतीक्षा यहाँ से की जाय। कनूँ ने देखा कि पुकारने से यह नहीं आती तो दौड़ गया उसके पास। उसका एक हाथ जो नीचे लटक रहा था, पकड़कर झकझोर दिया--'फल दे मुझे !'

'फल !' वृद्धा जैसे निद्रा से जगी। उसने एकबार अपना हाथ पकड़े, ऊपर मुख किये मोहन को देखा और फिर धीरे से बैठ गयी टोकरी लिये ही। टोकरी मस्तक से उतार कर सम्मुख रख दी उसने।

'लाल, लो देख लो ये फल ! बड़े मधुर हैं !' उसने टोकरी के ऊपर का आवरण हटा दिया।

'ये फल !' श्याम ने देखा; फल क्या होता है, यह तो अब समझ लिया उसने और सच-मुच फल हैं बड़े अच्छे। रङ्ग-विरङ्गे, लाल-पीले फल देखकर वह वृद्धा के समीप खिसक आया—'मैं सब फल लूँगा ! तू सब-के-सब मुझे दे दे !' कहाँ मिलेगा ऐसा ग्राहक बुढ़िया को।

'तुम क्या मूल्य दोगे इनका ?' फलवाली के कोटर में धँसे नन्हे नेत्र तो अपने इस भोले ग्राहक के मुख पर स्थिर हैं। फल लेकर यह चञ्चल कहीं झटपट कूदते भाग जायगा। जितनी देर सम्मुख रहे, उतना ही अच्छा। मूल्य की चर्चा में कुछ देर तो समीप रहेगा; किन्तु हृदय—हृदय तो कहता है--'छिः ! तू इससे भी मूल्य माँगती है। अच्छा,·····' लेकिन यह कैसे सम्भव है। कहाँ वह अन्त्यज पुलिन्द और कहाँ यह गोपाल—कैसे इसे अङ्क में ले सकती है—मन इन तर्कों को कहाँ सुनता है। वहाँ तो एक ही ललक है—यह एक क्षण को गोद में आ जाता।

'मूल्य—मूल्य क्या होता है ?' कन्हाई ने इधर-उधर देखा। कोई वृक्ष, कोई पत्ता, कोई पत्थर इस मूल्य नाम का उसने सुना नहीं अब तक। मूल्य किसी पक्षी का नाम है या पशु का ? उहुँ, गोकुल में कोई मूल्य होता तो क्या अब तक उसे पता न होता उसका।

'जब कोई वस्तु किसी से लेते हैं तो उसे भी बदले में दूसरी कोई वस्तु देनी पड़ती है, इसी को मूल्य कहते हैं !' वृद्धा को हँसी आ गयी इस भोलेपन पर। उसने समझाया--'जब तुम मुझसे इतने फल लोगे तो मुझे इनके बदले में कौन-सी वस्तु दोगे ?'

'बदले में क्या दूँगा ? तू कैसी बुढ़िया है ? मुझे तो मैया नित्य मक्खन देती है, वह तो कुछ नहीं लेती बदले में ! गोपियाँ खिलौने देती हैं, गोप भी तो देते हैं—कोई कुछ नहीं माँगता !' श्याम ठीक कह रहा है। यह कैसी अद्भुत फलवाली है कि माँगने पर भी उसे फल नहीं देती और बदले में कुछ माँगती है। उसे तो न माँगने पर भी सब देते हैं और जब वह किसी की कोई वस्तु नहीं लेना चाहता, उसकी मनुहारें की जाती हैं। उसे आग्रह करके वस्तु दी जाती है। मैया कितना हठ करके मक्खन देती है उसे।

'भगवान् ने अस्पृश्य बनाया ! कङ्गाल बनाया मुझे ! मेरे ऐसे भाग्य कहाँ कि तुम्हारे इन कोमल करों में आग्रह करके कुछ दे सकूँ। आज—आज ये नेत्र सफल हुए ··· तुम्हें फल ही दे पाती इस प्रकार नित्य ···!' वृद्धा के केवल सूखे अधर काँप रहे हैं। उसके नेत्रों से धारा चल रही है। वह बोल नहीं पा रही है; किन्तु उसकी यह प्रार्थना—जो केवल अन्तर की ही भाषा समझता है, उसने तो कब से स्वीकार कर लिया उसे। उसके कर्णों तक हृदय की मूक ध्वनि को पहुँचने में कौन रोक सकता है और वह ध्वनि पहुँचने पर फिर क्या कभी असफल होती है।

'तू रो मत ! मत रो तू, मैं मूल्य लाता हूँ !' कनूँ किसी के भी नेत्रों में अश्रु देख नहीं पाता। 'यह फलवाली अपने फलों के मूल्य के लिये ही कदाचित् रो रही है।' झट से अपने लाल-लाल हाथों से वृद्धा के नेत्र पोंछ दिये और दौड़ गया एक ओर मूल्य लाने। अभी सभी सखाओं के साथ वह कुछ ही पूर्व तो उस अन्न की महाराशि के समीप क्रीड़ा कर रहा था। सब-के-सब राशि पर बैठे थे और परस्पर अन्न की मुट्ठियाँ एक दूसरे के उदर या कन्धों पर डाल रहे थे। मैया ने सब को भीतर बुला लिया था। श्याम उसी अन्न में से एक अञ्जलि लाने जा रहा है। वह दौड़ा जा रहा है। वृद्धा के नेत्र भी लगे हैं उधर ही। फल लेकर इधर आते समय उसकी दृष्टि भी इन राशि-राशि अन्नों पर पड़ी थी। उसने एक निःश्वास लिया था—'इसका एक दाना भी मेरे भाग्य में नहीं !' और यह नीलसुन्दर उसी ओर अन्न लाने दौड़ा जा रहा है।

श्रीकृष्ण अन्न ला रहा है। उसने अपनी नन्ही अञ्जलि धान्य से भर ली है और अपनी समझ से भली प्रकार सम्हाले आ रहा है। नन्ही-सी अञ्जलि, सुकोमल अङ्गुलियाँ और अञ्जलि बनाना आता कहाँ है इसे। अङ्गुलियों की तथा दोनों करतलों की सन्धि से धान्य गिर रहा है, एक रेखा-सी बन रही है; लेकिन कन्हैया इसे कैसे देखे ? क्या क्या देखे वह ? कहीं कोई उसे इस प्रकार अन्न ले जाते देखकर कुछ पूछ दे तो ? बार-बार वह इधर-उधर सशङ्क देख लेता है और 'कहीं फलवाली उन सुन्दर रङ्ग-विरङ्गे फलों को लेकर भाग न जाय !' वह फलवाली की टोकरी पर भी दृष्टि लगाये है।

'ले अपना मूल्य ! अब झटपट फल दे दे मुझे ! मैं सब लूँगा !' कन्हाई ने टोकरी में अञ्जलि खोल दी और फिर हाथ फैला दिये फल के लिये।

'मेरे इतने फलों का मूल्य यह एक दाना है ?' बुढ़िया ने देख लिया है कि अञ्जलि जब टोकरी में खोली गयी तो उसमें एक ही दाना था।

'एक दाना !' कन्हाई भी चौंका। टोकरी में तो एक ही दाना गिरा है। उसने घूमकर पीछे देखा राशि से यहाँ तक बनी धान्य की उस पतली रेखा को। 'धान्य तो सब मेरे हाथ से गिर गया। मैं तो इतना ले आ रहा था।' उसने अञ्जलि बनाकर बताया। लेकिन अब क्या हो ? एक क्षण देखता रहा वह उस धान्यरेखा और वृद्धा को क्रमशः।

'आज तो तू मुझे फल दे दे ! फिर आना तो मैं तुझे बहुत-सा अन्न दूँगा !' अब पुनः अन्न लेने जाना शङ्का की बात है। कहीं कोई देख ले ! कोई पुकार ले ! 'तू मुझे फल दे दे माँ !' फल तो लेने ही हैं और वृद्धा ऐसे देती नहीं जान पड़ती तो अनुनय करने लगा है वह।

'माँ ! माँ !' वृद्धा के कर्ण में पता नहीं कैसे गया है यह शब्द—शत-सहस्र रूप से जैसे उसके हृदय में यह पहुँचा है। 'माँ !' यह विह्वल हो उठी है। उसका रोम-रोम पुलकित हो गया है। 'माँ !' वह इस सौन्दर्यधन के मुख से अपने लिये 'माँ' सुन रही है।

'मैं फिर तो तब आऊँगी जब मेरे जीवन में यह फिर आयेगा !' पता नहीं बुढ़िया क्या बड़बड़ा रही है। कन्हाई तो आतुर है, उसे ये सुन्दर फल चाहिये। 'लेकिन तुम मेरी गोद में आकर एक बार मुझे माँ कह दो.....।'

'तब तू मुझे सब फल दे देगी न ?' बीच में ही श्याम ने उत्सुकतापूर्वक पूछा। 'सब-के-सब फल ?'

'हाँ !' बुढ़िया की इस 'हाँ' के पूरा होते-न-होते तो नीलसुन्दर उसके अङ्क में आ बैठा और अपनी काली घुँघराली अलकों से घिरा चन्द्रमुख उसके मुख की ओर उठाकर कह रहा है—'माँ ! माँ, तू अब झटपट मुझे फल दे दे !' लो, वह तो फिर गोद में से सम्मुख खड़ा हो गया अञ्जलि बनाकर। बुढ़िया ने एक-एक करके सब फल भर दिये—सब भर दिये उसी नन्ही अञ्जलि में और सब आ गये। सब आ तो गये, पर यदि वे गिर जायँ तो ? कनूँ ने अञ्जलि वक्ष में लगा ली है। बड़ी सावधानी से वह जा रहा है।

वृद्धा देखती रही—देखती रही और तब भी देखती रही नन्दभवन के उसी द्वार की ओर जब उसके नेत्रों का वह परमधन भीतर जा चुका था। कब वह उठी, उसे पता नहीं और कैसे उसने टोकरी उठायी, यह भी वह नहीं जानती। उसके पग इधर-उधर डगमग पड़ रहे हैं। उसके नेत्रों से अश्रु चल रहे हैं और उसका रोम-रोम पुलकित है। टोकरी—बहुत भारी है यह टोकरी, इतनी भारी टोकरी कैसे ले जाय वह ! इतनी भारी टोकरी ? उसे कौन बतावे कि तेरी टोकरी में रत्न भरे हैं, उनके मूल्य के सम्मुख किसी सम्राट् का सिंहासन भी तुच्छ है ! लेकिन वृद्धा के हृदय में जो महाज्योतिर्मय वह यशोदा का नीलरत्न आ गया है—भला, उसे पाकर इन पत्थरों का भार कौन ढोये। सम्मुख वे नीली-नीली श्रीयमुनाजी की लहरियाँ हैं और यह नीलवर्ण वृद्धा को अब तो आकर्षित करेगा ही। सिर से टोकरी उठाकर झम् से फेंक दिया उसने और एकटक देखती रही जलराशि को। चञ्चलता, लहरियाँ उठीं, एक लहर ने उसके चरणों का स्पर्श कर लिया।

× × × ×

'मैया ! मैया री ! देख, मैं कितने फल लाया हूँ !' कन्हाई ने दूर से ही पुकारा। उसका मुख नीचे झुका है, अञ्जलि वक्ष से लगी है। फलों को सम्हालने में भालपर नन्हे सीकर चमकने लगे हैं।

'अरे, इतने फल तू कहाँ से ले आया ?' मैया ने अपने लाल का श्रम देख लिया। हँसते हुए उठकर अञ्चल फैलाकर फल ले लिये उसने।

'फलवाली ने दिये हैं !' कन्हैया तो इस प्रकार पीछे देख रहा है, जैसे फलवाली उसके साथ ही आयी है। 'तू मुझे खिला तो ! दाऊ को भी खिला, भद्र को भी।' एक ओर से वह सभी सखाओं को, बाबा को, मैया को, सबको खिलाना चाहता है अपने फल। ये फल उसके हैं, वह ले आया है और सब खाकर देखें तो सही कि उसके फल कितने मीठे, कितने अच्छे हैं। अब मैया को तो यह कार्य ही पहले करना है। कन्हाई की धुन पूरी न हो तो वह क्या दूसरा काम करने देगा।

'ये थोड़े-से फल ! ये तो समाप्त ही नहीं होते !' मैया को आश्चर्य हो रहा है। कनूँ ने हठ करके सबको खिलाया है। व्रजराज तक इसके स्वाद की प्रशंसा करते हैं। गोपियाँ बार-बार इन्हीं को आकर माँगती हैं और सबको आग्रहपूर्वक देने पर भी ये समाप्त नहीं होते। मैया ने स्वयं भी तो देख लिया है खाकर—सब ठीक ही तो कहते हैं कि इतने सुस्वादु फल भी होते हैं—यह उन्होंने सोचा ही नहीं।

'अवश्य उस वृद्धा के वेश में कोई देवी पधारी थीं। उन दयामयी ने कृष्णचन्द्र को अपना यह अमृतप्रसाद दिया फलों के रूप में।' श्रीव्रजराज, मैया, गोप, गोपियाँ, सबके लिये यही समाधान है। इतने सुस्वादु फल और व्यय करने पर भी घटते नहीं ये—इनके सम्बन्ध में और क्या सोचे कोई। कन्हाई बड़ा प्रफुल्ल है—उसके फल बहुत अच्छे हैं। वह खूब सुन्दर फल ले आया है !

—❀-❀-❀—

विप्र का सौभाग्य

"आन्दोलिताग्रभुजमाकुलनेत्रलीलमार्द्रस्मितं च वदनाम्बुजचन्द्रबिम्बम् ।
शिशानभूषणशतं शिखिपिच्छमौलि शीतं विलोचनरसायनमभ्युपैति ॥"

—श्रीलीलाशुक

विप्रवर कण्व आज गोकुल पधारे हैं। आज लगभग पाँच वर्षों के पश्चात् वे गोकुल आये हैं। व्रजवन में—अपने एकान्त आश्रम में जब वे अपनी भगवदाराधना में लगते हैं, उन्हें कहाँ पता लगता है कि उनके आश्रम से बाहर क्या होता है। यह तो व्रजेश्वर पर उनका असीम अनुग्रह है कि चार-छः वर्षों पर एकाध बार स्वयं गोकुल पधारकर दर्शन दे जाते हैं; अन्यथा वन्य फल-पुष्पों पर परम सन्तुष्ट रहनेवाले, सदा अपनी उपासना में निमग्न उन तपोमूर्ति को क्या आवश्यकता किसी ग्राम में जाने की। गोकुल छोड़कर वे और कहीं जाते भी कहाँ हैं। व्रजराज पर उनका स्नेह है, अतः कभी-कभी यहाँ चले आते हैं। व्रजेश उनका अत्यन्त सम्मान करते हैं। उनके आश्रम का सर्वदा ध्यान रखते हैं। कोई वहाँ जाकर उनके एकान्त में बाधा न दे और किसी प्रकार की असुविधा, उत्पात न हो—इसका पूरा प्रबन्ध रहता है व्रजराज की ओर से।

'यह वही गोकुल है!' सहजरीति से स्नेहवश कण्व व्रजपति को आशीर्वाद देने आश्रम से चल पड़े थे आज और गोकुल की सीमा में प्रवेश करते ही वे आश्चर्यमग्न हो गये। इतना ऐश्वर्य, ऐसी अभूतपूर्व सुषमा, इतनी दिव्यता! पत्ता-पत्ता, तृण-तृण अलौकिक विभा से झूम रहा है यहाँ। ब्राह्मण का सुनिर्मल चित्त बाह्य सुषमा से मुग्ध होने के स्थान पर उससे उद्दीपन प्राप्त करके अपने आराध्य श्रीनारायण के स्मरण में और एकाग्र हो गया! वही परम ऐश्वर्य तो अणु-अणु में प्रतिफलित है।

'गोकुल के गृहों में बालक आ गये हैं!' ये त्रिभुवनसुन्दर बालक—विप्र आज जहाँ दृष्टि डालते हैं, उन्हें बिना प्रयास के ही सर्वत्र अपने आराध्य दीखते हैं। भाव-विभोर वे पहुँचे हैं नन्दद्वार पर और व्रजराज के पुत्र—'अच्छा, उनके परम स्नेहभाजन व्रजराज को इन पाँच वर्षों के मध्य में कुमार प्राप्त हुआ!' समाचार ने ही आनन्दस्नात कर दिया था और जब इस नील-सुन्दर ने मैया का आदेश पाकर दाऊ के साथ उनके चरणों पर मस्तक रक्खा—ब्राह्मण के नेत्र वर्षा कर रहे हैं। पलकें स्थिर हो गयी हैं और शरीर काँपने लगा है।

बालकों ने प्रणाम किया और सब एक ओर दौड़ गये। उन्हें अपने खेल-कूद से अवकाश कहाँ। विप्र के नेत्र देर तक उधर ही लगे रहे, देखता रहा वह उधर और जब उसने अपने को सम्हाला—व्रजराज कब से आसन स्वीकार करने का अनुरोध नेत्रों में लिये, हाथ जोड़े, मस्तक झुकाये सम्मुख खड़े हैं और श्रीनन्दरानी रत्नथाल में सुगन्धित उष्णोदक भरकर पादप्रक्षालन की प्रतीक्षा कर रही हैं। पूरे नन्दभवन को ब्राह्मण के चरणोदक से सिञ्चित करके पवित्र कर देना है उन्हें।

कण्व परम विरक्त ब्राह्मण हैं। वे किसी भी प्रकार भवन में चलना स्वीकार नहीं करेंगे, यह पहले से ज्ञात है। गोष्ठ में ही उनके सत्कार की व्यवस्था हो गयी है। वे अपने हाथ से ही भोजन बनाकर अपने आराध्य को भोग लगाते हैं। व्रजेश्वरी उनकी सेवा का सौभाग्य कहीं छोड़ सकती हैं। कहीं आराध्य, ब्राह्मण और गौओं की सेवा एवं पूजा का भार भी सेवकों पर छोड़ा जाता है। उन श्रीनन्दरानी ने स्वयं स्वर्ण-कलशी भरी यमुनातट जाकर और स्वयं गोष्ठ का एक भाग स्वच्छ करके उसे गोमय से लीप दिया। धान्यचूर्ण, कुङ्कुम, हरिद्रा से मण्डल बना दिये वहाँ और भोजन बनाने की सम्पूर्ण सामग्री प्रस्तुत कर दी। ब्राह्मणदेव जबतक तनिक विश्राम करें, समस्त प्रस्तुति हो चुकी और वे तो सदा से जानते हैं कि व्रजराज उन्हें बिना भोजन कराये आने नहीं देंगे।

ब्राह्मण भोजन बना रहे हैं। वहाँ किसी को जाना नहीं चाहिये। किसी की दृष्टि नहीं पड़नी चाहिये उनके भोजन पर। बाबा ने, मैया ने पूछ कर, आग्रह करके समस्त वस्तुएं पर्याप्त मात्रा में रख दी हैं और अब गोष्ठ में जब तक वे पूज्य अतिथि भोजन न कर लें, किसी को प्रवेश

नहीं करना चाहिये; किंतु उसी ओर उनके श्रवण उन्मुख हैं। बाहर वे प्रतीक्षा ही कर रहे हैं—कहीं कोई आवश्यकता हो, कोई बात कही जाय और अतिथि के भोजन कर लेने पर ब्राह्मण का परमपावन प्रसाद भी तो लेना है। भोजन तो अवश्य प्रस्तुत हो गया। विप्रदेव ने शङ्खध्वनि की है, अवश्य वे अपने आराध्य को भोग लगा रहे हैं।

नारायण! नारायण! 'व्रजराज, तनिक देखो तो! क्यों बुला रहे हैं ये विप्रदेव? इतनी शीघ्रता से कैसे भोजन कर लिया होगा उन्होंने?' बाबा और मैया ने साथ ही प्रवेश किया गोष्ठ में।

'अरे, यह क्या हुआ? तू यहाँ कैसे आ गया!' दोनों चौंक पड़े। यह श्रीकृष्णचन्द्र ब्राह्मण के सम्मुख भोजन के पात्र की दूसरी ओर जमकर बैठा है। यह तो ऐसा पालथी लगाकर बैठा है, जैसे इसी के लिये यह थाल रक्खा गया हो। कितनी शीघ्रता से भोजन करने में जुटा है। अधरों से चिबुक तक अन्न लगा लिया है, उदर पर गिरा लिया है और कुछ भूमि पर भी बिखेर दिया है। यह तो इस प्रकार मैया की ओर मुख करके देख रहा है, जैसे कहता हो—'मैं भोजन कर रहा हूँ! तू चुप-चाप खड़ी रह, मुझे भरपेट खा लेने दे! बड़ा स्वादिष्ट भोजन है!'

'बालक है यह, क्षमा करें!' मैया ने पहिले ब्राह्मण के सम्मुख मस्तक रक्खा भूमि पर। ब्राह्मण कहाँ रुष्ट हैं। एक ओर सम्पुट खुला रक्खा है, वस्त्र के ऊपर भगवान् शालग्राम विराज रहे हैं और ब्राह्मण आसन पर ही बैठे हैं अब तक। उन्होंने शङ्खध्वनि करके भगवान् को भोग लगाया तुलसीदल डालकर और नेत्र बंद किये ध्यान करने के लिये। नेत्र खोल कर देखते हैं तो यह नन्द-नन्दन सम्मुख बैठा भोग लगा रहा है। बड़ी सुन्दर छटा है! भला यहाँ क्या रोष आ सकता है! करुणको तो अपराध करने पर भी कभी किसी पर रोष नहीं आया। यदि नारायण का भोग लग गया होता—बड़ा आनन्द मिलता उन्हें यह झाँकी देखकर। 'आराध्य को भोग नहीं लग सका!' एक सूक्ष्म रेखा सी अवश्य है मन में।

'मैया मारेगी तो नहीं?' कनूँ तो वह भागा! वह उछलता-कूदता भाग गया गोष्ठ से बाहर। अब भला, उसे कहीं पकड़ा जा सकता है। जूठे मुख, शरीर में अन्न लगाये हँसता हुआ भाग गया है वह और उसे इस प्रकार भागते देख कर तो विप्र को भी हँसी आ गयी है। उनके अधरों पर भी स्मित खेल गया है।

'मैं तत्काल स्थान स्वच्छ करके सब सामग्री प्रस्तुत कर देती हूँ!' मैया के नेत्र भर आये हैं। विप्रको पुनः भोजन बनाने का श्रम करना होगा—पर दूसरा उपाय भी क्या। ब्राह्मण क्या भूखा रहेगा! ब्राह्मण कैसे अस्वीकार करदे इस अनुरोध को। उसक अस्वीकृतिका स्पष्ट अर्थ होगा कि वह असन्तुष्ट हो गया है। कितना दुःख होगा व्रजेश को। अन्ततः नन्दनन्दन बालक ही तो है। भोजन बनाया ही जाय, यह आवश्यक अपने लिये भले न हो, आवश्यक हो गया है। इसके बिना व्रजरानी का हृदय बहुत व्यथा पायेगा।

× × × ×

'नारायण! जगदाधार! प्रभो!' ब्राह्मण ने भोजन बनाया पुनः। उसे पूरे व्यञ्जन बनाने पड़े हैं श्रीव्रजरानी के अनुरोधवश और अब वह अपने आराध्य का सम्पुट रखकर तुलसीदल पात्र में डालकर भोग लगाने के लिये नेत्र बंद करके मन-ही मन श्रीनारायण से प्रार्थना कर रहा है। बाहर व्रजराज सपत्नीक सावधान हैं।

'नारायण! विश्वम्भर!' ब्राह्मण ने ताली बजायी और नेत्र खोले आचमन देने के लिये। चौंक गया वह 'अरे, तू फिर आ गया?'

'कौन? कौन आ गया?' आकुलता से पूछा मैया ने और अब क्या उत्तर की आवश्यकता है? यह क्या नीलमणि सम्मुख भागा जा रहा है। यह क्या मुख में, हाथ में, वक्षपर अन्न गिराये-लगाये किलकता जा रहा है! कहाँ से आया यह?' किस ओर से आया?

'तू फिर आया और···!' मैया कदाचित् रुष्ट हो गयी है। वह पकड़ने दौड़ना चाहती है, कन्हाई भयभीत भागा जा रहा है।

'यह बालक है ! व्रजेश्वरी, इसके लिये चपलता स्वाभाविक है। आप रुष्ट न हों इस पर।' विप्र कण्व क्या भोजन के आसन से इसके पीछे ही द्वार तक दौड़ आये हैं ! 'कोई इसे पकड़ न ले ! व्रजराज डाँटें नहीं !' कौन कह सकता है कि यही आशङ्का उन्हें खींच नहीं लायी है। इस बार कन्हैया उनके नेत्र खोलते ही हँसकर भाग खड़ा हुआ और वे उसके साथ कैसे दौड़ आये, यह वे भी नहीं जानते।

'बहुत चञ्चल है ! बड़ा अपराध किया है इसने !' मैया ने ब्राह्मण के सम्मुख भूमिपर मस्तक रख दिया है। उसके नेत्र झर रहे हैं। कण्ठ भर गया है। बाबा हाथ जोड़े मस्तक झुकाये अपराधी की भाँति खड़े हैं।

'बच्चे का कोई अपराध नहीं ! आप खेद न करें !' विप्रदेव की वाणी निर्मल है। रोष-हीन है। 'भगवान् नारायण की इच्छा नहीं है कि अरण्यवासी ब्राह्मण इन भोगों का सेवन करूँ। उन्होंने कदाचित् यही चाहा है। मेरे लिये तो थोड़ा-सा दूध ही पर्याप्त है और इससे आपके आतिथ्य-धर्मका निर्वाह भी हो जायगा !'

मैया कैसे कहे ब्राह्मण को पुनः भोजन बनाने के लिये ! इतना श्रम, इतना विलम्ब—कृष्ण-चन्द्र को पता नहीं क्या हो गया आज ! गृह पर ब्राह्मण बिना भोजन के रहेगा ! भोजन बनाने का श्रम करके भी वह अन्न न पा सकेगा ! दूध, दधि, फल—कैसे सन्तोष हो इससे। मैया के नेत्र झर रहे हैं। वह शब्द नहीं पाती अनुरोध करने के लिये।

'व्रजेश्वरी, व्रजराज, इतना कष्ट क्यों ? इतने दुखी क्यों हो रहे हैं आप लोग ? मुझे तनिक भी खेद नहीं है।' ब्राह्मण दया की मूर्ति होते हैं। सच्चा ब्राह्मण किसी को शोकातुर देखे और द्रवित न हो ! कण्व का हृदय भर आया है यह भाव देखकर व्रजपति का। 'मैं क्या करूँ, जिससे आप प्रसन्न हों ?' वे सचमुच हृदय से पूछ रहे हैं।

'यदि प्रभु पुनः प्रसाद बनाना स्वीकार कर लें···।' व्रजेश्वरी ने तनिक मुख उठाया।

'यद्यपि आवश्यकता नहीं है, पर आपकी प्रसन्नता के लिये बनाऊँगा मैं !' कण्व ने मानो मैया को कोई सुदुर्लभ वरदान दिया है। उसने तो नेत्र पोंछ लिये और इस शीघ्रता से स्थान की स्वच्छता में लग गयी है, जैसे स्फूर्ति साकार हो गयी है उसके रूप में।

× × × ×

'श्याम कहीं फिर न आ जाय ! आशङ्का तो है ही। भगवान् का भोग लगाते समय ब्राह्मण की शङ्खध्वनि होगी और वह यदि पुनः आ गया किसी ओर से ? उसे तो यह क्रीड़ा लगती है।···' इस बार गोष्ठ के अधिकांश द्वार बंद कर दिये गये हैं। एक ओर बाबा स्वयं खड़े हैं और दूसरी ओर मैया की दृष्टि लगी है। माता रोहिणी इस प्रयत्न में हैं भवन में कि सभी बालक भवन-प्राङ्गण में ही उनके सम्मुख खेलते रहें। उन्होंने कृष्णचन्द्र को समझाया है कि ब्राह्मण भोग लगाने लगें तो वहाँ नहीं जाना चाहिये। कनूँ बड़ा नटखट है। वह हँसता है माता की बात सुनकर। माता को उसपर दृष्टि रखनी है।

वह गूँजा शङ्खनाद ! ब्राह्मण देव भोजन बना चुके, वे अपने आराध्य को भोग लगा रहे हैं। माता रोहिणी ने शङ्खकी मङ्गल-ध्वनि सुनकर श्रद्धा से मस्तक झुकाया भगवान् नारायण के लिये और सिर उठाते ही चौंक गयीं—'श्याम ! कृष्ण ! अरे कहाँ गया ?' वह तो भाग गया द्वार से बाहर और माता का अब यह दौड़ना क्या अर्थ रखता है। वे उस चञ्चल को कहाँ पकड़ सकती हैं।

'श्याम ! कृष्ण !' माता रोहिणी पुकारती आ रही हैं। मैया और बाबा सावधान हैं उसे पकड़ लेने के लिये। यह आ रहा है दौड़ता नटखट ! वे अलकें भालपर हिल रही हैं, नूपुर बज रहे हैं किङ्किणी के साथ और यह आ गया बाबा के सम्मुख। बाबा तो अपने दौड़ते आते पुत्र की शोभा एकटक देखने में भूल ही गये कि वे इसे पकड़ने को खड़े हैं और जब सम्मुख आकर कृष्णचन्द्र ऊपर मुख उठाकर तनिक मुस्करा देता है—किसे अपने शरीर का स्मरण रह सकता है।

बाबा देखते रहे, देखते रहे और तब भी घूमकर देखते ही रहे जब कन्हाई उनके समीप से

गोष्ठमें भीतर भागता चला गया। वे उसे देखते रहे और कुछ क्षण देखते रहे उसी दिशा में; तब कहीं उन्होंने सुना पुकारती हुई माता रोहिणी की वाणीको और देखा मैयाको। शीघ्रता से भीतर दौड़े वे।

ब्राह्मण ने नेत्र खोल दिये हैं। यह चपल नीलसुन्दर उसके सम्मुख फिर आ बैठा है और भोग लगा रहा है। इसबार भागने का कोई भाव नहीं दिखाया इसने। केवल तनिक-सा मुख उठाकर ब्राह्मण की ओर देखकर मुस्करा पड़ा, जैसे कहता हो—'बड़े अच्छे हो तुम! बड़ा स्वादिष्ट भोजन बनाना आता है तुम्हें! खूब सुन्दर बना है व्यञ्जन!' पता नहीं क्या-क्या है उसके नेत्रों में।

मैया पुकारती आ रही है। रुष्ट है वह। मोहन ने बैठे-बैठे ही तनिक मुख घुमाया पीछे को। दोनों हाथ उसने थाल में डाल रक्खे हैं। दोनों कर अन्न में सने हैं। वह गर्दन घुमा कर मैया से बोला—'तू मुझे ही डाँटती है, इसे मना क्यों नहीं करती? भोजन बनाकर, शङ्ख बजाकर नेत्र बंद करके यह बार-बार मुझसे भोजन करने को कहता है! मुझे बुलाता है! मैं क्या बिना बुलाये आता हूँ? यह बुलाता है तो क्या न आऊँ?'

'यह तुझे बुलाता है?' मैया ने डाँटना चाहा, पर वह ज्यों-की-त्यों स्तम्भित रह गयी। 'इन विप्रदेव को क्या हो गया? ये तो सहसा उठकर नाचने लगे! नेत्रों से अजस्र अश्रुधारा, रोम-रोम मस्तक उठाये सीधे और डगमग पदों से यह उद्दाम नृत्य—क्या हो गया इनको?'

'यह मुझे बुलाता है! नेत्र बंद करके यह बार-बार मुझ से भोजन करने को कहता है!' श्यामसुन्दर कह क्या रहा है? ब्राह्मण कण्व चौंके। एक बार उन्होंने अपने सम्मुख थाल में भोग लगाते गोपाल को देखा—जैसे नेत्रों के सम्मुख पड़ा कोई आवरण खिसक गया हो। शत-सहस्र-चन्द्रोज्ज्वल यह आलोक-राशि, यह रूप, माधुर्य, ऐश्वर्य की घनीभूत मूर्ति—नारायण, आदि-पुरुष, आराध्य—···' पता नहीं क्या-क्या देखा महाभाग ब्राह्मण ने और तब उन्हें क्या अपनी सुध-बुध रह गयी?

'दयामय, करुणासिन्धु, इस अबोध को क्षमा करें! मुझे कहाँ पता था कि इस अधम की प्रार्थना श्रीचरणों में स्वीकृत होती है! मैंने तो बाधा ही दी आपके भोग लगाने में! मेरा अहङ्कार—मेरा पवित्रता और ब्रह्मत्व का यह अहङ्कार, पर आपकी करुणा ने मुझे धन्य कर दिया! मैं कृतार्थ हुआ!' पता नहीं कण्व गद्गद स्वर में क्या-क्या कह रहे हैं।

'नारायण ने बालक का अपराध क्षमा कर दिया और अवश्य अपने परम भक्त इन विप्रदेव पर प्रसन्न होकर अपना कोई ऐश्वर्य इनके सम्मुख प्रकट किया है! ये इसीसे भाव-विभोर हो रहे हैं। धन्य हैं ये ब्राह्मण!' बाबा, मैया, माता रोहिणी भी कुछ ऐसा ही सोचते हैं। सबने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया है प्रणाम करने के लिये और कन्हाई तो ब्राह्मण के सम्मुख से उठ आया है। अपने जूठे हाथ से ही वह मैया का वस्त्र पकड़ कर उसके समीप सटकर खड़ा है और बड़े आश्चर्य से देख रहा है कि यह वृद्ध ब्राह्मण क्यों इतना रोता और नाचता है।

'अरे!' बाबा और मैया चौंकें, इससे पूर्व तो कण्व थाल के समीप बैठ गये। उन्होंने वह थाल का प्रसाद खाना, सिरपर रखना और शरीर में मलना प्रारम्भ किया। 'कहीं ये सम्मान्य अतिथि उन्मत्त तो नहीं हो गये?' लेकिन इस समय ब्राह्मण के शरीर से जो कान्ति छिटक रही है, उनके जो दिव्यभाव हैं—इस समय उनसे बोला नहीं जा सकता। वे कुछ सुन-समझ सकें, इस स्थिति में नहीं और वे तो उठकर पुनः नृत्य करने लगे। बार-बार उठते हैं, दण्डवत् भूमि में प्रणिपात करते हैं और नृत्य करते-करते ही वे तो चल भी पड़े। वे जा रहे हैं—चले जा रहे हैं, कदाचित् उन्हें ही पता नहीं कि वे जा रहे हैं। उनके हृदय में, मन में, नेत्रों में जो मूर्ति आज आ बसी है—वह एक बार आने पर फिर जाना कहाँ जानती है।

मैया ने भूमि पर मस्तक रक्खा विप्र को प्रणाम करते हुए। अभी उसे इस कन्हाई का मुख-हाथ धोना है। अन्न सूख रहा है! सूखने पर इसे कष्ट होगा और इसने तो वक्ष से उदर तक उसे गिरा रक्खा है।

—❀⊂❀⊂❀—

व्रजजनानन्द

"बहुलचिकुरभारे बद्धपिच्छावतंसं चपलचपलनेत्रं चारुबिम्बाधरोष्ठम् ।
मधुरमृदुलहासं मन्दरोदारलीलं मृगयति नयनं मे मुग्धवेशं मुरारेः ॥"

—श्रीलीलाशुक

श्यामसुन्दर, नन्दनन्दन, कन्हाई, कृष्णचन्द्र, नोलमणि, कनूँ—कौन है जो इस चपल व्रजनवयुवराज को पुकारकर अपने नेत्रों को, वाणी को और इसके सुधास्निग्ध वचनों से श्रवणों को कृतार्थ नहीं करना चाहता। गोपियाँ, गोप, द्विजवृन्द—सभी तो इसे पुकारते हैं। कन्हाई कितना सरल, कितना भोला है! यह जो पुकारता है, उसी के पास दौड़ जाता है। जो कुछ करने को कहता है, उसी का कार्य करने लग जाता है।

'कृष्ण, तनिक वह आसन तो दे जा!' और सुकुमार श्यामसुन्दर अपने कोमल करों से रत्नपीठ उठाकर देने जा रहा है अपने उपनन्द बाबा को। पीठ बहुत भारी है, बहुत भारी! हाथों से उठाकर नहीं ले जा सकता तो लो, मस्तक पर रख लिया इसने। कुटिल स्निग्ध चिकुर-जाल पर दोनों हाथों से पकड़कर रत्नपीठ रक्खे यह देने जा रहा है। यह उपनन्दजी के आराध्य का पूजन-पीठ और श्याम इसे देने जा रहा है! उपनन्दजी ने उठकर लेना चाहा—कितना श्रम पड़ा है कन्हाई को! इसके कमलमुखपर अरुणिमा आ गयी और स्वेदकण झलमला उठे हैं भालपर। यह तो पीठ देता नहीं है। हठ है इसकी—'मैं रक्खूँगा वहाँ!'

'कनूँ, महर्षि की पादुकाएँ तो ले आ!' बाबा अभी से चाहते हैं कि उनका यह लाल महर्षि शाण्डिल्य की सब प्रकार की सेवा का सौभाग्य प्राप्त करने लगे और श्याम तो स्वयं उत्सुक रहता है कि उसे किसी भी ब्राह्मण की सेवा प्राप्त हो। वह अपने नन्हे हाथों महर्षि के तथा दूसरे विप्रों का पाद-प्रक्षालन करता है और कितना प्रमुदित होता है इस कार्य में! किसी सम्मान्य अतिथि के सत्कार की बात सुनते ही खेल छोड़कर दौड़ आता है। सदा से इसका आग्रह है कि चरण तो स्वयं धोयेगा। बाबा जलधारा गिराकर सहायता करते हैं और इस कार्य में कन्हाई कहाँ किसी का निषेध सुनता है। महर्षि शाण्डिल्य, दूसरे सभी मुनिगण एवं विप्रवृन्द संकोच करते हैं, सब चाहते हैं कि नन्दनन्दन केवल उन्हें चन्दन लगाकर और माल्य पहिनाकर ही सन्तुष्ट हो जाय; किंतु यह श्रीकृष्ण विना चरण धोये कहाँ मानता है। आज बाबा ने महर्षि की पादुका लाने को कहा और वह दौड़ा। अब महर्षि मना करते हैं—कौन सुनने बैठा है। कनूँ तो वह गया—वह पहुँचा पादुका उठाने।

'नारायण! श्रीहरि! महर्षि के नेत्र भर आये हैं। अश्रुधारा चलने लगी है। रोम-रोम पुलकित हो गया है। हृदय कहता है—'पादुका छोड़कर द्वार पर बैठे तो क्या हुआ अन्तःपुर में आते समय तो उसे लेते आना था। यह तो न होता!' श्यामसुन्दर एक-एक कर से महर्षि की पादुका पकड़े, उन्हें अपने मस्तक पर रखकर लिये आ रहा है—कितना आनन्दमग्न, कितना प्रफुल्लित है यह! "अरे, ये महर्षि क्या कर रहे हैं? ये किसे प्रणिपात कर रहे हैं? ये तो 'नमोब्रह्मण्यदेवाय!' कहकर भावोन्मत्त हो गये हैं। महर्षि श्रीनारायण के परमभक्त हैं। चाहे जब इनका इस प्रकार भावमग्न होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ये तो सचराचर में अपने आराध्य का दर्शन करने वाले ठहरे।" किसी को किसी प्रकार का विचार करने का कोई कारण ही नहीं है।

× × × ×

'लाल, तू बहुत सुन्दर नाचता है। तनिक नाच तो सही। अच्छा, तू नाच दिखा दे त मक्खन दूँगी तुझे!' गोपियाँ कभी नवनीत के नन्हे खण्ड, कभी दधि और कभी छाछ का ही लालच देकर इस श्यामसुन्दर को नचा लेती हैं। कन्हाई कितना सीधा है, कृष्णा का नवनीत, कपिला का दही, अरुणा की छाछ—और वह समझ लेता है कि अवश्य इन विशेष गौओं के नवनीतादि में कोई विशेषता होगी। इसे चाहे जो भुला लेता है और यह भूल भी जाता है मजे में। कदाचित् इसे भी इस प्रकार नाचने में आनन्द आता है। गोपियाँ ताली या चुटकी ही बजाती हैं—'ता थेई, ता थेई थेई, तत्ता थेई थेई!' और नन्हे कोमल कर इधर-उधर फेंकता, हिलावा जब मोहन नृत्य करने लगता है, जब उसके भालपर अलकें चञ्चल होने लगती हैं, नेत्र चपल होते हैं, किङ्किणी और कङ्कण के साथ नूपुरों की रुनझुन गूँजने लगती है—कौन लालायित नहीं होगा इस भुवन-मोहन छटा की एक झलक देख लेने के लिये, किसके नेत्र इसे देखते हुए तृप्त हो सकते हैं।

'ला, नवनीत दे!' नृत्य समाप्त करके लाल की कोमल हथेली फैल जाती है, श्याम झगड़ने लगता है। ये गोपियाँ बड़ी चतुर हैं, ये इतनी देर तो नचा चुकीं और दे रही हैं दो अँगुलियों से उठाकर तनिक-सा नवनीत। कोई हथेली—मोहन की इस छोटी हथेली को दही से भर दे तो वह सन्तुष्ट हो जायगा और कोई एक अञ्जलि छाछ से भर दे तो पूछना ही क्या; लेकिन गोपियाँ तो दही की भी बूँदें रखना चाहती हैं और छाछ भी इतनी गिराती हैं हाथ पर कि उससे आचमन कर लिया जाय। अब कन्हाई इनसे झगड़े नहीं तो क्या हो।

'तू तनिक सा तो नाचा! और नाच तो और मिले! गोपियों को भी इस मोहन को चिढ़ाने में आनन्द आता है! यह जब उलझता है उनसे, रुष्ट होकर उनके वस्त्र या हाथ खींचता है—कितना मधुर, कितना मोहक है इसका यह खीझना भी और इसे मना लेना तो और भी सरल है। सच्ची बात तो यह है कि इसे रुष्ट होना आता ही नहीं। दधि की दो बूँदें, मक्खन का तनिक बड़ा खण्ड, छाछ का केवल एक चुल्लू अधिक देकर भी नहीं, फिर नृत्य करे तो देने को कह कर ही इसे मना लिया जा सकता है। अधिक नवनीत—अधिक दधि मिलने पर यह चञ्चल उसे खाता, मुख भर कर भाग जायगा। यह नेत्रों के सम्मुख रहे, कुछ क्षण तो रहे! अन्यथा नवनीत, दही, छाछ का मूल्य क्या है। सबका हृदय चाहता है, उत्कण्ठित रहता है कि नन्दनन्दन उसके यहाँ आये और उसका नवनीत सफल हो। लेकिन कन्हाई के खीझने की छटा, इसके उलझने का आनन्द क्या छोड़ा जा सकता है? इसी बहाने तो इसे कुछ क्षणों तक अपने सम्मुख रक्खा जा सकता है। नहीं तो यह चपल—यह तो इधर से आया कूदता और उधर भाग गया। इसे एक स्थान पर कहाँ रहना है। ठीक भी तो है, सबके नेत्र सफल भी तो होने चाहिये।

× × × ×

श्याम कभी बाबा की पूजा के लिये तुलसी-दल ले जाता है और कभी मैया की वेणी में लगाने को पुष्प। इससे क्या मतलब कि बाबा की पूजा का या मैया के वेणी-ग्रन्थन का समय है या नहीं। कन्हाई के जब मनमें आये, जब इसे स्मरण हो, तभी यह तुलसी या पुष्प लेने लगेगा और दौड़कर पहुँचा आयेगा। यह कोई वस्तु दे रहा हो तो उसे लेने में क्या समय देखा जा सकता है? अपने मन से पता नहीं किसके-किसके क्या-क्या काम करने यह पहुँच जाता है।

'ताऊ, तुम्हारा वस्त्र ला दूँ? तुम स्नान करोगे न?' उपनन्दजी ने कभी स्नान के लिये इससे वस्त्र मँगा लिया था और अब यह चाहे जब उन्हें देखते ही वस्त्र लाने दौड़ जायगा।

'चाचा, तुम लकुट तो लाये नहीं! मैं ला दूँ तुम्हारा लकुट?' नन्दनजी को लकुट की आवश्यकता हो या न हो, श्याम तो लकुट लाने जायगा ही और भला, इससे कहीं वह लकुट उठने का है। अब तो इसके पीछे जाकर प्रोत्साहित करना है। कितना स्नेहमय है यह अभी से!

कन्हाई को पता नहीं किस-किसके कार्य करने रहते हैं। किसी को जल देना है, किसी को दोहनी और किसी को रज्जु! किसी का संदेश कह आना है, किसी को बुलाया है किसी दूसरे ने

और किसी को तो हाथ पकड़कर उठा ही ले जाना है इसे; क्योंकि इसे तो ले आने का आदेश मिला है। कृष्णचन्द्र सबके कार्य कर देता है। गोपों के कार्य तो यह प्रायः कर देता है और किसी विप्र, वृद्ध या वृद्धा का आदेश तो टालना सीखा ही नहीं इसने। बिना बुलाये, बिना कहे यह विप्रों और वृद्धों के कार्य करने पहुँच जाता है।

गोपियाँ चिढ़ाती हैं, बड़ी चतुर हैं सब—अपने काम करा लेंगी और मक्खन देना होगा तो तनिक-सा उठायेंगी। कन्हैया भी उन्हें क्या कम चिढ़ाता है। काम तो वह उनके भी कर देता है; पर अँगूठा दिखाकर, सिर हिलाकर, आँखें नचाकर भली प्रकार मनुहार करा लेने के पीछे ही करता है। गोपियाँ भी हँसती हैं, खिलखिलाती हैं, आँखें कड़ी करके धमकाती हैं और अनुनय करती हैं।

'मोहन, मेरे हाथ दही के हो रहे हैं! तू मेरे सिरसे खिसका वस्त्र तो ठीक कर दे!' कन्हाई कूदेगा, ताली बजाकर हँसेगा और अँगूठा दिखायेगा। यह नटखट क्या झटपट वस्त्र ठीक करने लगा है। वस्त्र ठीक करने लगेगा तो इतना आगे सरका देगा कि पूरा मुख ढँक जाय और फिर ताली बजाकर किलकेगा। पीछे वस्त्र हटाने को कहने पर पीठ पर ही गिरा देगा। 'तू अपने लड़के को बुला ले!' यहीं तक कहे तो ठीक; पर कभी-कभी तो पता नहीं किस-किस को बुलाने को कहेगा और इसका क्या ठिकाना कि जाकर वृद्धा सास या किसी पुरुष को ही कहने लगे कि वह वस्त्र ठीक करने को बुलाती है; किन्तु गोपियों को इसी से ये कार्य लेने हैं। इसी की मनुहार करनी है। इसी से झगड़ना है।

'कन्हाई, मैं गोबर उठा रही हूँ! तू मेरी यह उलझी माला तो ठीक कर दे!' यह मानी बात है कि कन्हैया माला को और उलझायेगा ही; पर किसी को इसी से माला सुलझवानी हो तो? किसी का बछड़ा भाग गया है, उसे भगा लाना है; किसी के बछड़े को खोल देना है दूध दुहने के लिये। किसी के पुष्पाभरण को पुष्प तोड़ देने हैं और किसी के आभरण ठीक स्थान पर व्यवस्थित कर देने हैं। गोपियों के छोटे-बड़े सैकड़ों कार्य हैं और वे कार्य प्रतीक्षा करते रहते हैं कि नन्दनन्दन आये। श्यामसुन्दर के ही सुकुमार करों से उन्हें पूरा होना है। मोहन दिखायी पड़ा और फिर क्या कार्यों का अभाव रहता है? पता नहीं कैसे यह कन्हैया सबके आदेशों का पालन करता है, सबसे उलझता रहता है और फिर भी सबको संतुष्ट कर देता है। सबको अपने दैनिक कार्यों में बराबर इस नील-सुन्दर की सहायता चाहिये। यह न आये तो गो दोहनपर बैठे गोप को दोहनी कौन दे? दधि मथती गोपी की वेणी से गिरे पुष्प कौन सजावे और कौन किसी को बुलाने जाय? पता नहीं कितने कार्य हैं, कोई-न-कोई कार्य अटका ही रहता है; किन्तु यह कन्हाई—किसी गोप, किसी गोपी को नहीं लगता कि उसे आवश्यकता हुई और कन्हाई नहीं आ गया। सबको लगता है कि यह दिन भर उसी के आस-पास खेलता रहता है और बराबर आ जाता है उसकी सहायता करने।

× × × ×

'कृष्ण, तू मेरी टोकरी उठवा तो दे!' इसे गोष्ठ से गोबर उठाकर फेंकना है और टोकरी उठवाने के लिये यह सुकुमार कन्हैया ही मिला है।

'क्यों उठवा दूँ तेरी टोकरी? तू अपने-आप उठा और फेंक! मैं नहीं उठवाता!' कनूँ अँगूठे दिखाकर, मटक कर चिढ़ाने लगा है। समीप कोई दूसरा है भी नहीं' देखें यह किससे टोकरी उठवाती है।

'तू जितनी टोकरी उठवायेगा, उतने माखन के लौंदे दूँगी तुझे!' इसे भी कन्हाई से ही टोकरी उठवानी है।

'उतने माखन के लौंदे?' श्याम सोचने लगा है। सौदा तो अच्छा है; लेकिन यह गोपी झूठ बोले तो? पता नहीं कितनी टोकरी उठवायेगी; थोड़े-से नवनीत-खण्ड देकर कह दे कि पूरा हो गया तो? कनूँ को अभी इतना कहाँ गिनना आता है। ये गोपियाँ बहुत चतुर हैं, ये उसे बार-बार ठग लेती हैं। ना, वह ऐसे नहीं ठगा जा सकता। 'तूने कितनी टोकरियाँ उठवायीं, यह कैसे पता लगेगा?'

'मैं गिनती जाऊँगी!' वह हँस पड़ी।

'तू बड़ी सच्ची जो है!'

'अच्छा, इस भित्ति पर गोबर का एक-एक टीका मैं प्रत्येक टोकरी उठवाते समय लगाती जाऊँगी !'

'तू टिकियों को ठीक ही गिनेगी, इसका क्या ठिकाना !' कन्हाई कहाँ तक भित्ति का ध्यान रक्खेगा। कहीं इसने टिकियाँ कम लगायीं, किसी को मिटा दिया !

'अच्छा, मैं तेरे कपोलों पर टिकियाँ लगाती चलती हूँ ! तू जब नवनीत-खण्ड लेने लगेगा तो एक-एक खण्ड के साथ एक-एक टिकी मिटा दी जायगी !' इन नीलारुण कपोलों पर गोबर की टिकियाँ—इस कल्पना से ही गोपिका हँस रही है।

'अच्छी बात !' तनिक सोचकर श्याम ने स्वीकार कर लिया। उसके कपोलों पर टिकी रहे तो यह कोई भी चाल नहीं चल सकेगी। ठीक-ठीक पारिश्रमिक प्राप्त होने में संदेह नहीं होगा।

कज्जल-रञ्जित दीर्घ खञ्जन-नयन, अरुण अधर, भालपर गोरोचन की खौर के मध्य सोये भ्रमरशिशु-सा काला बिन्दु और कुटिल स्निग्ध अलकों से घिरा यह कमलमुख—कन्हाई मुख ऊपर करता है और गोपिका अपनी अनामिका से कपोल पर गोबर का एक बिन्दु लगा देती है। कपोलों पर, भाल पर इन गोमयबिन्दुओं की संख्या बढ़ती जा रही है। श्याम के कपोल पर पहिले बिन्दु लगता है और तब वह अपनी पतली भुजाएँ झुकाता है टोकरी उठाने के लिये। किंशुक-अरुण कर टोकरी का स्पर्श करते हैं। गोपिका को ही तो टोकरी उठानी है, उठाती भी वही है, कृष्णचन्द्र की भुजाएँ उसकी कटि से तनिक ही ऊपर तक तो पहुँच सकती हैं, किन्तु यह टोकरी उठवाने की क्रीड़ा कितनी आनन्द-मय है ! नन्दनन्दन उसके सम्मुख है, वह उसके कपोल पर बार-बार गोमय-बिन्दु लगा रही है। रोमाञ्चित हो गया है उसका शरीर।

गोमय बिन्दुओं से भरे कपोल और भाल—मणिस्तम्भ में अपना ही मुख देखकर कनू खूब हँसा ! यह गोपी उसे झटपट मक्खन नहीं दे देती। कहीं कोई सखा आ गया ढूँढ़ते हुए और उसने देख लिया ?—सब बहुत चिढ़ायेंगे ! मैया से पता नहीं क्या-क्या कह देंगे ! श्याम शीघ्रता करना चाहता है और यह—गोपी तो हँसते-हँसते लोटपोट हो रही है। इसने टोकरियाँ तो इतनी उठवा लीं और अब हँस रही है। इन बिन्दुओं को मिटाया भी नहीं जा सकता। इसमें तो अपना ही घाटा है।

'इतनी बड़ी तो टोकरी उठवायी और इतनी नन्ही-सी मक्खन की बूँद देगी ! मैं नहीं लूँगा इतना थोड़ा मक्खन !' एक टोकरी के बदले एक नवनीत-खण्ड—लेकिन इतना छोटा नवनीत-खण्ड थोड़े ही सोचा था श्याम ने। कम-से-कम उसकी हथेली तो भर जाय एक लौंदे से। अब वह झगड़ने लगा है। झगड़े नहीं तो क्या करे। यह कहती है कि इतने बड़े-बड़े लौंदे वह पचा नहीं सकेगा। वह फेंक देगा, बंदरों को दे देगा। कुछ भी करेगा; पर यह उसका स्वत्व क्यों नहीं देती ?

यह गोपी—सभी गोपियाँ ऐसी ही हैं। सभी कन्हाई से कुछ-न-कुछ काम करा लेती हैं और जब नवनीत या दधि देने का समय आता है, तब थोड़ा-सा देकर ठगना चाहती हैं। कनू झगड़ेगा, अपना भाग लिये बिना वह मान नहीं सकता। गोपियों को भी उसे खिझाने में आनन्द आता है। 'अच्छा, कैसे नहीं देगी तू !' अब वह इसकी मटकी फोड़ देगा; देखे तो सही कि यह कैसे नहीं मानती।

—❀—❀—❀—

माखन-चोर

"बालाय नीलवपुषे नवकिङ्किणीकजालाभिरामजघनाय दिगम्बराय ।
शार्दूलदिव्यनखभूषणभूषिताय नन्दात्मजाय नवनीतमुषे नमस्ते ॥"

—श्रीलीलाशुक

'अरे, इसके घर में तो कोई दीखता ही नहीं है! यह गोपिका गयी कहाँ ? गोप तो गोचारण को चले गये होंगे और जान पड़ता है कि यह स्वयं जल लेने श्रीयमुनाजी गयी होगी।' कन्हैया आया है इसके यहाँ नवनीत खाने। है तो बहुत चतुर यह, बहुत नचाती है और तब तनिक-सा नवनीत देती है; किन्तु श्याम को भी इसके साथ झगड़ने का स्वभाव हो गया है। यह ब्राह्ममुहूर्त से भी पूर्व उठ जाती है और एक ही धुन है इसे—'कन्हाई आता होगा, उसके लिये नवनीत चाहिये!' बस, दही मथने बैठ जायगी। नन्दनन्दन दूसरे किसी के सम्मुख नृत्य करने, नवनीत लेने, झगड़ने में संकोच करता है। कोई और दिखायी दे तो वह द्वारपर से झाँककर भाग जायगा। इसे लगता है कि गोप बड़े आलसी हैं, सब बहुत देर में गायें खोलते हैं। इतनी देर में गोदोहन हो और गायें बिचारी बँधी रहें, यह तो ठीक नहीं। क्या करे, जितनी शीघ्रता उसके कहने और प्रयत्न से हो सकती है, उतना करने में तो कुछ उठा नहीं रखती। उसके घरके लोग कहाँ उसकी सुनते हैं। 'कहीं श्याम आये और लौट जाय!' हृदय धड़कता ही रहता है। नेत्र द्वार की देहली पर ही लगे रहते हैं। बार-बार द्वार पर आकर झाँक जाती है। गोपों ने गोदोहन प्रारम्भ किया और उसकी दहेंड़ी में रई घूमी। गोपों के जाते ही वह ऊपर तैरते नवनीत को देखती है और देखती है द्वार की ओर। 'कल मैंने बहुत खिझाया मोहन को, कहीं वह आज न आये!' लेकिन नहीं, मन कहता है, वह आयेगा! आयेगा ही! और वह दहेंड़ी सम्मुख रक्खे प्रतीक्षा करती रहती है। कन्हाई के आने पर ही पात्र से माखन निकालेगी। पहिले निकालने से उतना कोमल नहीं रहेगा। श्याम तो आयेगा ही। जहाँ वह दिखायी पड़ा, इसने मुख घुमाया। ऐसी बन जायगी जैसे देखा ही न हो, नवनीत निकालने में कहीं देखने का अवकाश ही न हो और जब वह चपल आकर वेणी खींच देगा, तो डाँटेगी उसे। वह नवनीत माँगेगा और यह अस्वीकार का स्वाँग रचेगी।

'आज यह कहाँ गयी ? ऐसा तो कभी होता नहीं था!' क्या करे बेचारी। कितनी देर प्रतीक्षा की उसने! 'आज श्यामसुन्दर नहीं आयेगा। वह रूठ गया कलके मेरे खिझाने से!' कितना दुःख हुआ उसे, दूसरा कोई कैसे जान सकेगा। मोहन को आज विलम्ब हुआ है आने में। प्रतीक्षा के पल भी युग होते हैं। 'श्याम न आये, न खाय तो फिर नवनीत किस काम का!' मक्खन पात्र में ऊपर आ गया था, लौंदा तैर रहा था; किन्तु उसे निकालने का उत्साह किसमें था। जो माखन कन्हाई लेने नहीं आया, उसे फिर कोई कुत्ता ले या बिल्ली—श्याम से परित्यक्त माखन उसके किस काम का है। निराश होकर वह उठी घट लेकर यमुना-तट जाने के लिये। 'कदाचित् मार्ग में कहीं वह यशोदा का लाल दीख जाय!' एक आशा आयी मन में। दधि मथा ज्यों-का-त्यों धरा रहा, नवनीत तैरता रहा, द्वार खुला रहा—वह तो जल लेने चली गयी।

'भवन में तो कोई नहीं दीखता!' कोई हो या न हो, दधि-मन्थन का पात्र सम्मुख तो है ही। कन्हैया ने पात्र में झाँक कर देखा—ओह, नवनीत—उज्ज्वल, कोमल नवनीत ऊपर ही तैर रहा है और वह भी पर्याप्त है। व्रज में तो सभी गृह श्याम के अपने ही हैं। नवनीत दिखायी दे रहा है—इतना क्या भोग लगाने के लिये पर्याप्त नहीं है ? मोहन ने तो पात्र के समीप आसन लगा दिया है।

यह अपना दाहिना हाथ पात्र में डालकर बार-बार माखन उठाता है और तनिक-तनिक सा मुख में रखता जाता है। भली प्रकार स्वाद ले-लेकर नवनीत खा रहा है।

× × × ×

'हैं!' गोपिका आयी, द्वार से भीतर पैर रक्खा और ज्यों-की-त्यों खड़ी रह गयी। कितनी व्यथा, कितनी निराशा लिये आ रही थी। 'पता नहीं आज कैसा अशुभ दिन है!' मन-ही-मन मार्ग-भर पछताती, तड़पती आयी है। जाते और आते भी उसके चरण उठते ही नहीं थे। नेत्र इधर-उधर किसी को ढूँढ़ रहे थे। कैसे मिले वह नेत्रों का शाश्वत सौभाग्य, वह तो उसके घर पहुँच गया है। एक बार दृष्टि गयी और—शरीर गतिहीन हो गया, नेत्र स्थिर हो गये, हृदय—हृदय का उल्लास वाणी का विषय नहीं। वह देखती रही—देखती रही वह शोभा।

मोहन माखन खा रहा है। दधि-मन्थन-पात्र के समीप वह बायाँ हाथ भूमि पर टेक-कर, बायें पैर के आधार पात्र पर उझका है। दाहिना हाथ पात्र में है। अलकें मुख पर घिर आयी हैं। नन्ही कोमल अँगुलियाँ—बहुत थोड़ा नवनीत उठता है उनसे। अधर, कपोल, हाथ, सब पर वह उज्ज्वल नवनीत लगा है।

'अरे, तू क्या करता है? क्यों यहाँ मेरे सूने घर में आया?' गोपिका ने अपने को सम्हाल लिया है!

'एक बछड़ा भाग आया है!' कन्हाई ने मुख तनिक उठाया और इस सहज भाव से कह दिया जैसे वह इस दधिभाण्ड में ही बछड़ा ढूँढ़ रहा है।

'बछड़ा भाग आया है तो तू इस पात्र में क्यों उझका है?' गोपिका कितनी कठिनाई से हास्य रोककर स्वर कठोर रख पा रही है, यह अनुमान किया जा सकता है।

'ठहर, इसमें चींटी पड़ गयी है!' यह कोई बात है कि गोपी इस कनूँ से प्रश्न-पर-प्रश्न किये जा रही है। जब वह पात्र में उझका है तो बछड़ा न सही, चींटी सही; कुछ न कुछ तो होगा ही। यह स्वयं क्यों कुछ नहीं समझ लेती। श्याम का स्वर कहता है तू तंग मत कर! मुझे उत्तर सोचने या देने का अवकाश नहीं है!'

'लेकिन तेरे मुख और कपोल पर नवनीत कैसे लगा है?' यह गोपी भी विचित्र है। यह तो पूछती ही जा रही है।

'कहाँ?' अब इस माखनचोर का ध्यान भङ्ग हुआ। अब लगा कि इस गोपिका से ऐसे पिण्ड नहीं छूटेगा। हाथ पात्र से निकाल लिया इसने और भला, उत्तर श्याम को सोचना पड़ता है—'खाज आ रही थी, तो खुजलाऊँ नहीं क्या?'

हो चुका संयम, अब खुलकर हँस पड़ी यह और मोहन तो वह भागा जा रहा है! भाग गया वह।

× × × ×

'श्याम अपने-आप नवनीत खाते कल कितना सुन्दर लग रहा था!' आज गोपी ने और शीघ्रता कर ली है। मन्थनपात्र बड़ा है, उसमें से माखन निकालने के लिये मोहन को बहुत उझकना पड़ता है। बहुत श्रम करना पड़ता है उसे। आज नवनीत पात्र में से निकालकर समीप ही लौंदा बनाकर पृथक् पात्र में रख दिया उसने और स्वयं छिप गयी भवन में। आज छिपकर वह माखन-चोर की छटा देखेगी।

कन्हाई आ रहा है! द्वार खुला है, दधि-मन्थन-पात्र—वह क्या मणि-स्तम्भ के समीप रक्खा है। इधर-उधर देख रहा है यह चपल। 'नहीं, घर में तो कोई नहीं जान पड़ता। कलकी भाँति गोपिका जल लाने गयी होगी! अच्छा, आज तो माखन वह बाहर निकाल कर रख गयी है।' बड़ा प्रसन्न है, दोनों हथेलियों से ताली बजाकर नाचने लगा है। अब बैठ गया नवनीत-पात्र के

सम्मुख आसन लगाकर। द्वार की ओर मुख कर लिया है इसने, जिसमें कोई आये तो दूर से ही देखकर भागा जा सके।

'अरे, तू कब आया ?' यह किससे बातें कर रहा है ? किसे देखकर इतना उत्फुल्ल हो रहा है ? 'बड़ा अच्छा हुआ, अब हम दोनों आनन्द से माखन खायेंगे। देख तो, इसका माखन कितना उजला, कितना कोमल, कितना मीठा है ! ले, तू मुख तो खोल !' यह मणिस्तम्भ में अपने प्रतिबिम्ब से ही सम्भवतः बात कर रहा है। स्वच्छ दर्पण तो जानने में आ भी जाता है; परंतु यह निर्मल स्फटिक और इसमें श्याम की यह प्रतिफलित छवि—अब कन्हाई ने उसे तोक मान लिया तो क्या आश्चर्य। तोक है भी तो ठीक इसी-जैसा। नन्हा-सा श्याम—यह भ्रम तो अनेक बार तोक की माता और मैया तक को हो जाता है। अपने लाल का प्रतिबिम्ब देखकर मैया कितनी बार हाथ के नवनीत के दो भाग करने लगती है। श्याम अपने इस प्रतिबिम्ब से बातें कर रहा है ! वह समझता है कि उसका छोटा चचेरा भाई उसके सम्मुख है और तोक पास हो तो मोहन उसके मुख में अपने हाथ से दिये बिना कोई भी पदार्थ स्वयं कैसे पहिले खा सकता है।

'मुख खोल !' कन्हाई आग्रह कर रहा है। अनुनय कर रहा है—'मैं तुझे पुकारे बिना यहाँ चला आया, इसलिये रूठ मत ! ले, ले, खा ले ! इतना नहीं लेगा ? अच्छा, तू खा तो सही, मैं सब-का-सब तुझे खिला दूँगा !' पता नहीं क्या बात है, आज कनूँ का यह अनुज उससे रूठ गया है। यह तोक अपने अधर हिलाता है, मस्तक भी हिलाता है; पर इतना स्पष्ट नहीं बोलता कि कुछ सुन पड़े। यह बहुत शीघ्र रूठ जाता है, कनूँ ही इसे मना पाता है और आज यह रूठ गया।

'मैं खाऊँ, तब खायगा तू ?' तोक न खाय और श्याम खाले—यह कैसे हो; किंतु जब यह हठ ही कर रहा है, तब यही सही, कितना तनिक-सा—राई-जितना नवनीत कन्हाई दो अँगुलियों से उठाकर मुख में डाल रहा है। मैंने तो खा लिया, अब तू खा ! तुझे खाना पड़ेगा, भला !' यह भी कोई बात है कि तोक इतना कहने पर भी नवनीत न खाय। श्याम उसके मुख में लगा देगा।

'ऐं !' नवनीत तो स्तम्भ से लगकर भूमि पर गिर पड़ा। 'तोक—नन्हा तोक आज बहुत रुष्ट है !' कमल-लोचन भर आये ! अनुज नहीं खाता तो यह कैसे नवनीत खा लेगा; लेकिन गोपिका कब तक रोके रहे अपने को। उसका हास्य रुकता नहीं, वह हँस पड़ी है।

'कोई है ! कोई हँस रहा है !' मोहन चौंका। उसने मुख घुमाया और झटपट उठ खड़ा हुआ। यह गोपी हँसते-हँसते दुहरी हुई जाती है।

'तोक···!' श्याम को अभी न इसके हँसने की चिन्ता है और न अपने पकड़े जाने की। इसका तोक रूठ गया है। इसे तो एक ही बात सूझ रही है—कोई मना दे इसके भाई को, और शब्द ही नहीं मिल रहे हैं इसे अपनी बात कहने को। 'यह गोपी क्यों इतना हँस रही है ? यह क्यों तोक को मनाती नहीं ?' कन्हाई कुछ आगे आ गया है।

'तोक कहाँ है ?' गोपिका की हँसी बढ़ती जा रही है।

'तोक···' सचमुच यहाँ तो कोई नहीं है। श्याम के मुखपर सङ्कोच—झेंप की कैसी मञ्जु आभा है !

'तू जाता कहाँ है ? माखन तो खा ले। मैं कुछ नहीं कहूँगी ! ले, आ, ले !' अब कौन सुने ! तोक यहाँ न सही; पर सचमुच यदि वह सुने कि कन्हाई अकेले माखन खा आता है और रूठ जाय तो ? नहीं—अब सखाओं के बिना श्याम अकेले माखन नहीं खायेगा !

—❀⊂❀⊂❀—

तस्कराणां पतये नमः

"दधिमथननिनादैस्त्यक्तनिद्रः प्रभाते
निभृतपदमगारं बल्लवीनां प्रविष्टः।
मुखकमलसमीरैराशु निर्वाप्य दीपान्
कवलितनवनीतः पातु गोपालबालः॥"

—श्रीलीलाशुक

'कन्हाई मेरे घर भी छिपकर नवनीत खाता!' पता नहीं कितने हृदय मचल रहे हैं। सुना है, मोहन गुप-चुप एक के घर में घुसकर माखन खा आया। अब तो साधों का संसार पोषित होने लगा है। 'कैसे वह आयेगा, कैसे छिपकर उसे देखना होगा, कैसे उसे डाँटना पड़ेगा और तब वह किस प्रकार चिढ़ायेगा या भाग जायगा।' पता नहीं क्या-क्या सोचने लगी हैं ये गोपियाँ।

मोहन अपने सारे साथियों को लेकर आता! अपनी मण्डली में उसकी चञ्चलता, धृष्टता अवश्य बढ़ जायगी और तब वह खूब खुलकर धूम कर सकेगा!' अकेले श्यामसुन्दर आये और बिना कुछ खाये ही भाग जाय, यह कौन चाहेगा। बालकों के साथ आये तो कुछ देर तो टिकेगा ही।

और जब इस प्रकार हृदय मचलने लगे हैं, तब वह हृषीकेश इनके माखन का लोभ कैसे छोड़ सकता है। वह—वह मन्त्रणा हो रही है! 'हम सब गुप-चुप घुस जायँगे उसके घर और खूब माखन खायँगे!' मोहन सखाओं को अपनी योजना समझा रहा है।

'तू चोरी करेगा? ना, ना, मैया मारेगी!' यह वरूथप सदा कुछ-न-कुछ अपनी टाँग अड़ाया ही करता है। भला, माखन-दही भी चोरी का होता है। वह तो है ही भोग लगाने के लिये। मधुमङ्गल को यह सब उपदेश पसंद नहीं। कन्हाई ठीक कहता है—भरपेट नवनीत खाने में ओरी-चोरी क्या? वह तो सबके सम्मुख ही खाया जा सकता है, लेकिन गोपियों को तनिक खिझाकर खाने में है तो मजा।

'तू मेरे घर चल, मैं खूब सारा माखन दूँगा।' यह बड़ा माखन देनेवाला आ गया। माखन का अभाव कहाँ किसे है। कनूँ कहता है कि गुप-चुप माखन-दही लेकर धूम करनी है, गोपियों को खिझाना है—है तो बड़ी सुन्दर क्रीड़ा।

'मैं इतना माखन लूँगा और तेरे पेट पर पोत दूँगा!' तोक दोनों हाथ से बड़े से लौंदे—खूब बड़े लौंदे की आकृति दिखाकर मधुमङ्गल को चिढ़ाने के प्रयत्न में है। कन्हैया ने कोई बात कही और यह ऐसे फुदकने लगेगा जैसे वह वस्तु इसे मिल ही गयी और अब इन सखाओं का विरोध क्या काम आवेगा। ये चोरी नहीं करना चाहते, ये कुछ बड़े हैं—सब ठीक; किंतु यह तोक जो श्याम की बात लेकर फुदकने लगा है। इसका प्रतिवाद तो किया ही नहीं जा सकता। इसे रुष्ट होते देर नहीं लगती और यह रूठे तो कन्हाई पहिले रूठा धरा है। यह सबसे छोटा है, कदाचित् कनूँ इसी से इसका पक्ष लेकर सबसे झगड़ने को उद्यत हो जाता है। अब तो बात स्वीकृत हो चुकी, ये सब बालक क्या योजना बना सकेंगे। प्रातः श्याम जिधर चल पड़े—बस, वही योजना।

× × × ×

माखन है तो सही, पर बहुत ऊँचे छीके पर है। होने दो ऊँचे पर, इतने से ही क्या उसे छोड़ा जा सकता है। यह जो कोने में ऊखल है। सब मिलकर इसे लुढ़का लायेंगे छीके के नीचे।

ऊखल पर पट्टा और उस पर बरूथप के कंधे पर चढ़ा यह श्यामसुन्दर। पट्टा, ऊखल, भूमि—सब श्वेत हो चली है। सबों ने दूध की मटकी में लकुट मारकर छेद कर दिया है। उज्ज्वल दूध की धारा गिर रही है। दधि एक दूसरे के अङ्गों पर भरपूर उछाला है और अब जाकर कहीं नवनीत मिला है। बरूथप के कंधे, मस्तक सब पर दधि पड़ा है और दोनों हाथों से यह कन्हाई को सम्हाले है।

मोहन माखन निकाल रहा है! एक हाथ से उसने छीके पर रक्खे पात्र को झुकाकर पकड़ लिया है और दूसरे से लौंदे निकाल-निकाल कर नीचे सखाओं को दे रहा है। दोनों कर, अधर उज्ज्वल हो रहे हैं। कभी-कभी तनिक-तनिक अपने मुख में देता है नवनीत, कभी लौंदा एक सखा को देता है और कभी दूसरे को। चपल नेत्रों से सब इधर-उधर देखते जाते हैं कि कोई आता तो नहीं।

बालक कितना माखन खायँगे? यह तो क्रीड़ा करनी है उन्हें। ये पक्षी, ये कपि—ये सब भी तो इनके ही साथ आये हैं। ये भी तो इनके सङ्गी ही हैं। कुछ मुख में, कुछ देह पर, कुछ भूमिपर, कुछ किसी के ऊपर फेंकने या पोतने में और कुछ पक्षियों तथा कपियों के लिये—नवनीत का सदुपयोग हो रहा है। सबकी दृष्टि ऊपर लगी है, पक्षियों और कपियों तक की। कन्हैया नवनीत निकाल-निकालकर दे रहा है।

मधुमङ्गल कूद रहा है, इसे आज सबों ने मस्तक से पैर तक श्वेत कर दिया है और श्याम बड़ा नटखट है; वह लौंदे देता तो है, पर अनेक बार अँगूठा दिखा देता है। कभी देने को लौंदा उठाकर फिर पात्र में डाल देता है, कभी दूसरे को दे देता है और कभी उसमें इतना थोड़ा गिराता है कि पूछो मत और जब मधुमङ्गल दूसरी ओर देखता है तो छप से इसके मस्तक या पीठपर कोई लौंदा आ बैठता है।

ये सब क्या चुप रह सकते हैं। कपि बार-बार बोलते हैं, आँखें मटका कर माँगते हैं और जब कोई उनके नेत्र या नाक को नवनीत का लक्ष्य बनाता है तो कूदकर दाँत भी दिखाते जाते हैं। पक्षी भी माँग रहे हैं और बालक ही कहाँ चुप हैं। हास्य, ताली और कोलाहल—पूरी धूम चल रही है। सब इधर-उधर देख लेते हैं और एकाध क्षण शान्ति हो जाती है। अच्छा सूना घर मिला है। इनको क्या पता कि दो नेत्र एक द्वार-छिद्रपर अपलक हो रहे हैं; पर उस दर्शिका का शरीर उसके वश में कहाँ है। वह तो मूर्ति-सी स्थिर देख रही है। उसके प्राण नेत्रों में एकाग्र हो गये हैं। मोहन माखन खा रहा है.....।

'चूड़ियाँ बजीं! कोई आ रहा है!' यह कूदा कनूँ, यह भागा—यह भागा और भागे सब ताली बजाते, एक दूसरे को ठेलते द्वार से। कितने प्रसन्न, कितने चञ्चल हैं सब। गोपिका देखती रही—देखती रही एकटक। उसके पद बढ़े नहीं, वह चाहकर भी दौड़ नहीं सकी है। सब चले गये; पर वह तो द्वार की ओर ही देख रही है।

कितने पदचिह्न हैं ये! दधि-नवनीत से सने चरणों के भूमि पर पड़े ये चिह्न—यह तो इन चिह्नों को ही देखने लगी है, इस प्रकार जैसे कुछ ढूँढ़ लेगी इनमें। सब इस प्रकार गये हैं कि कोई पद-चिह्न पृथक् नहीं रहा।

कक्ष की भूमि पर तो कीच हो रही है नवनीत, दधि, दूध की। भित्तियों पर चारों ओर भरपूर छिड़काव हो चुका है कुछ ऊँचाई तक। उज्ज्वल तो हो गया है कक्ष से बाहर सम्मुख का प्राङ्गण कपियों और पक्षियों के दौड़ने तथा कूदने से। फूटे गोरस-पात्रों के खण्ड पड़े हैं इस उज्ज्वलता के मध्य इधर-उधर। यह तो ऊखल पर चढ़ रही है; कदाचित् देखना चाहती है कि कुछ नवनीत बचा भी है या सबका सत्कार हो चुका। अरे, इसे अपने वस्त्रों तक का ध्यान नहीं। छीके का पात्र—भला, अब इसमें क्या धरा है। यही इधर-उधर लगा, सटा कुछ थोड़ा; किंतु यह तो पात्र उतारकर इसी दधि-दूध की कीच में बैठ गयी है और बचे-खुचे माखन को पोंछ-पोंछकर चाट लेना चाहती है—अब यहीं क्यों रह जाय? नेत्रों से अश्रु, रोमाञ्चित काँपता शरीर और यह अद्भुत-

सी लोचन-भङ्गी—क्या हो गया है इसे ? लो, यह पात्र भी इसने फटाक से फोड़ दिया ! पगली त नहीं हो गयी ? जूठा पात्र लेकर करती भी क्या ? पर यह जो बार-बार खिलखिलाकर इधर-उधर देखती अकारण हँसती जा रही है, सो ?

× × × ×

ये नन्हे-नन्हे बछड़े तो कूदते, उछलते भले लगते हैं। इन्हें भी बाँधकर रक्खा जाय, कन्हाई यह कैसे समझ ले। ये बालक अपने समान सबको कूदते, उछलते, हँसते देखना चाहें—इसमें अस्वाभाविक क्या है। फिर बछड़े तो छूटकर इनके साथ-साथ ही घूमेंगे। इन्हें सूँघ-सूँघकर ही उछलेंगे, इन्हें खेलने का अच्छा साधन मिल जायगा। बँधे बछड़े दीखे और श्याम ने खोला उन्हें। इन बालकों को देखते ही गोपियाँ सावधान हो जाती हैं कि ये नटखट अवश्य उनके बछड़े खोल देंगे। बछड़ों का क्या ठिकाना—कहीं उछलते हुये उछलकर गिर पड़ें। किसी कुएँ तक पहुँच जायँ। कहीं और किसी प्रकार अपने को आहत कर लें ! —लेकिन चाहे जितना कहा जाय, डाँटा जाय, झिड़का और खीझा जाय, लड़के मानने के नहीं। नन्दनन्दन अँगूठा या घूँसा दिखाकर भाग जायगा दूर और वहीं से मुख बनाकर चिढ़ायेगा। कोई कुछ चिल्लायगा और मटकेगा, नेत्र नचायेगा, नकल उतारेगा और सब हँसेंगे। इन पर क्या डाँटने का कोई प्रभाव पड़ने लगा है।

'यह बछड़े पकड़ने जायगी और हम सब दही खायँगे इसका !' कृष्णचन्द्र ने इन सावधान गोपियों को छकाने का एक नवीन ढंग निकाल लिया है। जब यह बछड़े खोलने पर बहुत बकती है, बहुत नेत्र चढ़ाती है, तब इसका नवनीत तो खा ही जाना चाहिये। ऊँचे छीकों पर धरे पात्रों में लकुट से छिद्र किया ही जा सकता है, तब क्या विलम्ब लगना है।

'कनूँ, इसके घर में तो कुछ है ही नहीं !' यह क्या सहन करने योग्य बात है कि श्याम अपने सखाओं के साथ आये और उसे कोई गोरस न मिले ! अब वह अपना रोष मृत्तिका-पात्रों पर तो निकालेगा ही।

'अरे, अरे, यह क्या कर रहा है तू ? बच्चे को क्यों रुला दिया !' ये भगे, ये भगे सब ! अब यह शिशु क्या शीघ्र चुप होने को है। कुछ न मिला तो नटखट ने बच्चे को ही रुला दिया। बर्तन फोड़े सबों ने भड़ाभड़ और अब बेचारी पकड़ने दौड़े या अपने बालक को चुप कराये। पता नहीं क्या करता है यह श्रीकृष्ण ! बच्चा हिचकियाँ लेकर रो रहा है, चुप होने का नाम ही नहीं लेता।

'तेरी माँ बड़ी कंजूस है ! तेरे घर में कुछ नहीं; चल, तू हमारे साथ ! चल—खूब माखन दूँगा तुझे ! चल भाग जल्दी ! हमने यहाँ के सब बर्तन फोड़ दिये हैं ! वह दौड़ी आ रही है—भाग ! उठ !' पता नहीं क्या समझता है नीलसुन्दर और पता नहीं क्या कहते हैं उसके विशाल लोचन; किन्तु वह तो केवल पलने में पड़े शिशु को केवल देखता है तनिक मुख झुका कर, जैसे पहचानता हो कि उसकी मित्रमण्डली में यह कब से आयेगा। कन्हाई का शरच्चन्द्रानन—शिशु दोनों हाथ उठाने का प्रयत्न करके किलक उठता है, पैर उछालने का प्रयत्न करता है। इतना सुन्दर—इतना मोहक मुख झलक दिखाकर भाग जाय—शिशु रोये नहीं तो क्या हो ! गोपिका समझती है, बच्चे को चुटकी काट ली है श्याम ने। मोहन अपने किसलय-कोमल कर से चुटकी काटता इसके पास रहता—यह क्या रोने वाला था? श्याम के कर भी कहीं पीड़ा दे सकते हैं। नन्दनन्दन क्या जाने पीड़ा देना; किंतु वह चला गया—भाग गया और बच्चे की हिचकियाँ बन्द ही नहीं होती। यह गोपिका शिशु को चुप कराने में असमर्थ हुई जा रही है।

बड़े सवेरे, अभी तो अँधेरा ही है, पर सखाओं से कल ही मन्त्रणा हो चुकी है। अभी-अभी दधिमन्थन प्रारम्भ हुआ और श्याम के नेत्र खुल गये। यह जग गया है। इसके लिये उठनेपर माखन मिल जाय, पद्मा का दूध ठीक गरम हो जाय—मैया इस सबकी व्यवस्था में व्यस्त है। बड़ा सुन्दर अवसर है चुपचाप खिसक जाने का। यह उतरा पलने से कन्हाई, यह चला दबे पैर।

तुरंत का निकाला नवनीत बड़ा सुन्दर होता है। कोई मन्थनपात्र से माखन निकालकर रक्खे और झट से देखे कि वह तो अन्तर्हित हो गया—कितना चौंकेंगे, कैसी मुद्रा होगी उसकी ! कितना

आनन्द आयेगा! सभी बालकों ने कल ही सब सोच लिया और आज तो सब अपने कनूँ की प्रतीक्षा कर रहे हैं। अभी अँधेरा है, अभी दीपक घरों में जल रहे हैं। गोपियों ने इस ब्राह्ममुहूर्त में दधि-मन्थन प्रारम्भ किया है और गोप नित्यकर्म में व्यस्त हैं। इससे अच्छा अवसर कब मिल सकता चोरी के लिये। कौन जाने कन्हाई को गोपियों की प्रतीक्षा खींचे लिये जाती है या सुअवसर। गोपियाँ तो शय्यासे उठती नहीं नेत्र खुले और—श्याम आवेगा, आता होगा। बस, एक ही धुन रहती है सबको। कनूँ को दिन निकलने पर मैया उठायेगी; किंतु जब इतना समय प्रतीक्षा करते हृदयों को लक्ष लक्ष कल्प बनने लगे, मोहन कैसे सोया रह सकता है।

बड़ा सीधा उपाय है—गोपियाँ तो घर के कामों में व्यस्त हैं ही, मुख से फूँककर दीपक बुझा दिया और जब तक यह मन्थन पात्र के समीप से उठकर दीपक प्रज्वलित करने जायगी—नवनीत क्या कोई पर्वत है कि उसे उठाने में विलम्ब होगा। यह दीपक जलाने से पूर्व ही बालकों की किलकारी सुन लेगी। न जाय दीप जलाने, बैठी-बैठी पुकारे सेवकों को और नवनीतपात्र पर धरे रहे अपने सावधान कर—कोई अँधेरे में वेणी खींच देगा और इतने में तो माखन का पात्र खिसक ही जायगा। बेचारी जानती है कि सुरक्षा का बहुत उपाय करना अच्छा नहीं। माखन की रक्षा के प्रयत्न में छाछ भी चली जायगी। श्याम का क्या ठिकाना—कोई युक्ति न मिले तो मन्थन-पात्र पर लकुट ही दे मारेगा। सब वस्त्र भीग जायँगे छाछ से।

× × × ×

'श्रीकृष्णचन्द्र कितना चपल है! उसे पकड़ लूँ माखन चुराते तो?' कन्हैया डराने, धमकाने से तो मानने से रहा। उसे पकड़ लिया जाय—पकड़ लिया जाय तो क्या करेगा? यह तो पकड़कर ही देखने की बात है।

'हूँ!' अरे, यह तो तोक है। वही नीलसुन्दर छवि, वही पीतपट और अब गोपिका ने इसे ही श्याम समझकर भागते बालकों में से शीघ्रता में पकड़ लिया तो मुख बनाकर, अँगूठा दिखाकर यह चिढ़ा रहा है। डरना तो इसने सीखा नहीं। क्यों डरे? यह गोपी तनिक भी गड़बड़ करे तो इसके सब वस्त्र फाड़ देगा, सब बर्तन फोड़ देगा और कनूँ है न! कनूँ तो लौटता ही होगा। यह तो गोपिका भी जानती है कि तोक को पकड़ने में कुशल नहीं। इसे पीछे मुड़कर जैसे ही सब न देखेंगे, सबके सब मुड़ पड़ेगें। कन्हाई तो क्या, दाऊ तक क्रोधित हो उठेगा और फिर इन सबका रोष—कौन साहस कर सकता है इतना। तोक—यह सबसे छोटा, समस्त व्रज के स्नेह और दुलार का भाजन--इसे भला, क्या पकड़ना।

'कनूँ तो वह गया!' तोक जानता है कि इसे किस भ्रम से पकड़ा गया है। यह तो नित्य की बात है। अब यह खिलखिलाकर हँसे और चिढ़ाये नहीं तो क्या करे। इसका हाथ तो कबका छोड़ दिया इस गोपी ने। अब यह और नवनीत लेकर ही टलेगा, इसने पकड़ा ही क्यों? और पकड़ा तो माखन दे! गोपिका को हँसकर ही माखन देना है। तोक के मटकने और चिढ़ाने पर भी भला, कोई रुष्ट हुआ है। अपनी नन्ही अञ्जलि माखन से भरे यह भागा यह—'कनूँ! कनूँ!'

भला, भद्र को कौन पकड़े। उसकी पीली कछनी तो ठीक; पर वह जब कभी झँगुलिया पहिनता है, उत्तरीय लेता है—उसे दाऊ का नीलाम्बर ही पसंद है और उसके स्वर्ण-गौर वर्ण पर नीलाम्बर ही शोभा भी देता है। अच्छा तो जब वह नीलाम्बर पहिन लेता है, उसे पकड़ने में सदा ही दाऊ का भ्रम हो सकता है। दाऊ को क्या पकड़ा जा सकता है? दाऊ—तीन वर्ष का दाऊ अभी से वृक्ष पकड़कर हिला देता है। वह बल--उसके भय कौन नहीं डरेगा। कन्हाई तो रोष करके बर्तन ही फोड़ता है, पर दाऊ के लिये तो स्तम्भ गिरा देना भी सामान्य बात ही है। दाऊ चोरी भी कहाँ करता है। अनुज के स्नेह से वह आ जाता है और सब उसे माखन खिला देते हैं, यह दूसरी बात। हाँ, दाऊ के रहते उसके किसी सखा को पकड़ा नहीं जा सकता। वह साथ हो तो किसी को छेड़ते ही सबसे आगे आयेगा सखाओं का पक्ष लेकर और फिर उससे झगड़ेगा कौन।

यह मधुमङ्गल--इसे चाहे जो पकड़ ले, चाहे जो चिढ़ा ले। यह भी किसी को चिढ़ाने में उठा कहाँ रखता है। सब इसे चिढ़ाते हैं और गोपियाँ इसे पकड़ लेती हैं। पेट भर लेने पर दौड़ना क्या कोई भली बात है ? इसे चिन्ता भी क्या किसी के द्वारा पकड़े जाने की। कोई पकड़ ले, डाँटे तो माखन-सनी हथेली उसके मुख में लगा देगा या कह देगा—'तू नाक मत टेढ़ी कर; ला, माखन दे !' इस पर कोई रोष भी क्या करे। रोष करने पर कभी पानी पीने को कहेगा, कभी कुछ खाने को और कभी-हाथ मुख बनाकर प्रत्येक शब्द का अनुकरण करने लगेगा। यह आनन्द की मूर्ति—गोकुल के गृहों में यह हास्य, जीवन, आनन्द बिखेरता कूदनेवाला अवधूत—इससे उलझने पर तो हँसे बिना छुटकारा नहीं !

श्याम – श्याम पकड़ लिया जा सके ! यह क्या सरल बात है ? यह चपल कन्हाई—इसे कैसे पकड़ पाये कोई। पीछे दौड़ने पर भय लगता है--कहीं वेगसे भागने में गिर न जाय। सुकुमार नन्हे चरणों को कहीं ठोकर न लगे ! यह क्या दौड़ाया जा सकता है ? कितना भला लगता है, जब तनिक दूर भाग सखाओं के साथ मुड़कर मुख मटकाता है, नाना भंगी करता और स्वर बना बनाकर चिढ़ाता है !

× × × ×

'तू बहुत धृष्ट हो गया है ! चल, नन्दरानी से कहती हूँ !' गोपी ने धमकाया श्याम को।

'जा कह दे !' यह चञ्चल धमकी में तो आने से रहा।

'नन्दरानी से कह दूँ ?' बड़ा सुन्दर बहाना है। मोहन भाग गया, अब इस बहाने उसे एक बार और देखा जा सकेगा ! 'कहीं व्रजेश्वरी श्रीकृष्ण को डाँटने लगें तो ? हृदय में द्वन्द्व चल रहा है। श्याम क्या डाँटने योग्य है ? उसके कमल-मुख पर उदासी आये····! नहीं, उसे कोई कैसे डाँट सकता है। उसके मुख की ओर देखकर कैसे रोष रह सकता है ! फिर उलाहना देना तो अपने को है। डाँटने का रंग-ढंग हो तो मना किया जा सकता है। अपने शब्द बदले जा सकते हैं। कृष्ण को इस बहाने एक बार और देखने का लोभ कैसे छोड़ा जाय।

'व्रजेश्वरी, अपने इस लाल के गुण भी जानती हो ?' अरे, सचमुच यह तो मैया से कहने ही आ गयी। कन्हाई गोदमें बैठ गया है मैया की और गम्भीर बन गया है। बालक समझ ही नहीं पाते कि क्या करें। सब चुप हो गये हैं। जहाँ-तहाँ खड़े बैठे रह गये हैं। यह गोपी तो कहती ही जा रही है—'तुम्हारी गोद में यह कैसा सीधा—साधु होकर बैठा है। इससे तनिक पूछो तो कि क्या-क्या करके आया है !'

'बात क्या है ?' मैया क्या पूछे अपने नीलमणि से ? यह अभी उसके सम्मुख यहीं तो बालकों के साथ खेल रहा था। अब इतनी देर पर तो तनिक अङ्क में आकर बैठा है। यह भोला, नन्हा कनूँ—भला, इसने क्या किया है ? क्या कर सकता है ! पता नहीं क्यों यह गोपिका इतनी रुष्ट हो रही है। मैया तो इस प्रकार देख रही है, जैसे बड़े आश्चर्य में हो कि यह क्या हो रहा है।

'हुआ क्या, मेरा सब माखन खा आया अपनी मित्रमण्डली को लेकर ! दधि-दूध के भाण्ड फोड़ दिये और मना करने पर इस प्रकार चिढ़ाता है, इस प्रकार की बातें करता है जो कही ही नहीं जा सकतीं !' इसका रोष तो विकट है। यह तो जैसे झगड़ने के लिये ही कमर कस कर आयी है।

'बहिन, तेरे मुख में घी-शक्कर ! भला यह तेरे यहाँ माखन तो खाता है !' मैया तो मोहन को डाँटने के बदले प्रसन्न हो उठी है। उसका यह नीलसुन्दर कुछ खाता ही नहीं। बहुत समझाने और आग्रह करके फुसलाने पर कहीं तनिक मुख जूठा कर लेता है। अब यदि माखन खाने लगे तो कुछ शक्ति तो आये इसके शरीर में। गोरस का क्या अभाव है। चाहे जितना गोरस, चाहे जितने पात्र कोई ले जाय उसके यहाँ से। यह तो गोपिका को उपहार देने उठ पड़ी है।

'मैया, यह झूठी है! मैं इसके घर कहाँ गया था। मैंने तो इसका घर ही नहीं देखा है! कहाँ रहती है यह?' तब नहीं, अब बनी। और दे ले उलाहना। कन्हाई कुछ यों ही नहीं कह रहा है। उसके पास अपनी बात के प्रमाण हैं—'तू न माने तो पूछ ले दाऊ भैया से या इस भद्र से! तू भद्र से ही पूछ ले!'

मैया को कहाँ इन प्रमाणों की आवश्यकता है। वह तो पहले से सोचती है कि उसके गृह में अभाव क्या है कि उसका पुत्र दूसरे के घर माखन खाने जायगा; फिर श्यामसुन्दर कहीं गया भी तो नहीं था। 'बहिन, ऐसा भी क्या परिहास करते हैं!' मैया तो इस गोपी को ही उलाहना देने लगी है।

'जहाँ ऐसे भोले सत्यवादी और उसके साक्षी हैं, वहाँ मेरी सुनेगा कौन!' गोपिका के मुख से यह निकला नहीं। वह तो मोहन की चातुरी पर हँस पड़ी है। 'व्रजेश्वरी, अब तो तुम सच्ची और तुम्हारा यह पुत्र सच्चा!

'और उलाहना देगी?' कन्हाई के नेत्रों में विचित्र भङ्गी है और मैया की दृष्टि बचाकर अँगूठा तो दिखा ही दिया इस नटखट ने। गोपिका ही कहाँ घाटे में है। वह यही आनन्द तो लेने आयी थी। कहाँ सोचा था उसने कि यह नवीन छटा उसके प्राणों को तृप्त कर देगी। कहाँ स्मरण है उसे अपना उलाहना।

× × × ×

पता नहीं क्या बात है, आज-कल उलाहने बहुत बढ़ गये हैं। कोई-न-कोई दिन भर आती ही रहती हैं। श्याम ने किसी के बछड़े खोल कर भगा दिये हैं, किसी के घर में सखाओं के साथ घुसकर चोरी से नवनीत खा आया है, किसी के सारे भाण्ड ही फोड़ डाले, किसी के बालक को रुला दिया और किसी गोपी की लटकती वेणी खाट में बाँध आया है। 'यह सब कब होता है?' मैया बहुत सावधान रहने लगी है कि कन्हाई किसी के घर न जाय। यह घर के ही सम्मुख खेले। दिन भर बालक यहीं तो खेलते रहते हैं; लेकिन सभी गोपियाँ झूठ बोलें, यह भी कैसे सम्भव है। यह बहुत ऊधमी होता जा रहा है। चोरी से माखन खाना तो बहुत बुरा है। मैया क्या करे? मोहन के कमल-मुख की ओर देखते ही वह सब भूल जाती है। श्रीकृष्णका भोला मुख—भला, कैसे किसी में रोष का स्वाँग भी रह सकता है उसे देखकर!

दधि-माखन ऊपर रक्खा जाय; पर गोपियाँ कहती हैं कि यह ऊखल पर पट्टे रखकर किसी बालक को खड़ा करके उसके कन्धे पर चढ़कर उतार लेता है और यह उपाय सफल न हो तो लकुट मारकर बर्तनों में छिद्र कर देता है! गोरस के भाण्ड—गोपियों को ये पुराने चिकने भाण्ड कितने प्रिय हैं! वे बिचारी माखन के लिये कहाँ उलाहना देती हैं; पर उनके भाण्ड फोड़ दे यह—यह भी कहाँ तक सहा जाय।

छिपाकर गोरस रक्खा जाय! क्या लाभ? श्यामसुन्दर अँधेरे की स्वतः औषध है। जहाँ पहुँच जायगा, प्रकाश हो जायगा। बालकों के साथ आँखमिचौनी खेलने में तो कहीं छिप नहीं पाता, सब इसके अङ्ग की कान्ति से ही ढूँढ़ लेते हैं इसे और उसपर कण्ठ में जो दीप्त मणियों की माला पहिनकर घूमता है यह—इससे कोई वस्तु छिपायी कैसे जाय। कोई छिपा भी दे तो और कोई ऊधम कर आयेगा। कुछ न मिले तो इसे रोष तो आयेगा ही और तब गृह के भाण्डों की कुशल कहाँ। इतना ही हो, तब भी कोई बात नहीं; वह गोपी कहती थी कि सब उसके गृह के धान्यादि को पवित्र कर आये! बच्चे तो हैं ही; प्रातः सब भाग गये गृह से और जब नित्यकृत्य की आवश्यकता हुई, यह धूम कर डाली! बेचारी गोपी—वह समझ ही नहीं पाती थी कि हँसे या रोष करे। उसकी बात ही सुनकर मैया को बलात् हँसी आ गयी और फिर तो सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गयीं, जब मोहन ने कहा—'इसने अपने-आप यह सब किया है और मेरा नाम लेती है!'

'क्यों रे !' मैया डाँटने लगी थी। बालक बहुत बिगड़ता जा रहा है, यह ठीक नहीं।

'ना, ना ! इसे कुछ मत कहो !' यह अच्छी रही। अभी तो यह गोपी लाल-पीली हो रही थी, उलाहने दे रही थी और अब गिड़गिड़ाने लगी। अब तो यह कहती है कि श्याम की बातें ही ठीक हैं, यह तो परिहास कर रही थी। मैया अब क्या समझे ! कौन सच्चा है ? समस्या हो गयी है यह।

× × × ×

'भाग मत ! भाग मत तू ! चाहे तो और माखन ले ले; पर इस प्रकार तो मत भाग ! कोमल अरुण चरण और यह भूमि तो कुछ तप्त हो चली है ! नवनीत लेकर कन्हाई भय के कारण भाग रहा है ! इसके किसलय-से चरण पीड़ा पा रहे हैं। गोपिका को लगता है—श्याम भूमि की उष्णता के कारण ही इतनी शीघ्रता से पैर उठा रहा है। इसके पैरों के तलवे कितने लाल हो उठे हैं। पुकार रही है—पुकार रही है द्वार तक आकर और इसकी पुकार में तो प्राण आर्तनाद कर रहे हैं; किंतु कहाँ सुनता है यह चञ्चल मोहन। 'अरे क्या हो गया यदि तूने नवनीत ले लिया। डर मत ! भाग मत !'

'कृष्णचन्द्र इस आतप में ही भागता गया है !' अब कैसे घरमें रहा जा सकता है। 'वह सकुशल घर पहुँच गया !' यह तो देख ही आना चाहिये। अब यह नन्दभवन चली है। वहाँ पहुँचकर और कोई बहाना न सूझे और उलाहना देने लगे तो कोई क्या करे !

कमल-मुख किंचित् अरुण हो आया है धूप में आने से। भाल पर अब भी कुछ बिन्दु झलमल कर रहे हैं। अधरों पर नवनीत की उज्ज्वल रेखा, कपोलों पर श्वेत बिन्दु और हाथ तो सने ही हैं। आज यह श्यामसुन्दर ठीक पकड़ा गया। आज कोई भी बहाना चलेगा नहीं इसका।

'यही है, यही है मैया ! तू इसको मार !' बेचारी पहुँचने भी नहीं पायी कि देखा मोहन मैया का हाथ पकड़ कर अभियोग उपस्थित करने लगा है। इसने कितना गम्भीर मुख बना लिया है !

'क्यों री, तू नीलमणि को अपने यहाँ बलात् पकड़ ले जाती है ? मेरे लाल से घर का काम भी कराती है और इसके मुख, कपोल, हाथों में माखन लगाकर मुझे उलाहना भी देने आती है ?' मैया ने मुख को कृत्रिम कठोर बना लिया है, पर उसके नेत्र और स्वर में हास्य है। अच्छा, तो इस कान्ह ने पहिले ही आकर अपना पक्ष बना लिया है !

'मैया, मैं कहता था न कि यह अभी आती ही होगी ! तू पूछ ले भद्र से, यह नित्य मुझे तंग करती है !' जैसे आप, वैसे आपके साक्षी। भद्र तो बिना पूछे ही कन्हाई का समर्थन करने लगा है।

'व्रजेश्वरी, यह दिन-प्रतिदिन का ऊधम कहाँ तक सहा जाय ! दूध, दही, माखन—यह गोरस ही तो हमारी आजीविका है और तुम्हारा लाल उसे नित्य नष्ट कर आता है ! नित्य कहाँ तक नवीन भाण्ड लिये जायँ और तुमसे कहने आवें तो उलटे दोष लगता है।' बात तो सच है, अपनी हानि भी हो और दोषी भी बना जाय—यह क्या सहन करने योग्य बात है ? अब यह आवेश में तो आयेगी ही। 'हम तो व्रजवासी हैं; न गोकुल में रहेंगे और किसी व्रज में सही। इस हानि और लाञ्छन से तो छुटकारा होगा !'

'श्याम मेरा ही है, तुम्हारा नहीं है ? तुम किस पर रोष करती हो, बहिन ! हानि की तो क्या चर्चा है; नवनीत, गोरस, भाण्ड—जितना चाहे, ले जाओ ! रहा यह मोहन—यह तो तुम्हारे ही सबके आशीर्वाद से आया और तुम्हारा ही है। गोकुल तुम छोड़ने की चर्चा करो, इससे तो ···।' मैया कितनी भोली है ! उसके तो नेत्र टपकने लगे हैं, कण्ठ भर आया है और गोपिका तो उलटे क्षमा माँगने लगी है। कहीं परिहास को भी इतनी गम्भीरता से लिया जाता है।

× × × ×

'यह लो, अपने लाल को देखो !' आज कितने दिनों पर कितने प्रयत्न से यह इस नटखट को पकड़ पायी है। व्रजेश्वरी विश्वास ही नहीं करती थीं। यह भी कोई-न-कोई बहाने बना दिया करता था। आज छिपकर पकड़ सकी है माखन खाते समय। अब बहाना बना दे तो···।

'क्या किया है इसने ?' मैया के तो सभी लाल हैं। वह तो पुचकारने-जैसे स्वर में बोल रही है।

'क्या किया है, सो तुम्हीं देख लो ! नित्य ऐसे ही चोरी करता है, माखन, दधि, दूध फैलाता है और फिर तुमसे कहें—तो बहाने बनाता है।'

'तू क्या कह रही है ? भला, मुझसे तूने कब कहा था ! आ बेटा, चोरी से क्यों माखन खाता है ! तेरी माँ बड़ी कृपण है !' मैया तो उलटे ही डाँट रही है—'तू इसे देती नहीं माँगने पर, तभी तो चोरी करता है'।

'हे भगवान् !' गोपिका तो जैसे आकाश से गिरी। यह तो कन्हाई को पकड़े आ रही थी, यह क्या हुआ ? यह तो उसीका पुत्र है। अब क्या कहे ? बड़े धूर्त हैं सब ! सब-के-सब मिले रहते हैं। मार्ग में श्याम ने कहा था कि 'मेरा हाथ दुखने लगा है, तू इस हाथ को पकड़ ले' और चुपचाप इसका हाथ दे दिया हाथ में। यह अपने सखा की रक्षा के लिये पूरे मार्ग भर कैसा गुम-सुम चला आया है।

'अभी कल देवरानी तोक को पकड़ लायी थी। भला, नन्हा तोक क्या जाने चोरी करना ! तुम सब अब तक तो श्याम को ही दोष देती थीं, अब अपने पुत्रों को भी ऊधमी बताने लगीं। पता नहीं क्यों तुम सब-की-सब इन बालकों के पीछे पड़ी हो। आ भैया, तू मेरे पास आ ! मैं तुझे भर-पेट माखन खिलाऊँगी !' मैया क्या जाने कि उसके पुत्र ने क्या षटयन्त्र किया। वह तो सदा सीधा अर्थ ही लेती है घटनाओं का। 'बच्चे ने कुछ ऊधम किया होगा तो यह मेरे पास लायी है उसे' पर मैया तो सदा से बालकों का ही पक्ष लेती है।

× × × ×

श्याम चोरी करता है—माखन, दधि, दूध की चोरी ! अपने सारे सखाओं के साथ यह चाहे जिसके घर चुपचाप घुस जायगा और चलने लगेगी इसकी धूम। मोहन की यह चोरी—गोपियाँ प्रतीक्षा करती रहती हैं; इसके पहुँचने में विलम्ब हो तो उनका हृदय कहने लगता है—ऐसे माखन को धिक्कार, जो कन्हैया की क्रीड़ा में न आवे !'

'वह आ रहा है, वह आ रहा है कनूँ !' यह चित-चोर चित्त की बात न समझ ले—कैसे सम्भव है। ये आये उसके सहचर और अब इसे छिप जाना चाहिये ! छिपकर ही इन सबों की मधुर क्रीड़ा देखी जा सकती है।

डाँटना, धमकाना—यह कन्हाई मुख बनाता है, ये बालक घूसा दिखाते और चिढ़ाते हैं। मैया के यहाँ तो उलाहनों का बहाना लेकर जाना ही है। मोहन अपना मुख ऐसा गम्भीर बना लेगा कि देखते ही बनेगा। इसके ये ऊधमी सखा साधु साक्षी बन जायँगे। ऐसी बातें बनायेगा कि पूछो मत।

'मैं तो यहीं खेलता हूँ दिन भर ! यह तो है ही लड़ाकू, वायु से भी लड़ा करती है ! कोई न मिला होगा तो तुझसे लड़ने आयी है ! मुझे तो इसने ही बुलाया था, सब गोबर उठवाया और माखन भी नहीं दिया ! अब तुझसे कहने आयी है ! मैं इसके सब भाण्ड फोड़ दूँगा !' पता नहीं कितने बहाने बने रहते हैं इसके पास ! गम्भीरता, रोष, भय—क्षण-क्षण पर मुखके भाव बदलते रहेंगे और तब उलाहना देनेवाली हँसे नहीं तो क्या करे ! मैया तो इसका मुख ही देखती रह जाती है।

'और आना—हाँ !' उलाहना देकर मुड़ते ही यह भागा आता है और द्वार के समीप घूसा दिखाकर या हाथ मटका कर धमकाता है ! गोपिका नेत्र कड़े भले कर ले, उसका हास्य तब कठिनता से ही रुकता है और ये सब-के-सब नटखट—इनसे कोई कहाँ तक पार पावें। इनसे पिण्ड छुड़ाकर खिसक ही जाना ठीक है।

बड़ा ऊधमी हो गया है यह कनूँ—वैसे ही संगी मिल गये हैं इसे और जब इसके ऊधमों का आह्वान कर रहे हैं सुस्निग्ध अन्तर—यह चला, यह चला अपनी मित्र-मण्डली के साथ ! अब तो कहीं नवनीत या दधि की कीच होकर रहनी है।

—❀—❀—❀—

दामोदर

"नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः।
ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह ॥"

—भागवत १०।९।२१

रात्रि में दीपमालिका जगमग करती रही है। आज रात्रिभर गोपों ने महालक्ष्मी का पूजन किया है और गोपियों ने मङ्गल-गान किये हैं। दीपावली के प्रातः ही तो इन्द्रयाग होता है। ब्राह्ममुहूर्त से तनिक पूर्व ही गोपियाँ दारिद्र्य-निःसारण की विधि पूरी कर चुकीं। भला, गोकुल में दरिद्रता—अलक्ष्मी, अमङ्गल ? पर जो सनातन परम्परा है, उसे तो पालन करना ही चाहिये। सूप, ताड़पत्रादि के शब्दों से गृहों का कोना-कोना गूँज गया था और अब तो सब स्नान करने भी चली गयी हैं।

कन्हाई दीपोत्सव की धूमधाम में देर से सोया पिछली रात। वह सखाओं के साथ घृत-दीपकों की पंक्तियाँ सजाने में कितना मग्न था। बालक बड़े हठी हैं। सबोंने मैया के बार-बार कहने पर भी पूरे गोष्ठ में स्वयं प्रदीप रक्खे। गायों की भी कोई संख्या है ? इन सबों की हठ—प्रत्येक गाय, वृषभ और बछड़ी तक के समीप दीपक रक्खेंगे। दीपदान सम्पूर्ण हुआ तो सब इधर-से-उधर धूम करते घूमने लगे। कुशल हुई—किसी ने उलाहना नहीं दिया कल; पर सब-के-सब थक गये। श्याम रात्रि का पूरा एक प्रहर व्यतीत हो जाने पर सोया। प्रातः द्वारिद्र्य-निःसारण का तुमुल कोलाहल—मैया तो डर रही थी कि उसके लाल की निद्रा न खुल जाय ! इस लिये तो वह पुत्र के समीप सोयी ही रही उस समय उसे थपकाते हुये।

गोप महेन्द्र का यजन करेंगे। वे तो ग्राम-सीमा से बाहर चले गये सब पशुओं को लेकर। आज का गोदोहन तो वहीं होगा और वहीं गायों की, वृषभों की पूजा होगी। आज का सम्पूर्ण सम्भार तो सुरेश के पूजन के लिये ही है। आज माता रोहिणी यज्ञमण्डप की सामग्री-व्यवस्था करने पहिले ही चली गयी हैं। दाऊ, भद्र—ये तो उनके साथ ही गये। दाऊ दारिद्र्य-निःसारण के कोलाहल में जग गया और तब उसे यज्ञ-मण्डप में जाने से कौन रोक लेता। कान्ह नहीं उठा, अच्छा ही हुआ। श्याम को मैया के बिना कौन सम्हाल सकता है। दूसरे किसी के द्वारा न वह मुँह धुलायेगा और न कुछ खायगा ही। माता रोहिणी आग्रह कर गयी हैं कि मैया घर पर ही रहे और इस चपल को यहीं रक्खे। यज्ञस्थान में जाकर यह पता नहीं क्या धूम करने लगे। बालक के द्वारा कोई देवापराध न हो जाय—इससे यहीं रहना ठीक है इसका !

दासियाँ सामग्री प्रस्तुत करने में लगी हैं। यज्ञ-सम्भार यज्ञस्थान में पहुँचाया जा रहा है। अब प्रभात होनेवाला ही है। जगमग करते दीपों की कान्ति थोड़ी देर में मलिन होने लगेगी। श्यामसुन्दर उठेगा ! उसके लिये नवनीत चाहिये। व्रजेश्वर स्वयं पद्मगन्धा कामदा को दुहते हैं। वे आज सावधानी से दूध गरम करने को कह गये हैं। आज का सम्पूर्ण गोरस यज्ञ के काम के लिये चला गया। सब-का-सब दूध वहीं दुहा जायगा और सुरपति की अर्चा होगी उससे। श्याम के लिये ही यह दूध भवन में आया है। आज इसे सावधानी से उपयोग करना है। वैसे भी मोहन कामदा को छोड़कर और किसी का दूध मुखसे ही नहीं लगाने देता।

आज अवसर मिला है। मैया कितना चाहती है कि अपने पुत्र के लिये सब कार्य वह स्वयं करे; पर कहाँ कर पाती है। किसके आग्रह की उपेक्षा कर दे वह। आज कोई नहीं है। दासियाँ तक

यज्ञिय कार्यों में व्यस्त हैं। आज सुयोग प्राप्त हुआ है—आज मोहन के लिये स्वयं दधि मथेगी, नवनीत निकालेगी, दूध गरम करेगी। उठने पर उसका मुख धोयेगी, माखन खिलायेगी—सब काम आज स्वयं करेगी! मैया धीरे से शय्या से उठी है। श्याम ने तनिक हाथ हिलाया, थपकियाँ दे रही है यह। थपथपा रही है धीरे-धीरे।

श्याम सो रहा है, घुँघराली काली अलकें भाल पर बिखरी हैं। विशाल लोचन पलकों में बंद हैं। अधरों पर मन्द स्निग्ध स्मित की छाया है और अर्धमुकुलित करकमल—वक्ष एवं उदर तनिक-तनिक ऊपर-नीचे स्पन्दन कर रहे हैं। चरणों के नीचे फेंक दिया है इसने आच्छादन का कौशेय-पट। मैया ने वस्त्र धीरे से लेकर अङ्गों पर डाल दिया। विशाल भाल पर कज्जल-बिन्दु लगा दिया और देखती रही दो क्षण तक सोते अपने कृष्णचन्द्र को।

× × × ×

मैया आज स्वयं दही मथ रही है। सम्मुख कामदा का दूध मन्द अग्नि पर चढ़ा दिया है इसने। श्याम जग जाय तो यहीं से ज्ञात हो जायगा। शय्या का प्रत्येक भाग दृष्टि में है और दधि-मन्थन का रव यहाँ से उसकी निद्रा में बाधा भी नहीं देगा।

मैया दही मथ रही है और बार-बार शय्या की ओर देख लेती है। दोनों हाथों में रज्जु लेकर मथ रही है दही को। मथानी घूम रही है। दही पतला हो गया है। उसमें हिण्डन चल रहा है। बिन्दु उछल रहे हैं। मैया के सिरका वस्त्र खिसककर कंधों पर आ गया है। केश में गूँथे मालती-सुमन यदा-कदा गिर जाते हैं। मुखपर स्वेदसीकर झलकने लगे हैं। कपोलों पर कुण्डल नाच रहे हैं। कङ्कण क्वणित हो रहे हैं और वह धीमे-धीमे स्वर से अपने श्याम के चरित गा रही है। मैया गा रही है, माहन के अमृतस्निग्ध चरित उसके नेत्रों के सम्मुख घूम रहे हैं, मग्न है वह। हाथ स्वतः रज्जु को चला रहे हैं। मन्थन हो रहा है, मैया गा रही है और जैसे कुछ देख रही हो प्रत्यक्ष-सा।

'मैया! मैया! मैया री!' कनूँ की निद्रा गयी। इसने अङ्गपर का आच्छादन-वस्त्र पैरों से हटा दिया। तनिक कुनबुलाकर पलक खोले और मैया कहाँ है? पड़े-पड़े इधर-उधर लोट-पोट हुआ शय्या पर और पेट के बल होकर धीरे से उतर गया। वह मैया दधिमन्थन में लगी है। कन्हाई अभी सोकर उठा है। अब भी नेत्रों में अलसभाव है। कुछ अरुणिमा है। बार-बार मुख खोलकर जम्हाई लेता है। दोनों हाथों से नेत्रों को मलकर उनमें लगे अञ्जन को फैला दिया है इसने कपोलों तक। हाथों में भी अञ्जन लग गया है। बिथुरी अलकें, भाल पर फैला-सा कज्जलबिन्दु, कण्ठ में उलझी पड़ी मुक्तामाल, कटि में किङ्किणी। निद्रा के आलस्य से भरे चरण अभी डगमग ही पड़ रहे हैं।

'दूध!' अरे, मैया ने स्नेह से मुख घुमाकर देखा। श्यामसुन्दर आकर पीछे से खड़ा हो गया है उसके कंधे पर एक हाथ रखकर। दूसरे हाथ से नेत्र मलता अभी जम्हाई ले रहा है। 'दूध' शब्द भी उसकी जम्हाई में मुख के साथ ही जैसे विस्तृत हो गया है।

'देख, माखन कैसा नाच रहा है! तेरे लिये आज माखन निकाल रही हूँ।' पात्र में नव-नीत ऊपर आ गया है। अब दस-पाँच बार मथानी घुमाकर जल डालना होगा और तब लौंदा बनते कितनी देर लगनी है।

'दूध! दूध!' श्याम कुछ नहीं सुनता। वह अब एक हाथ से अञ्चल खींचने लगा है। मचलने की मुद्रा तो नहीं आयी स्वर में, पर हठ अवश्य आ गया है।

'तू देख तो सही, कितना उज्ज्वल फेन-सा माखन है!' मैया स्वयं कहाँ देख रही है। वह तो मुख घुमाकर अपने नीलमणि के मुख को देखने में लगी है। हाथ रज्जु खींच रहे हैं।

'दूध!' कन्हाई ने एक हाथ मैया के कपोल पर रख दिया है। यह इस समय कुछ देखने और सुनने को प्रस्तुत नहीं। इसे तो बस, दूध पीना है।

'तू तनिक रुक तो ! अभी माखन लौंदा बन जायगा ! जानता है, माखन कैसे फेन से लौंदा बनता है ?' मैया को इसका यह आग्रहपूर्ण चन्द्रमुख, यह अनुरोध मुग्ध किये है; वह इसी का रस ले रही है। वैसे उसका वात्सल्य तो कब से वक्ष से उज्ज्वल बिन्दुओं में वस्त्रों को आर्द्र कर रहा है। मोहन उसी पयका तो भूखा है। इतना प्रेमपूर्ण पय--कब से वह क्षरित हो रहा है ! कन्हाई का आग्रह अपने स्वत्व के लिये ही है।

'दूध ! दूध दे !' यह मैया क्यों अङ्क में लेकर दूध नहीं पिलाती। यह तो दही मथने में लगी है। श्यमसुन्दर कब तक प्रतीक्षा करता रहे। दधिभाण्ड में घूमता यह मन्थनदण्ड ! लो अब मथो ! इसने तो हाथों से घूमती मथानी पकड़ ली। मैया के कर स्वतः शिथिल हो गये मोहन को मथानी पकड़ने बढ़ते देखकर। इन्दीवरश्याम अङ्ग पर कुछ दधि के सीकर शोभित हो गये हैं और यह मथानी पकड़कर अब मैया के मुख की ओर देख रहा है। इसके नेत्र कहते हैं—'अब तो दूध पिलायेगी।

मैया के अधरों पर हास्य आया। उसका यह कृष्णचन्द्र कितना हठी है। रज्जु छूट गयी। अङ्क में लेकर अञ्चल से ढककर वह दूध पिलाने लगी है। कनूँ दूध पी रहा है। सम्पूर्ण शरीर शिथिल करके, अर्धोन्मीलित लोचनों से दूध पीने में तन्मय है। मैया एकटक देख रही है इसके चन्द्रमुख को।

× × × ×

'अरे दूध उफन रहा है !' सहसा मैया की दृष्टि सम्मुख गयी। अग्नि में दूध के गिरने की गन्ध ने ध्यान न दिलाया होता तो सारा ही दूध उफन गया था। यह पद्मगन्धा का दूध, आज तो यही इतना दूध है और कान्ह दूसरा दूध पीता भी कहाँ है। यह दूध उफन जाय तो श्याम भूखा रह जायगा ! मैया के मस्तिष्क में एक लहर-सी आयी। झटपट कृष्णचन्द्र को भूमि पर रक्खा उसने अङ्क से और दौड़ी दूध उतारने।

श्याम दूध पी रहा था। अभी यह तृप्त नहीं हुआ और मैया इस प्रकार इसे भूमि पर बिठाकर भाग गयी ! देखने ही योग्य है यह छटा। रोष के कारण नेत्रों में अश्रु आ गये हैं। अधर—पतले, लाल अधर फड़कने लगे हैं। उठकर खड़ा हो गया है। इधर-उधर देख रहा है—देख रहा—क्या करे ! कुछ करना है—करना ही है ! बड़ा रोष है, क्यों मैया छोड़ गयी !

यह समीप एक पत्थर पड़ा है ! यह पत्थर—यह तो दधिभाण्ड को इधर-उधर लुढ़कने से रोकने के लिये, टेक लगाने के लिये रक्खा गया है। मोहन दोनों हाथों से बैठकर उठा रहा है इसे। पत्थर उठा तो लिया इसने। मुख अरुणाभ हो चला है, भाल पर स्वेदकण आ गये हैं। यह तो पत्थर लिये खड़ा भी हो गया है।

'भड़ाम् !' लो दधिभाण्ड तो फूट गया ! दही फैल गया—फैल गया भूमि पर चारों ओर !

'मैया मारेगी !' सम्भवतः अब यह बात ध्यान में आयी है। इधर-उधर देख रहा है, कहाँ जाय, किधर भागे, कहाँ छिपे ? वह क्या खुला हुआ द्वार दीखता है गोरस-भंडार के कक्ष का ! श्याम के छिपने के लिये यह क्या कम स्थान है।

इतना नवनीत छीकों पर लटक रहा है, यह ऊखल भी पड़ा है और ये बिचारे कपि—ये कूँ-काँ, चीं-चाँ करते माखन माँग रहे हैं। इस कक्ष का उपवन की ओर का द्वार भी आज खुला रह गया है। ये कपि तो श्याम को देखते ही घेर लेते हैं। ये तो कक्ष में आ गये।

'मैया आती होगी !' भय तो है; किंतु ये कपि माखन माँग रहे हैं और यह सम्मुख माखन के छीके लटक रहे हैं। कन्हाई से कोई कुछ चाहे और उसे निराश होना पड़े—ना, ऐसा तो कभी नहीं हुआ, कभी हो नहीं सकता। कपि माखन चाहते हैं, इन्हें तो अभी नवनीत देना ही है। यह चढ़ा कनूँ ऊखल पर। यह पकड़ा उसने बायें हाथ से छीका। यह पात्र टेढ़ा हुआ और यह उज्ज्वल, कोमल माखन का लौंदा—धन्य हैं ये कपि !

× × × ×

'अच्छा, इतना रोष है इसे।' मैया हँस पड़ी फैला हुआ दही देखकर। दूध उतारने और उसे जल के छींटे से शान्त करने की व्यग्रता में उसने भले दधिभाण्ड के फूटने के शब्द पर ध्यान न दिया हो, पर भाण्ड के ये टुकड़े—ये तो स्वयं अपनी कथा कह रहे हैं। उस नट-खट ने अपना रोष यहाँ उतारा है। 'लेकिन गया कहाँ ?' ये क्या दधि में सने नन्हे चरणों के चिह्न बने हैं। ये चिह्न—इन्हें बनाता वह चपल उस कक्ष की ओर गया ! मैया ने एक वेत्रयष्टि उठायी—बालक बहुत बिगड़ता जा रहा है, उसे तनिक भय दिखाये बिना सुधार नहीं होगा।

कान्ह ऊखल पर खड़ा है। इसके मृदुल चरण दधि से उज्ज्वल हो गये हैं और अरुणिमा उज्ज्वलता में से झाँक रही है। बायें हाथ में छीका पकड़े, दाहिने से नवनीत निकालता जा रहा है। माखन के लौंदे—श्याम फेंकता है और कपि उछलकर ले लेते हैं। यह चपलचपल नेत्रों से द्वार की ओर देखता भी जाता है—कहीं कोई आता न हो। मैया देख रही है, छिपकर देख रही है अपने इस माखन-चोर को। 'गोपियों के उलाहने ठीक ही हैं ! यह बहुत ऊधमी होता जा रहा है ! मैया छड़ी लिये, दबे पैर, धीरे-धीरे आ रही है।

'मैया, छड़ी लिये मैया !' कनूँ की दृष्टि पड़ी, यह छीका टूटा, यह कूदा ऊखल से और भागा उपवनवाले द्वार से बाहर को। कपियों को भी कदाचित् श्याम का भागना आनन्ददायक लगा, कौन जाने मैया को छड़ी लिये आते देख ये सब भी डर गये हों। सब किलककर कूद गये और अब वृक्षों पर उछलने और किलकारियाँ मारने लगे।

'चल तू !' आज मैया बहुत रुष्ट है। मोहन को यह छोड़ेगी नहीं। श्याम भाग रहा है। पीछे तनिक मुड़कर देख लेता है और दौड़ रहा है। मैया छड़ी लिये पीछे उसे पकड़ने को दौड़ी आ रही है। ये नन्हे चरण, यह चञ्चल कनूँ—मैया इसे कैसे झट से पकड़ ले। यह तो इधर-उधर मुड़ जाता है, वृक्षों के चारों ओर घूमता है; किंतु मैया पकड़ेगी ही। उसके मुख पर आज निश्चय और कठोरता है। कन्हाई अब तक हँस रहा था, एक क्रीड़ा थी यह भी; पर अब सम्भवतः सचमुच डरने लगा है। यह कमलमुख अरुणाभ हो चला है। अब भी यह दौड़ ही रहा है।

मैया दौड़ रही है ! भला, मैया कभी क्यों दौड़ी होगी। आज वह श्याम को पकड़ने के लिये दौड़ रही है। श्याम—भले युग-युग की तपस्या से परिपूत मन इसे न पकड़ पावे, भले साधन-परिशुद्ध चित्त इसकी छाया को छूने में भी असमर्थ रहे; किंतु मैया तो पकड़ेगी ही। आज अपने पुत्र को पकड़ने के लिये कृतसंकल्प है यह और दौड़ रही है। कबरी खुल गयी है, केशपाश अस्तव्यस्त हो गये हैं, उनमें गुम्फित सुमन भूमि पर झरते जा रहे हैं, मस्तक का वस्त्र कंधे तक आ गया है, कुण्डल उछल-कूद कर केशों में उलझ गये हैं। भाल पर बड़ी-बड़ी बूँदें झलमल करने लगी हैं। श्वास की गति बढ़ गयी है। मैया दौड़ रही है—श्याम को पकड़ने को दौड़ रही है—'चल तू !'

मोहन के चरण शिथिल हो रहे हैं। मुड़ मुड़कर मैया के मुख की ओर देखता जाता है। 'जननी को मैंने इतना थका दिया, इतना क्लेश दिया।' कौन जाने यह दया उमड़ी है, कौन जाने मैया के अरुणाभ गम्भीर मुख एवं कठोर भ्रुकुटि के भय ने इसकी गति को शिथिल कर दिया है ! ये सुकुमार पद—कहाँ तक दौड़ सकता है यह, थक गया होगा ! अब तो मैया पकड़ ही लेगी। अब गति शिथिल हो गयी है। अरे, यह तो रोने लगा ! रोते-रोते खड़ा हो गया। दोनों करों से विशाल लोचनों को मलता, हिचकियाँ लेता, अञ्जन को कपोलों पर फैलाता, यह मोहन रो रहा है ! श्याम रो रहा है ! बड़े-बड़े बिन्दु टप-टप टपकते जा रहे हैं कमल-नेत्रों से।

'चल, आज तुझे बताती हूँ ! बड़ा ऊधमी हो गया है तू !' हाय, हाय ! मैया इतनी कठोर कैसे हो गयी ? यह तो डाँटती ही जा रही है। श्याम का एक कर पकड़ लिया है इसने और उपवन से कक्ष की ओर लिये जा रही है। छड़ी स्वतः उसके हाथ से गिर गयी है। कन्हाई इतना भीत है, मैया कैसे यष्टि लिये रह सकती है; किन्तु यह गोद में लेकर पुचकारती क्यों नहीं ? यह तो डाँटती ही जा रही है। श्याम रो रहा है। हिचकियाँ ले रहा है ! एक शब्द भी बोलने में समर्थ नहीं ! लोग कहते

हैं, सबको इसके स्मरण से ही अभय—शाश्वत अभय प्राप्त हो जाता है! इसके भय से महाकाल भी काँपता है; किंतु रो रहा है यह। बहुत भयभीत है! मैया पकड़ लिये जा रही है। बहुत रुष्ट है, पता नहीं क्या दण्ड दे। और कोई छुड़ा नहीं देता! कोई छुड़ाने में समर्थ नहीं! मोहन हिचक-हिचक कर रो रहा है!

× × × ×

'तू इसी ऊखल पर चढ़कर चोरी करता था न; ले, मैं तुझे इसी से बाँध देती हूँ! अब कर चोरी! अब करना उत्पात!' श्याम रो रहा है, कभी चोरी न करने की बात कह रहा है। आर्त नेत्रों से इधर-उधर देख रहा है—कोई तो छुड़ा दे! कोई सहायता करे! मैया तो आज सुनती ही नहीं। आज कठोर हो गयी है यह। अपनी वेणी की सुकोमल रज्जु से यह तो सचमुच ही मोहन को बाँधने जा रही है।

'चल, खड़ा हो यहाँ!' इसने कन्हाई को ऊखल से सटाकर खड़ा कर दिया। ये दासियाँ—ये कुछ कहना चाहती हैं, ये गोपियाँ—इन्हें कुछ प्रार्थना करनी है, मैया के आज-जैसे कठोर भाव को तो जीवन में कभी किसी ने नहीं देखा। व्रजेश्वरी रुष्ट भी होती हैं—ये रोष करना भी जानती हैं—किसी ने सोचा ही नहीं था कभी। यह कठोर दृष्टि—साहस नहीं होता किसी को बोलने का। मैया—मैया के हृदय की व्यथा क्या कम है? यह उसका नीलमणि हिचकियाँ भर रहा है, कमल-लोचन लाल हुए जा रहे हैं, अश्रु टपटप गिर रहे हैं, अञ्जन फैल गया है—मैया क्या नहीं देखती यह सब? पर—पर नीलमणि बहुत बिगड़ता जा रहा है। अधिक मोह से बालक का भविष्य बिगड़ेगा। आज इसे तनिक दण्ड देना है! मैया ने आज दण्ड ही देना स्थिर कर लिया है। उसने अपने अधर दाँतों से रोष के कारण दबा लिये हैं या हृदय को—उमड़ते हृदय को दबाने के लिये—यह वही जानती है।

यह रस्सी तो छोटी पड़ गयी। अधिक नहीं, दो ही अंगुल तो छोटी पड़ी है यह। चार-छः अंगुल की एक रस्सी और जोड़ दी और पूरी हो जायगी। मैया ने वेणी से दूसरी रज्जु निकाली।

'यह तो अब भी छोटी हो रही है! वही दो अंगुल छोटी। कहीं अवश्य उलझ गयी होगी।' मैया ने तीसरी रज्जु भी निकाली। उसकी वेणी की तीनों रस्सियाँ लग गयीं और यह दो अंगुल का अन्तर बना ही है। पता नहीं कहाँ ये रस्सियाँ उलझती जा रही हैं। श्याम को छोड़ा नहीं जा सकता। इतनी कठिनता से यह पकड़ में आया है, अब भयभीत है, छूटने पर भागेगा और कहीं गिर पड़ा तो.....?

'नन्दरानी, ऐसा भी क्या माखन का मोह हुआ है तुम्हें! देखो न, नीलमणि कितना रो रहा है! कितना भयभीत है!' यह गोपिका कब तक अपने को रोके रखे। श्याम का यह रुदन, यह कातर भाव—हृदय फटा जा रहा है। 'हमारे घर भी तो यह उत्पात करता है, भाण्ड फोड़ता है, नवनीत लुटाता है.....।'

'तुम्हीं सबोंने तो इसे बिगाड़ दिया है!' मैया ने तो बिचारी को बोलने ही नहीं दिया! मैया के इस स्वर की फटकार पाकर कौन बोलने का साहस करे? बोलने से व्रजेश्वरी का रोष भड़केगा। ये और ताड़ना करेंगी श्याम की इस आवेश में। यह समय प्रतिवाद करने का नहीं है!

'लो, जब बाँधना ही है तो इससे बाँध दो!' रोष के मारे यह व्यङ्ग पूर्वक मोटी सी मन्थन रज्जु ले आयी है। हैं! मैया ने तो सचमुच ले लिया इस रज्जु को। यह क्या इससे बाँध देगी सुकुमार कन्हाई को?

'तुम सब मेरा मुख क्या देखती हो! रस्सियाँ लाओ! मैं आज इसे बाँधकर छोड़ूँगी!' बेचारी दासियों पर व्यर्थ पड़ी यह फटकार! मैया को लगता है, उसका यह पुत्र बड़ा नटखट है। रोते-रोते भी यह पता नहीं कैसे, कहाँ रस्सियों को उलझा देता है। यह मन्थन-रज्जु भी छोटी पड़ गयी और वही कुल दो अंगुल छोटी—कैसी बात है यह!

दासियाँ रज्जुओं का ढेर ले आयी हैं। मैया एक-पर-एक जोड़ती जा रही है। 'यह क्या हो रहा है?' श्याम मोटा नहीं हुआ है, ऊखल बड़ा नहीं है, कोई रस्सी छोटी हुई नहीं दीखती कोई कहीं उभली भी नहीं दीखती! इतनी गाँठें, इतनी रस्सियाँ जोड़ी गयीं और यह दो अंगुल का अन्तर? यह तो पूरा ही नहीं होने को आता। मैया एक रस्सी उठाती है, जोड़ती है, बाँधने का प्रयत्न करती है—'यह तो अब भी दो अंगुल छोटी है!' कैसा है यह दो अंगुल? मैया बड़े आश्चर्य में पड़ गयी है।

ये गोपियाँ मुख फेरकर मुस्करा रही हैं। इनके नेत्र कहते हैं—'और बाँधो! और बाँध लो नीलमणि को! हम तो कब से कह रही हैं कि इसे छोड़ दो! पर नहीं मानना है तो बाँधो!' मैया यह स्मित देखती है, समझती है। वह भी खीझ गयी है—बाँधेगी—बाँधकर रहेगी इसे! देखें कहाँ तक यह नहीं बँधता!

मैया एक रस्सी उठाती है, जोड़ती है, बाँधना चाहती है—'यह भी दो अंगुल छोटी है!' फिर रस्सी उठाती है, फिर जोड़ती है—वही दो अंगुल! मैया का शरीर श्रान्त हो गया है। मुख स्वेद-बिन्दुओं से भर गया है। वह अब रस्सियों को उठाने में भी श्रम अनुभव करने लगी है। सम्मुख की रस्सियों की ढेरी समाप्त हो गयी। मैया थक गयी—बहुत थक गयी। मोहन—मोहन देखता है, मैया बहुत थक गयी।

सम्मुख रस्सी नहीं है! वेणी में रज्जु अभी है—अग्रिम केशों में सुमन गुम्फित करनेवाली रज्जु—अरे, यह कान्ह तो इसी एक ही रज्जु से बँध गया। 'मैंने अपनी आतुरता में देखा ही नहीं, रज्जु-पर-रज्जु जोड़ती गयी!' मैया को कोई समाधान नहीं करना है। कन्हाई को बाँधकर रज्जु में ऊखल के दूसरी ओर ग्रन्थि दे दी इसने कि यह नट-खट खोल न ले।

'आज इसे ऐसे ही बँधा रहने दो! कोई खोलना मत! कोई भी मत खोलो!' मैया ने तो सबको धमका दिया। दासियों और गोपियों को हटा दिया। बालकों को मना कर दिया है और ये बालक चाहें भी तो ग्रन्थि खुलने से रही इनके नन्हे करों से। मैया तो चली गयी दूसरे कक्ष में। वह आज श्याम को धमकाना चाहती है। कन्हाई को रोता छोड़कर चली गयी वह।

× × × ×

'दाऊ! भद्र! तोक!' श्याम रो रहा है, रोते-रोते पुकार रहा है यह—आज नन्हे तोक तक को पुकार रहा है, कोई आवे, कोई इस बन्धन से छुड़ा दे! योगीन्द्र-मुनीन्द्र इसे निखिल बन्धनों का मोचक कहते हैं, लोग अनादि बन्धन से त्राण के लिये इसे पुकारते हैं और आज मैया ने उसी को ऊखल में बाँध दिया है! अब यह पुकार रहा है! पुकार रहा है और कोई इसको बन्धनमुक्त करने वाला नहीं।

'दाऊ!' दाऊ यदि सचमुच होता! वह बल—अपने अनुज को इस प्रकार रोते और बँधे देखकर वह क्या इस रज्जु या ऊखल को गिनने लगा था। कितना था यह ऊखल उसके लिये! पर कहीं मैया उसे डाँट दे? दाऊ कभी मैया की बात तो टालता नहीं।

'भद्र!' भद्र हठ कर ले—मैया, बाबा—कोई भी भद्र को डाँट नहीं सका। भद्र रूठ जाय—उसे मनाना सरल नहीं है। भद्र का अनुरोध कौन टाल देगा! पर क्या ठिकाना—नटखट भद्र कहीं ताली बजाकर उलटे चिढ़ाने लगे?

'तोक!' भला नन्हा तोक क्या करेगा? आज न दाऊ है, न भद्र और न तोक। वे सब तो यज्ञ देखने गये हैं यहाँ तो थोड़े-से बालक हैं; पर यह समय क्या इतना सब सोचने का है। श्याम पुकार रहा है—फिर भी पुकार रहा है। यह तोक—तोक को क्यों पुकारता? तोक क्या करेगा? बेचारा तोक—श्याम को बँधा देखकर वह दोनों हाथों से पकड़ लेगा और रोने लगा।

'तोक!' अन्तरिक्ष में कोई अज्ञात महाशक्ति करबद्ध मस्तक झुका रही है—'देव, तोक यहाँ हो तो हो चुकी लीला! अपने तोक के नेत्रों में अश्रु देखकर यह भाव आपका टिक सकेगा? तोक नहीं है—लीला करनी है न आपको? लीला—हाँ, लीला ही तो! वे सम्मुख—द्वारके सम्मुख दीख रहे हैं अर्जुन के दो सटे हुए वृक्ष। ये यमलार्जुन—बेचारे यक्षराज कुबेर के ये पुत्र नलकूबर और

मणिग्रीव—युगों से आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। इनका यह तप—इनका तप, प्रतीक्षा सार्थक करनी है न दयामय ! ये बिचारे—क्या अपराध था इनका ! यौवन, सुरा, ऐश्वर्य, स्त्रियाँ और स्वच्छन्दता—ये जिन्हें उन्मत्त न कर दें, वह तो आपका कोई महान् कृपापात्र ही होगा। अपनी स्त्रियों के साथ अलका में ये नग्न जलक्रीड़ा कर रहे थे। उसी समय उधर से देवर्षि भटक पड़े और बस ! अपने लाड़ले देवर्षि को तो तुम जानते ही हो, कोई सम्मुख भर पड़ जाय—वह तुम्हारे चरणों तक फिर न पहुँचे—ऐसा कैसे सम्भव है। लज्जा के मारे स्त्रियों ने झटपट जल से निकलकर वस्त्र पहिन लिये। ये दोनों तो वारुणीपान से मत्त थे। खड़े-खड़े देखते रहे। इन्हें पता नहीं था कि नंग-धड़ंग खड़े हैं। न प्रणाम, न वन्दना—ऐसे खड़े थे कि जैसे देवर्षि इनके लिये कोई कौतुक की वस्तु हों। सो देवर्षि ने शाप दे दिया—'वृक्षों की भाँति तुम सब नग्न खड़े हो ! वृक्ष हो जाओ !' दण्ड से तो प्रेत भागते हैं, इनपर तो केवल मादकता थी। ये रोये, गिड़गिड़ाये। भला, कहीं नारद जी भी किसी पर अकरुण हुए हैं। उन्होंने तो शाप ही इनपर करुणा करके दिया था। इनकी प्रार्थना पर अपनी दया को स्पष्ट कर दिया। प्रभो, देवर्षि तुम्हारे परम प्रिय हैं ! उन्होंने इनको आशीर्वाद दिया है तुम्हारे स्पर्श का। इनकी तपस्या पूर्ण हो चुकी ! अब इनको परित्राण मिले ! देवर्षि की वाणी सार्थक हो !'

कौन जाने क्या बात है—इतना तो स्पष्ट है कि कन्हाई ने रोना बंद कर दिया है। इसने नेत्र पोंछ लिये हैं। अब हिचकियाँ, अश्रु, पुकार, सभी बंद हो गयी हैं। यह तो ध्यान से देख रहा है सम्मुख के उन सटे अर्जुनवृक्षों की ओर। कुछ सोच रहा है—सम्भवतः अपने छूटने का कोई उपाय। इस अपने छूटने में ही इन वृक्षों का छूटना भी है—होगा; कनूँ को तो इस समय स्वयं छूटना है और यह सोच रहा है। ध्यान से देख रहा है सम्मुख। सखा—पास के बालक ऊखल की रज्जु-ग्रन्थि खोलने में जुटे हैं, बार-बार असफल-प्रयास कर रहे हैं, इधर इस समय ध्यान कहाँ है इसका।

× × × ×

'कनूँ, यह रज्जु-ग्रन्थि तो खुलती नहीं !' बालक बड़े निराश हुए हैं। उनका सखा बँधा है और वे खोल नहीं पाते ! मैया ने मना किया है—वह असन्तुष्ट होगी—कहाँ सोचता है कोई; किन्तु ग्रन्थि जो नहीं खुलती। बारी-बारी से सबने अनेक बार प्रयत्न कर लिया। यह वेणी की तैलसिक्त रज्जु—बड़ी स्निग्धग्रन्थि पड़ी है। 'तू तनिक बल लगा; हम सब इस ऊखल को ठेलते हैं ! यहाँ से बाहर चले चलें तो फिर पाषाण से पीट-पीट कर रज्जु को तोड़ेंगे !' बात ठीक है, यहाँ खटपट करने से तो मैया के आ जाने की आशङ्का है ही।

'तुम सब एक ओर हो जाओ ! ऊखल को गिराकर लिटा देना है !' श्याम ने समझाया और सखाओं ने साथ दिया, यह ऊखल गिरा भूमि पर कन्हाई घुटनों के बल हो गया है। इसने दोनों कर भूमि पर रख दिये हैं। 'तुम सब धीरे-धीरे ठेलो इसे !' श्यामसुन्दर की कटि से ऊपर रज्जु बँधी है ! यह दामोदर—हाँ, आज यह दामोदर हो गया और अब हाथ और घुटनों के सहारे ऊखल घसीटे लिये जाता है। सखा पीछे से अपने कोमल करों से बल लगाते हैं। ये सुकुमार वर्ष डेढ़वर्ष के बालक—ये ऊखल ठेलते हैं—ऊखल ठेलते हैं और परस्पर एक दूसरे को सावधान करते जा रहे हैं कि कोई वेग से बलपूर्वक न ठेले ! श्यामसुन्दर सम्मुख है ऊखल के, तनिक-सा अन्तर है, कहीं ऊखल वेग से लुढ़के.....जैसे ऊखल इन्हीं के ठेले लुढ़क रहा है। इन्हीं के ठेले तो लुढ़क रहा है। इतना सुकुमार श्याम क्या ऊखल खींच लेगा ?

'ये दोनों अर्जुन के वृक्ष हैं न; इन्हीं के पास चलो ! मैं दोनों वृक्षों के मध्य से उसपार निकल जाऊँगा और ऊखल अटक जायगा ! तब बल लगाकर खींचेंगे रज्जु को !' कन्हैया है तो बड़ा चतुर। इसे युक्तियाँ बहुत आती हैं। वृक्षों में ऊखल अटक जाय तो खींचने पर रज्जु सम्भवतः टूट जायगी। सबको लिये श्याम ऊखल खींचता वृक्षों की ओर चला जा रहा है। ऊखल के घसीटने से एक चौड़ी रेखा बनती जा रही है पीछे।

अच्छा, मोहन तो निकल गया दोनों वृक्षों के मध्य से उस पार। ऊखल को टेढ़ा करके वृक्षों में फँसा दिया है इसने 'तुम सब कुछ पीछे तो हटो! कहीं रज्जु टूटी तो ऊखल धम्म से पीछे गिरेगा और लुढ़क जायगा!' हाँ, यह आशङ्का तो है ही। सखा ऊखल छोड़कर हट गये हैं पीछे। कन्हाई तो मुड़कर अपने दोनों कर अर्जुन वृक्षों पर इधर-उधर रखकर बलपूर्वक खींचने लगा है।

'अ र् र् धड़ाम!' बालक चौंक कर पीछे भागे! पक्षियों ने चीत्कार किया और आकुल से गगन में उड़ने लगे! पशु कूदे, चिल्लाये, पूँछ उठाकर भागे इधर-उधर। यह वज्रघोष--क्या हुआ? इतना भयङ्कर शब्द--सभी चौंक पड़े। वृक्षों की जड़ें हिलीं, शाखाएँ काँपीं, पत्ते अस्त-व्यस्त हुए और वे गिरे--भयङ्कर शब्द के साथ उनमें से एक एक ओर और दूसरा दूसरी ओर गिर गया! श्यामसुन्दर को, बालकों को बचाकर जैसे किसी ने उन्हें दोनों ओर ठेल दिया है।

'ये कौन? ये कौन हैं?' बालक वृक्षों के गिरने के शब्द से ही भयभीत हैं और उसपर ये वृक्षों के मूल से दो तेजोमय पुरुष कौन निकल पड़े? प्रज्वलित अग्नि के समान अङ्गकान्ति, ज्योतिर्मय आभरण एवं दिव्य मुकुट-कुण्डल--बच्चे स्तम्भित खड़े रहे—खड़े रह गये देखते। 'अरे, ये तो हाथ जोड़ कर, भूमि पर लोटकर कन्हैया को प्रणाम कर रहे हैं, दोनों ही!'

वृक्षमूल से निकले दोनों देवताओं ने ऊखल में रज्जु से बँधे दामोदर के सम्मुख लेटकर प्रणिपात किया, घुटनों के बल हाथ जोड़कर, मस्तक झुकाकर बैठ गये। दोनों के अपलक नेत्र प्रेमाश्रु की झड़ी लगाये हैं। दोनों के शरीर रोमाञ्चित हो रहे हैं। दोनों गद्गद कण्ठ से स्तुति कर रहे हैं--'श्रीकृष्ण! योगेश्वर प्रभु! आप ही आदि परम पुरुष हैं। यह व्यक्त एवं अव्यक्त जगत् भी आपका ही स्वरूप है, इसे ब्रह्मवेत्तागण जानते हैं। केवल आप ही समस्त प्राणियों के शरीर इन्द्रिय एवं आत्मा के भी स्वामी हैं और आप ही कालस्वरूप तथा अविनाशी, सर्वेश्वर भगवान् विष्णु हैं। सत्व, रज एवं तमोगुणमयी सूक्ष्म प्रकृति और महत्तत्त्व आप ही हैं और आप ही प्रकृति के समस्त क्षेत्रों में उसके विकारों के वेत्ता--साक्षी, उन क्षेत्रों के अध्यक्ष पुरुष भी हैं। हमारे समीप जितने भी ग्रहण करने के साधन हैं, उनसे आप ग्रहण होते नहीं। प्रकृति एवं उसके समस्त गुणों से आप परे हैं, अतः अनादिसिद्ध, अपने ही दिव्य गुणों से आवृत आपको कौन जान सकता है।' प्रकृति एवं उसके सब गुण, उन गुणों से उत्पन्न अनन्त शरीर और उन अनन्त शरीरों के साक्षी, अध्यक्ष जीव तथा सब में स्थित अन्तर्यामी--ये सब जिसके रूप हैं, जो इन सबसे परे पुरुषोत्तम है, जो इनमें के सब गुणों से तटस्थ एवं निखिलदिव्यगुणगणैकधाम है, उस सर्वरूप, अरूप आनन्दघनैकरूप को कोई कैसे जान सकता है। बुद्धि कैसे समाधान पाये उसके विषय में।

'आप उस सर्वज्ञ भगवान् वासुदेव को हम नमस्कार करते हैं। अपने ही प्रकाश से गुणों को प्रकाशित करके उन गुणों से ही आच्छादित ब्रह्मस्वरूप आपको हमारा नमस्कार। जिस अशरीरी के अवतार विभिन्न देहों में उन-उन शरीरों के लिये असामान्य पराक्रम के द्वारा व्यक्त हो जाते हैं—अर्थात् विभिन्न शरीरों से जो अशरीरी अवतार धारण करके अतुलनीय लोकोत्तर शौर्य व्यक्त करके अपने अवतार-विग्रह के महत्त्व को प्रकट करते हैं, वही आप सम्पूर्ण कामनाओं के दाता समस्त लोकों को अभय देकर उनका कल्याण करने के लिये इस समय अपने अंश के साथ अवतीर्ण हुए हैं।' पता नहीं क्या क्या कहते रहे वे देवता। उनकी वाणी गद्गद, नेत्र अश्रुपूर्ण, अञ्जलि बँधी, मस्तक झुका और वे स्तुति करते रहे—

'परम कल्याणस्वरूप प्रभु, आपको नमस्कार! परम मङ्गलमय, नमस्कार! शान्तस्वरूप यदुवंश के स्वामी वासुदेव, आपको नमस्कार!' जिनका परमकल्याण—परममङ्गल अभी हुआ है, वे इस श्याम को कल्याणरूप, मङ्गलमय तो कहेंगे ही; पर यह शान्त—इस समय अवश्य शान्त हो रहा है; पर कितना शान्त है यह—गोकुल में सब जानते हैं।

'विभु, हम आपके अनुचर यक्षराज के किंकर हैं। आप हम अपने दासानुदासों को आज्ञा दें! हमारा बड़ा सौभाग्य है, देवर्षि नारद ने बड़ा अनुग्रह किया हम पर। यह उनकी असीम

कृपा का ही फल है कि हमें आपके दर्शन हुए। हमारी वाणी आपके गुणगान में, हमारे श्रवण आपके मङ्गल-चरितों को सुनने में, हमारे हाथ आपकी सेवा के कर्म में, हमारा मन आपके श्रीचरणों के चिन्तन में, हमारा मस्तक आपके निवासभूत जगत् को प्रणाम करने में और हमारे नेत्र उन महा-पुरुषों के दर्शन में लगे रहें, जो आपके साक्षात्स्वरूप ही हैं।' बार-बार प्रणाम किया दोनों देवताओं ने और अन्त में तो साष्टाङ्ग इस प्रकार पड़ गये कि जैसे इन्हें अब उठना ही नहीं है।

'मुझे पहले ही पता लग गया था कि परमदयालु देवर्षि ने तुम लोगों पर कृपा करके ही ऐश्वर्य-मद से मत्त तुम्हें च्युत होने का शाप दिया था। जो समदर्शी साधु हैं, विशेषतः जिनका चित्त मुझमें लगा है, उनके दर्शन से किसी को बन्धन की प्राप्ति हो ही नहीं सकती। कहीं सूर्य भी पुरुषों के नेत्र को अन्धकार से बाँध सकता है। संसार में मुझ में भाव हो जाना ही परमकल्याण है और यही सबका परमेप्सित है, वह तुम लोगों को प्राप्त हो गया। अब तुम लोग यहाँ से शीघ्र अपने घर चले जाओ! झट-पट चले जाओ अब!' श्याम बहुत शीघ्रता में है। कुछ क्षण—कुछ क्षण ही लगे हैं इन देवताओं को स्तुति करने में, किंतु इतने बड़े वृक्ष गिरे—मैया, गोपियाँ, गोप, बाबा, सब आते होंगे—सब दौड़े आते होंगे। ये झट से चले जायँ तो अच्छा। लेकिन ये देवता—ये तो बार-बार परिक्रमा करते हैं, बार-बार प्रणिपात करते हैं, फिर-फिर आज्ञा माँगते हैं! इस श्यामसुन्दर के समीप से जाने को किसका जी चाहता है। यह आज्ञा दे रहा है! आग्रहपूर्वक आज्ञा दे रहा है—जाना ही पड़ेगा उन्हें!

× × × ×

'क्या हुआ? कहाँ वज्रपात हुआ?' गोपों ने तो समझा, अवश्य कहीं वज्र ही गिरा है। इतना भीषण शब्द—इतने विशाल तरु एक साथ गिरे—दौड़ते हुए आये वे। उपवनद्वार के पास शब्द हुआ! नारायण मङ्गल करें! बाबा के चरणों ने आज जैसे वायु की गति पा ली। वे दौड़े! वे सबसे आगे दौड़े! 'उपवनद्वार—बालक वहीं तो खेलते हैं प्रायः!' आशङ्काओं के लिये क्या कम अवकाश है।

'अरे, तू यहाँ कैसे आ गया?' बाबा ने देखा, उनका कृष्णचन्द्र कटि में रस्सी से बँधा है और रस्सी में बँधा है एक ऊखल। यह ऊखल का खींचने के प्रयत्न में है। इतनी दूर कदाचित् यही खींच लाया है और अब बाबा की ओर मुख उठाकर देख रहा है। बाबा को लगा, वृक्षों के गिरने के पश्चात् यह भी शब्द से आकृष्ट होकर यहाँ ऊखल खींचता आया है। यह हँसता, ऊखल खींचता कन्हाई! 'मैया ने बाँध दिया न तुझे?' बाबा को हँसी आ गयी। हँसते-हँसते कान्ह का उन्होंने खोल दिया और उठा लिया अङ्क में। यह दामोदर—इसकी कोमल कटि से ऊपर उदर के निम्न भाग में रज्जु की रेखा पड़ गया है चारों ओर!

'ये विशाल तरु—ये न जीर्ण हैं न खोखले हैं, गिरे कैसे ये? कोई आँधी भी नहीं आयी और वज्रपात भी नहीं हुआ!' गोपों ने देख लिया है कि श्यामसुन्दर सर्वथा सुरक्षित हैं; उसे आघात लगना तो दूर, डरा भी नहीं दीखता और अब वृक्षों के गिरने का कारण ढूँढ़े ही नहीं मिलता। सब बड़े आश्चर्य में हैं—'बहुत बड़ा उत्पात हुआ यह! किसी अमङ्गल की सूचना तो नहीं!'

'ये वृक्ष अपने आप कहाँ गिरे हैं! इस कनूँ को मारो, इसी ने दोनों वृक्षों के मध्य में ऊखल तिरछा करके फँसा दिया और फिर दोनों हाथों से दोनों पेड़ गिरा दिये ऊखल खींचते-खींचते!' ये बालक ही तो हैं। इनकी बातों पर कोई कैसे विश्वास कर ले; पर यह तो इस प्रकार कह रहा है, जैसे इसे कोई संदेह ही नहीं है। इसने स्वयं देखा है; कोई न माने तो यह क्या करे।

'हाँ, हमने वृक्षों से दो विचित्र पुरुष निकले देखे! वे सोने-जैसे चमकते थे। इस कनूँ को हाथ जोड़ते थे, प्रणाम करते थे! पता नहीं क्या-क्या कहा इससे उन्होंने और यह भी तो उनसे बातें करता था। वे दोनों तो उड़ गये, वहाँ ऊपर उड़ गये!' ये सब-के-सब बालक एक ही बात कहते

हैं। सोने-से तेजोमय, ऊपर उड़ जाने वाले—कोई देवता होंगे वे और तब क्या बालक सत्य कहते हैं? कुछ गोपों के मन में संदेह होने लगा है। कन्हाई के काम साधारण मनुष्य-शिशु से तो नहीं ही हैं?

'डर गये हैं ये सब! बच्चे हैं, पता नहीं क्या-क्या बकते हैं!' ये गोप किसी के संदेह को क्या सुनेंगे? इनके सम्मुख संदेह व्यक्त करके उपहास कौन कराये! इस समय इतना अवकाश भी किसे है। इतने बड़े वृक्ष गिरे, अकारण, अकस्मात् वृक्ष गिर पड़े—इतना भयङ्कर उत्पात हुआ! व्रजेश ने अपने कुलपुरोहित महर्षि शाण्डिल्य को बुलवाया है! ग्रहशान्ति होनी है! श्रीनारायण की आराधना—अर्चा होगी विधिपूर्वक और अब शीघ्रता से उसका आयोजन करना है। व्रजरानी, गोपियाँ,—सब तो अभी श्याम को ही देखने में लगी हैं।

कर्ण-वेध

"वदनेन्दुविनिर्जितः शशी दशधा देवपदं प्रपद्यते।
अधिकां श्रियमश्नुतेतरां तव कारुण्यविजृम्भितं कियत्॥"

—श्रीलीलाशुक

यमलार्जुन गिर गये और बालकों को एक खेलने का सुन्दर साधन मिल गया। यह कनू मानता ही नहीं, मैया बार-बार मना करती है, कहीं कोई गिर पड़े टहनियों में उलझकर—लेकिन कन्हैया तो सखाओं को लिये तरुओं के पास ही खेलता है। बड़े-बड़े विशाल तरु—खूब सघन डालियाँ हैं इनकी। इन शाखाओं पर कुछ तो चढ़ा ही जा सकता है। कोई शाखा पर चढ़कर झूलता है, कोई उसे हिलाता है। शाखाओं के मध्य में इधर-उधर भागने और छूने की क्रीड़ा भी बड़ी मजे की है।

बालक खेल में लगे सो लगे, इन गिरे वृक्षों के मध्य में खेलते ये झुंड-के-झुंड बालक—कनू सदा से नटखट है। इसे दूसरों से झगड़ना ही आता है। इसके दाव देने की बारी आयी और झगड़ना प्रारम्भ किया इसने। सखा इसे अपने खेल से पृथक् कर देते हैं तब तो गिड़गिड़ाता है, विनय करता है और फिर वही बात।

'कन्हैया, तू देखता है भला!' आँखमिचौनी में श्याम चुपचाप नेत्र बंद किये रहे, ऐसा कैसे हो। किसी की हथेली में इसके विशाल लोचन बंद होने से रहे और कोई बंद कर भी ले तो यह इधर-उधर करके देखे बिना क्या रह सकता है।

'सब-के-सब धूर्त हैं—व्यर्थ ही दोष देते हैं! कनू जब कहीं छिपता है, सब इसे देख लेते हैं। बिना देखे क्या इतनी शीघ्र सीधे इसी को पकड़ा जा सकता है। अब इसकी बार लड़ाई करने चले हैं!' यह बिगड़ा नन्हा तोक। अपने श्याम का पक्ष लेकर—बड़े भाई के लिये यह लड़ने आ गया है—सब से लड़ लेगा यह! कौन इसे समझा दे कि श्याम अँधेरे में छिप नहीं सकता। इसकी अङ्गकान्ति वहाँ बालकों को सूचना दे देती है। सखाओं का कोई दोष नहीं इसमें। यह किसी का तर्क सुनने को कहाँ उद्यत है। इसे कन्हाई ही तो सबसे अधिक मानता है—अब यह क्यों उसका पक्ष न ले।

'तू क्यों झगड़ता है! तुझे तो दाव देना नहीं है!' हाँ, तोक क्यों झगड़ता है। इसे तो कोई छूता नहीं। यह तो स्वयं जब दाव देना चाहे, तभी ठीक। कनू—सभी तो इससे स्नेह करते हैं। सबसे छोटा यह तोक—यह झगड़ रहा है।

'तुम सब यों ही किसी को दोष दोगे?' तोक क्यों न बोले। श्याम को सब दोष देते हैं और वह भी व्यर्थ ही। लेकिन अब यह झगड़ने लगा तो सबको इसकी माननी ही है। भद्र अभी इसके पक्ष में हो जायगा और फिर दाऊ—तोक की हठ तो रखनी ही है न।

× × × ×

श्याम सबको पुकार लेता है। भाई और भद्र को लेकर सबेरे गृहसे निकला और वही यमलार्जुन के समीप। माता रोहिणी पुकारते-पुकारते थक जाती है। इन सबों को न भूख का ध्यान और न प्यास का—खेल में लगे-सो-लगे। मैया ही आकर किसी प्रकार हाथ पकड़कर ले जाय तो जायँ। 'विलम्ब हो रहा है, कृष्णचन्द्र भूखा होगा! बहुत देर हो गयी दूध पिये!' मैया कितना पुकारे, कितनी बार दूसरों को भेजे, श्याम आने से रहा। मैया के स्वयं जाने पर भी कहाँ सब झट-पट आते हैं। कहीं दाऊ भगेगा और कहीं कन्हाई। दिनभर, धूप में भी सब खेलते रहते हैं। मैया का आग्रह कौन मानता है। इन सबों को वह पकड़े नहीं तो कदाचित् ये भोजन ही न करें और पता नहीं कितनी रात्रि तक खेलते रहें! सायङ्काल कनू कितना झगड़ता है—'अभी तो उजाला है!' कितने बहाने करने पड़ते हैं मैया को इसे ले जाने के लिये और तब भी सभी बालकों को साथ लेकर ही वह इसे ले जा पाती है।

× × × ×

कन्हैया नाक्षत्र मास से दो वर्ष पाँच मास का हो गया। अब उसका कर्ण-वेध संस्कार होना चाहिये। यह मैया के कुण्डल पकड़कर कबसे खींचता है और हठ करता है कि मैया अपने कुण्डल इसके कानों में पहिना दे।

'तेरे कानों में छिद्र नहीं हैं! छिद्र होने पर पहिना दूँगी! मेरे लाल का कर्ण-वेध होगा! यह कुण्डल पहिनेगा!' मैया समझाती है इसे।

'तू छिद्र कर दे अभी! मैं तो अभी पहिनूँगा!' मोहन को सदा शीघ्रता रहती है। मैया हँसती क्यों है? यह छिद्र कर क्यों नहीं देती?

'बाबा, तुम महर्षि को बुलाओ न!' जब मैया कहती है कि बाबा महर्षि को बुलायेंगे, पूजन होगा, तब छिद्र हो सकेगा, तो यह बाबा से ही क्यों न कहे। बाबा कहाँ दूर हैं, इसका भाग-कर उनकी गोद में पहुँचने में देर कितनी लगती है। अब यह बाबा के अङ्क में बैठकर उनकी दाढ़ी में अंगुलियाँ उलझाकर आग्रह कर रहा है—'तुम महर्षि को बुलवाकर पूजन करा दो! मैं कुण्डल पहिनूँगा कानों में!'

'अभी तो तेरे कान नन्हे-नन्हे हैं! तनिक बड़े हो जाने दे तो···!' बाबा समझाने के प्रयत्न में हैं।

'ना, मैं तो अभी पहिनूँगा!' यह हठी अपनी हठ छोड़ दे, ऐसा कैसे हो सकता है।

'शरद् ऋतु है, पवित्र मास है और शुक्लपक्ष भी है! श्यामसुन्दर ठीक ही तो आग्रह करता है।' महर्षि शाण्डिल्य सदा इसी का पक्ष लेते हैं। उनके मुहूर्त, विधान—सब इसके अनुकूल निकल आते हैं। अब वे कह रहे हैं कि बालकों का कर्णवेध-संस्कार तो तीसरे वर्ष लगने पर पाँचवें या सातवें मास में होना ही चाहिये। बाबा को तो आज्ञापालन करना है।

× × × ×

'श्याम का कर्ण-वेध होगा!' स्वर्णकार भी धन्य हो गया है। इसे नन्दनन्दन के कर्णवेध के लिये चाँदी की आठ अंगुल की सूई बनानी है। नन्ही-सी सूई—और इसका कार्य समाप्त होने को ही नहीं आता। विशुद्ध-विशुद्ध रजत—यह ओषधियों से रजत का शोधनक्रम चल रहा है। बार-बार ओषधि-पुट और बार-बार रजतद्राव। तीक्ष्ण-तीक्ष्णतम सूचिका, एक समान, उज्ज्वल, सुचिक्कण, जैसे चन्द्रमा की एक क्षीण किरण स्वर्णकार के हाथ में आ बैठी है और अब यह उसे उलट-पुलट कर देख रहा है।

'मुझे ही कन्हाई के कर्णोंपर लाक्षाद्रव से चिह्न करना होगा!' पता नहीं क्या-क्या सोचता है और यह पागल हो गया क्या? यह तो नाचने ही लगा है।

'मोहन के कर्णों में छिद्र करना होगा!' दुर्दशा तो है, बेचारे इन भिषग्-भूषणजी की। 'उन कोमल कर्णों में छिद्र! ये तो बच्चों की भाँति रो रहे हैं। भला, इसमें रोने की क्या बात है? जिसके कान छिदने हैं, वह तो रोता ही नहीं है।

'मेरे कानों में छिद्र होगा! मैं कुण्डल पहिनूँगा!' कन्हैया तो फुदक रहा है। यह तो उल्लास में है। अपनी कर्ण-पल्ली टटोलता है बार-बार और सबको दिखाता घूमता है। यह तो ऐसा कूद रहा है, जैसे कुण्डल कानों में ही आ गये हैं।

'तेरे ही कान थोड़े छिदने हैं!' भद्र कनूँ को चिढ़ा देता है समय-असमय—'दाऊ के छिदेंगे, मेरे छिदेंगे और तेरे तो सबसे पीछे छिदेंगे—सबसे पीछे!' नटखट भद्र अँगूठा दिखाकर कूदने लगा है।

'पहिले मेरे कानों में छिद्र होगा!' श्याम अब मैया से, बाबा से, सबसे अभी बात पक्की कर लेगा। कैसे पीछे रहे यह किसी से।

कन्हाई का कर्ण-वेध होना है। कल प्रातः अरुणोदय में ही तो यह मङ्गल-संस्कार प्रारम्भ होगा। स्वर्णकार, वैद्य, गोप, गोपियाँ—सब-के-सब व्यस्त हैं। आज सब प्रयत्न में हैं कि कल कनूँ को

कम-से-कम कष्ट हो। उसका मन तत्काल किसी ओर लग जाय। खिलौने, पक्षी, पशु—पता नहीं क्या-क्या एकत्र करने में जुटे हैं सब।

'श्रीकृष्ण के कल कर्णों में छिद्र होगा!' बाबा की दशा ही वर्णन से बाहर है। वे तो अभी से इतने आकुल हैं, जैसे उनके हृदय को ही विद्ध करने की बात है। ये कल कैसे अपने पुत्र को सम्हाल सकेंगे!

'नीलमणि कुण्डल पहिनेगा!' मैया को श्याम के कपोलों पर झलमलाते कुण्डलों की छाया का अभी से मानो साक्षात् होने लगा है। यह तो अपनी अद्भुत उमंग में है। उत्सव का आयोजन तो होना ही है। खूब धूम-धाम का उत्सव—बालकों का मन तत्काल ही दूसरी ओर लग जाय, यह परमावश्यक जो है।

× × × ×

महर्षि शाण्डिल्य विप्र-वर्ग के साथ प्रातःकृत्य करके सीधे नन्दभवन आ गये हैं। गणपति, नवग्रह, सर्वतोभद्र, षोड़श मातृका, योगिनी, दिक्पाल, कलश तथा रक्षा-सूत्र का पूजन तो हो चुका और अब बाबा पूजन कर रहे हैं अपने आराध्य का। नारायण अनुकूल हों! आज का यह कर्ण-वेध श्रीकृष्णचन्द्र के लिये मङ्गलमय हो।

आराध्य-पूजन के साथ ही तो विप्र, वैद्य और आज के कृत्य के प्रधान स्वर्णकार का भी पूजन करना है। पूजन तो करना है इस सोलह अंगुल के सूत्र में पिरोई आठ अंगुल की रश्मि के समान उज्वल सूचिका का भी और अब तो पूजन समाप्त होने पर है।

माता रोहिणी दाऊ को अङ्क में लेकर बैठ गयी हैं पश्चिमाभिमुख और मैया ने श्याम को अङ्क में ले रखा है। यह भद्र, यह तोक—सब के संस्कार व्रज में तो अब साथ-साथ ही चलने लगे हैं। न वैद्यों का अभाव है, न स्वर्णकारों का। जब ये बालक हठ कर रहे हैं कि पहिले उनका ही कर्णवेध हो, तो क्यों न सबका एक साथ ही हो जाय। महर्षि ठीक कहते हैं—'दाऊ का कर्णवेध पहिले होगा और अवश्य ही वह रोयेगा नहीं। दाऊ को देखकर बच्चों में दृढ़ता आयेगी, फिर श्याम के साथ ही सबके कर्ण-वेध हो जायँगे। महर्षि को तो एक ओर मुनि-मण्डली के साथ मन्त्र-पाठ करना है!'

कन्हैया अभी उमंग में है। सभी के हाथ में मोदक हैं। सब माताओं की गोद में हैं और यह कनूँ इधर-उधर देखकर सबको अपना मोदक दिखा रहा है और साथ ही आँखें भी मट-काता जाता है। आज तनिक सबसे बड़ा मोदक पा गया है यह और इसी से सखाओं को चिढ़ा लेना चाहता है।

बाबा ने सूई उठायी। इनके कर इस प्रकार क्यों कम्पित हो रहे हैं! दाऊ और श्याम के दक्षिण कर्णों से केवल सूचिका का स्पर्श ही तो कराना है इन्हें। यह सूचिकास्पर्श—बाबा को तो यह सूचिकास्पर्श कराना ही आतुर कर रहा है।

'लाल, तू कुण्डल पहिनेगा न?' वैद्यजी हैं तो परम चतुर। दाऊ ने अपनी कर्णपल्ली इन्हें हाथ से खींच लेने दी, पर क्या मोहन यों ही खींच लेने देता! बायें हाथ से कर्णपल्ली खींचनी है और जहाँ से सूर्यरश्मि पारदर्शी हो रही है पल्लियों में, ठीक उसी बिन्दु पर स्वर्णकार को लाक्षा-द्रव से चिह्न करना है। सभी बालकों के ये चिह्न हो जायँ तो एक साथ कर्णवेध हो जायगा।

'हो गया क्या?' कनूँ तो अपने कान टटोल लेना चाहता है। 'तनिक-सा कुछ शीतल लगा तो! अब ये वैद्यजी क्यों उसे कान छूने नहीं देते? मैया ही क्यों रोकती है?' मोहन की कर्णपल्लियों पर लाक्षाद्रव की नन्हीं बूँदें – इन्दीवरदल पर बीरबहूटी के शिशु जैसे रो रहे हों। यह लाक्षाद्रव—रक्त-सी अरुण ये बूँदें! बाबा ने तो नेत्र बंद कर लिये हैं। उनका सर्वाङ्ग स्वेद से स्नान कर चुका है।

कर्णवेध होगा—अब कर्णवेध ही तो होना है। वाद्यों की ध्वनि में गोपों के शब्द डूब गये हैं। अब गोपियों के मङ्गल-गान कैसे सुनायी दें। महर्षि ने स्वयं मुख से शङ्ख लगाया है और ये शत-

सहस्र शृङ्ग, शङ्ख—यह गगनभेदी जयघोष ! बालकों की रोदनध्वनि सुनायी नहीं पड़नी चाहिये। श्याम रोता हो—वैद्य क्या कर्ण-वेध में समर्थ हो सकते हैं।

'लाल ! देख तो, यह मयूर कितना सुन्दर नाचता है !' माता रोहिणी दाऊ को इस प्रकार दूसरी ओर आकर्षित करें या न करें, यह क्या रोने चला है। वाम हाथ से कर्णपल्ली खिंची, यह रहा दैवकृत नैसर्गिक छिद्र—सूचिका जैसे स्वतः प्रविष्ट हो गयी हो उसमें ! धागे को बाँधकर तैल लगा देने में तो सचमुच वैद्यजी के करों ने विद्युत् की गति दिखायी है। दाऊ अपने दक्षिण कर्ण को टटोलने चला है। यह वाम कर्ण—अच्छा वाम कर्ण भी सही !

× × × ×

'दाऊ के कानों में तो सूई चुभा दी वैद्यराज ने !' श्याम अपने अग्रज की ओर ही देखता रहा है एकटक। 'यह सूई, ना, मैं कान नहीं छिदवाऊँगा !' कौन इतनी बड़ी सुई कानों से पार होने दे।

'तू कुण्डल पहिनेगा न ! देख तो सही तू अपने कुण्डल !' मैया मनाने का प्रयत्न कर रही है। 'भद्र कुण्डल पहिनेगा और तुझे चिढ़ायेगा !'

'भद्र चिढ़ायेगा !' कन्हैया सशङ्क हो गया है। वह क्या चुने—भद्र का चिढ़ाना या कान में सूई चुभवाना ? 'दाऊ रोता नहीं है।' मैया ठीक कहती है। दाऊ तो नहीं रोता है, उसे दुखता तो अवश्य रोता। श्याम की पलकों में अश्रुबिन्दु उलझ गये हैं। यह कुछ सोचने लगा है।

'मैं अपने कुमार के कानों में ओषधि लगाऊँगा !' वैद्य जी तो कुछ मलने लगे हैं।

'इस ओषधि से छिद्र हो गया न !' कन्हाई प्रसन्न हो गया है। ओषधि से ही छिद्र हो जाय तो बहुत अच्छा।

'अभी हुआ जाता है ! तुम तनिक बताओ तो कि वह तुम्हारी सुनहली बिल्ली कहाँ छिपी है !' वैद्यजी ने सूई उठा ली है। मोहन बिल्ली देखने में लगा है। कहाँ भाग गयी इसकी बिल्ली ? अभी यहीं तो थी। कुछ हुआ--कुछ हुआ दक्षिण कर्ण में। एक चींटी ने धीरे से काट लिया ! उफ ! कन्हाई रोने लगा है ! मैया क्यों हाथ नहीं छोड़ती ? क्यों इसके पैर दबा रखे हैं इसने अङ्क में। मोहन व्याकुल हो उठा है। रो रहा है। 'नहीं, अब नहीं पकड़े रहा जा सकेगा !' मैया के कर लगता है छूट जायँगे। वैद्यराज ने तो अपने नेत्र वाम कर्णपल्ली पर एकाग्र कर दिये हैं।

'हो गया ! हो गया लाल !' मैया का आश्वासन श्याम कैसे सुन ले। वैद्य जी ने तो धागा बाँध दिया, तैल लगा दिया ! अब तो कान शीतल-शीतल लगता है। कन्हाई रोता जा रहा है—रोता ही जा रहा है !

'यह थनगन करता मयूर !' यह गोपिका मयूर सिखा लायी है।

'यह रत्न-सारिका बोलने लगी है मोहन !' रत्न-सारिका बोले या रोये, कन्हाई मैया के स्तन-पान को ही प्रस्तुत नहीं तो क्या खिलौने संतुष्ट कर देंगे इसे। आज कमलनयन बड़ी-बड़ी बूँदें गिरा रहे हैं। श्यामसुन्दर खीझ गया है। कष्ट की अपेक्षा मैया के पकड़े रहने से ही यह अधिक रूठा है।

'कृष्णचन्द्र, तू गोदान करेगा न !' बाबा क्या करें। श्याम रो रहा है--कन्हाई ! हृदय जैसे टुकड़े हो जायगा। 'गोदान करना है !' रुदन की गति तो कुछ रुकने लगी है। 'गोदान--गोदान तो करना ही है !' यह तनिक चुप होने लगा है।

'कनूँ, तोक रो रहा है ! तू चुप नहीं करायेगा इसे !' मैया का यह शस्त्र अमोघ है। 'तोक रो रहा है !' कन्हाई ने नेत्र स्वयं दोनों करों से पोंछ लिये और अब तो रोना भूल ही गया यह। इसका तोक--छोटा भाई तोक रो रहा है ! उसे चुप कराना है न ! यह न चुप कराये तो तोक क्या चुप होगा।

वैद्यराज को, स्वर्णकार को, विप्रों को नेग देना। नेग का यह क्रम आज ही कहाँ पूर्ण हुआ जाता है। वैद्यराज नित्य ओषधि का तैल लगायेंगे और यह बँधा धागा खुलेगा। हीरक-शलाका पड़ेगी कर्णों में और फिर कुण्डल—झलमलायेंगे इन नील कपोलों पर। लेकिन आज का नेग--आजका महोत्सव—कौन तुलना करे इनकी।

—❀○❀○❀—

गोकुल-परित्याग

"मणिनूपुरवाचालं वन्दे तं चरणं विभोः।
ललितानि यदीयानि लक्ष्माणि व्रजवीथिषु ॥"

—श्रीलीलाशुक

"श्रीकृष्णचन्द्र ही हम सबों का प्राण है, जीवन है और उसी के ऊपर ये उत्पात बार-बार होते हैं!" अर्जुन के इतने बड़े-बड़े वृक्ष अकारण गिर पड़े, गिरे भी तब—जब कि श्यामसुन्दर उनके मध्य में ही था। वृक्षों के गिरने का कोई कारण जाना न जा सका, तब इसे कोई महोत्पात के अतिरिक्त क्या समझे। औरों की तो और जानें, पर श्रीउपनन्दजी का हृदय आशङ्का से पूर्ण हो गया है। 'अब तक श्रीनारायण ने रक्षा की; पर यदि किसी दिन बालक को कुछ हो गया तो.....? कोई अन्त नहीं है उनकी चिन्ता का। रात्रि में एक पल के लिये उन्हें निद्रा नहीं आती।

'कंस अत्यन्त क्रूर है! पता नहीं क्यों उसने इस कुसुम-सुकुमार नन्हे कन्हाई से शत्रुता कर रक्खी है!' मथुरा की मन्त्रणाओं की बात गोकुल में छिपी तो अब है नहीं, भले उसे लोगों की मिथ्या आशङ्का मानकर कोई टाल दे; किन्तु अबतक जो व्रज में असुर आये हैं—पूतना तो कंस की सेविका थी ही, कौन जाने छकड़े के टूटने में भी किसी असुर का ही हाथ रहा हो। वह आकाश में एक राक्षस श्याम को लेकर उड़ा और फिर गिर पड़ा—वह तो पहिचाना नहीं जा सका, इस प्रकार छिन्न-भिन्न हो गया था; पर संदेह है कि मथुरा से ही वह भी आया होगा, और अब ये वृक्ष गिर पड़े—वृद्ध गोप तो इसमें भी कंस की ही दुष्टता का अनुमान करते हैं।

'मथुरा अत्यन्त निकट है! कंस कुछ-न-कुछ करता ही रहेगा!' उपनन्द जी के मनमें संकल्प उठने लगा है—'कहीं दूर रहना चाहिये यहाँ से!' कहाँ? अभी इसका उत्तर कहाँ दिया है मन ने। अभी तो इसपर मन्थन चल रहा है। श्रीनन्दराय व्रजपति सही, पर छोटे भाई ही तो हैं। सबसे ज्येष्ठ होने के कारण उपनन्दजी उन्हें सदा अपना स्नेह-भाजन बनाये रहे हैं। बड़ों को ही तो अधिक चिन्ता रहनी चाहिये परिवार, ग्राम, कुल की रक्षा के विषय में। दूसरे नन्दरायजी बहुत सीधे हैं, उनको तो अपनी ही चिन्ता नहीं रहती। उपनन्दजी ने ही तो सदा अपने छोटे भाई को सम्हाला है। आज गोकुल का जीवन-सर्वस्व संकट में दीखता है—उपनन्दजी के नेत्रों में निद्रा कैसे टिक सकती है।

कन्हाई का कर्णवेध है, इतना बड़ा महोत्सव है गोकुल में, दूर-दूर के गोष्ठों के अधिपति आये हैं; पर उपनन्दजी—गोकुल के वे सर्वश्रेष्ठ, सर्वमान्य वयोवृद्ध—आज उनका पता ही नहीं है। वे कहीं चले गये हैं। श्रीनन्दरायजी से भी उन्होंने केवल जाने की सूचना दी है, कारण नहीं बताया है।

किसी विचार को सर्वाङ्गरूप से शोधकर, उसके प्रत्येक अङ्ग की परीक्षा करके और उसके परिणाम के सम्बन्ध में प्रस्तुत होकर ही उपनन्दजी कभी कुछ बोलते हैं। जो चिन्ता है, जो प्रश्न है—वह केवल दूसरों को सूचित करने से तो टल नहीं जायगा। व्रज के ये सहृदय सरल गोप—इन्हें व्यर्थ चिन्तित करने से लाभ? ये भी तो अन्ततः उस संकट से परित्राण का मार्ग पाने के लिये उन्हीं की ओर आँखें उठायेंगे। अच्छा यही है कि पूरी व्यवस्था पहिले स्वयं ही सोच ली जाय।

'यहाँ रहना अच्छा नहीं!' यह तो ठीक, पर यह यमुनातट, बृहद्वन—इसे छोड़कर कहाँ जाया जा सकता है? ये कोटि-कोटि गायें—इनको तनिक भी कष्ट हो तो गोपकुल का जीवन ही व्यर्थ है। इनकी सुविधा कहाँ होगी?

'यहाँ तो रहा जा नहीं सकता!' जहाँ श्यामसुन्दर ही सङ्कट में दीखता हो, वहाँ रहने की बात तो चित्त में आने से रही। व्रज में ही अनेक स्थल हैं, अनेक वनों के सम्बन्ध में बड़ी प्रशंसा है। उनमें प्रायः सभी देखे हुए हैं, पर तब का देखना और अब देखना एक कैसे हो सकता है।

श्रीउपनन्दजी स्वयं कुछ देख लेने, कुछ स्थिर कर लेने गोकुल से चले गये हैं। अपने-आप ही देखना है उन्हें और केवल देखना ही तो नहीं है, व्रजके दूरस्थ गोष्ठों में अनेक अनुभवी वृद्ध पुरुष हैं, सब-के-सब परम सुहृद् हैं, उनसे मन्त्रणा भी करनी है। परिस्थिति ऐसी नहीं है कि अब और उपेक्षा की जा सके। शीघ्रता में कोई निश्चय किया भी नहीं जा सकता। श्रीउपनन्दजी स्वयं सबसे मिलकर ही मन्त्रणा करेंगे। बात गुप्त रहेगी, स्थान देखे जा सकेंगे, एकाकी मिलने से सब अपने पूरे विचार खुलकर बता सकेंगे! अतः वे गोकुल से चले गये हैं व्रजके गोष्ठों का निरीक्षण करने।

× × × ×

श्यामसुन्दर का कर्ण-वेध हो गया। कर्ण-वेध के भय से ही तो वह रोता था। उपनन्दजी ही तो ऐसे नहीं थे, जो इस दृश्य को देखने में अपने को असमर्थ पाते रहे हों, उस समय तो अधिकांश लोग उठकर नन्दभवन से बाहर चले गये थे। लोगों ने तो यही समझा कि श्रीउपनन्दजी इस अवसर के ध्यान तक से बचने के लिये गोकुल से चले गये; पर यह तो कुछ और ही बात जान पड़ती है। पूरे व्रजमण्डल के गोष्ठों से ये सम्मान्य वृद्ध अनुभवी गोपनायक गोकुल में एक-एक करके प्रातः से ही आ रहे हैं। आज कोई उत्सव तो है नहीं। आज ही श्रीउपनन्दजी लौटे हैं और आज ही ये गोपगण एकत्र हो रहे हैं। सायंकाल व्रजेश के द्वारपर एकत्र होने की प्रार्थना जो समस्त गोकुल के गोपनायकों से की गयी है, उपनन्दजी के इस आमन्त्रण में कुछ रहस्य होना चाहिये। बिना किसी गम्भीर प्रयोजन के इस प्रकार चुपचाप इतने गोपों का एकत्र होना हो नहीं सकता। श्रीउपनन्दजी की ओर से सबको बुलाया गया है—यह तो और महत्त्व की बात है।

इतना गम्भीर प्रयोजन दीखने पर तो सबको एकत्र होना ही था। सायंकाल व्रजेश्वर के द्वार पर गोपगण एकत्र हुए। सब जानते हैं—यह आयोजन उपनन्दजी ने किया है, अतः कुछ भी किसी से पूछकर पहिले से जाना नहीं जा सकता। जिसे जितना उन्होंने बताया है, उतने पर ही सन्तोष करके अवसर की प्रतीक्षा करनी है उसे। गोपों की इतनी शान्त, समुत्सुक एवं पूर्ण गोष्ठी तो यह गोकुल में पहिली बार बैठी है।

वृद्ध गोपों ने व्रजेश्वर से यथोचित सत्कार प्राप्त कर लिया है। व्रजेश तो इतने सरल हैं कि इस गोष्ठी में सबके अनुरोध करने पर भी वह अपने प्रमुख आसन पर आसीन नहीं हुए। अभिषेक के पश्चात् उन्हें सभा में सिंहासन पर किसी ने देखा ही नहीं। वे जब समस्त व्रज के हृदयासन पर आसीन हैं—तुच्छ सिंहासन क्या उसकी तुलना कर सकता है। सब यथास्थान बैठ चुके हैं और व्रजेश—भला, इन सम्मान्य वयोवृद्धों में वे उच्चासन स्वीकार करेंगे। उपनन्दजी अपने छोटे भाई के स्वभाव को जानते हैं। उनको मुख्य प्रश्न पर आने की शीघ्रता है। उनके संकेत से आग्रह शिथिल हुआ लोगों का, जैसे व्रजराज को परित्राण मिला।

शान्ति—नीरव शान्ति, सूई गिरे तो उसका भी शब्द सुन लिया जाय और इस शान्ति में कुल दो क्षण गये—श्रीउपनन्दजी उठकर शान्तभाव से खड़े हो गये। सबके नेत्र उनके मुख की ओर लग गये। अपने धीर गम्भीर स्वरमें उन्होंने कहना प्रारम्भ किया 'श्रीनारायण ने कृपा की, हम लोगों की नित्य-नित्य की प्रार्थना उन दयामय के श्रीचरणों में स्वीकृत हुई, अनेक जन्मों के पुण्योदय से हमने श्रीकृष्णचन्द्र-सा युवराज पाया। अब यह नित्य की घटना हो गयी कि हमारी आशा के उस सुकुमार अङ्कुर को ही नष्ट कर देनेके लिये उत्पात-पर-उत्पात हो रहे हैं। वह राक्षसी—कनूँ सात दिनका भी पूरा नहीं हुआ और वह विकराल राक्षसी इसे ले भागी। इसके ऊपर उतना बड़ा भरा छकड़ा गिरते-गिरते रह गया और चक्रवात चलाकर वह असुर तो इसे आकाश में ले ही जा चुका था। गिरा भी यह शिला पर ही; परन्तु हमारे कुलदेव अनुकूल थे—उन्होंने इसकी रक्षा कर दी! यही क्यों—अभी-अभी श्रीनारायण ने ही तो इसे बचाया है, यह तो उन विशाल अर्जुन वृक्षों के मध्य में ही था, जब वे गिरे। ये नित्य के महोत्पात···।'

'नित्य के महोत्पात! पूतना—असुर और कदाचित् यह तरुपात भी?' तरुण गोपों के नेत्र अङ्गार बनते गये। 'अवश्य श्रीउपनन्दजी का संकेत कंस की क्रूरता की ओर है! इतना

अकारण अत्याचार हम अब और नहीं सहेंगे !' अधर दाँतों से पीड़ित होने लगे। किसी के हाथ खड्ग की मूठ पर गये और किसी ने लाठी पकड़ी दृढ़ता से। एक संकेत—व्रजेश्वर का संकेत भर हो जाय ! कंस होगा दिग्विजयी, पर उसे पता लग जायगा कि गोपों की शत्रुता का क्या अर्थ होता है।

श्रीउपनन्दजी का ध्यान इधर नहीं है। उनके नेत्रों से बिन्दु गिरने लगे हैं। उनका कण्ठ भर आया है। वे कहते जा रहे हैं—'यहाँ बालकों के विनाश के लिये कोई-न-कोई उत्पात पहुँचा ही रहता है, यह बृहद्वन हमारे लिये कल्याणप्रद अब नहीं रह गया। अतः जो राम और कृष्ण के हितैषी हैं, जिन्हें दाऊ और कन्हाई प्रिय हैं, उन्हें अब गोकुल का त्याग करना चाहिये। कोई और विपत्ति हमें अभिभूत करे, इससे पूर्व ही हम इन बच्चों को लेकर अपने समस्त अनुगतों के साथ और कहीं चले जायँगे !'

स्पष्ट था कि जिसे गोकुल न छोड़ना हो, जिसे यहाँ के अपने गृह में ममत्व हो, उससे कोई आग्रह नहीं है। उस पर कोई भी दबाव नहीं दिया जायगा। राम-कृष्ण तो अब यहाँ रहेंगे नहीं। अब इसमें व्रजराज की सम्मति की भी आवश्यकता नहीं है। जितना स्वत्व इन दोनों बालकों पर व्रजराज का है, उपनन्दजी का उससे कम कहाँ है। रामकृष्ण को तो ले ही जायँगे; जो अनुगमन करना चाहेंगे, उन्हें भी छोड़ा नहीं जायगा। जो भी इन बालकों के शुभचिन्तक हों, उनको यहाँ नहीं रहना चाहिये।

एक बार उपनन्दजी ने चारों ओर देखा। सभी नेत्र कह रहे थे—'यह क्या कह रहे हैं आप ? राम-श्याम सकुशल रहें; कहिये, कहाँ चलना है हमें ? नेत्रों के भाव इतने स्पष्ट कि वाणी उतनी पूर्णता से व्यक्त कर ही नहीं सकती। उपनन्दजी ने आगे प्रस्ताव को स्पष्ट किया—'मैं स्वयं देख आया हूँ, यहाँ से कुछ ही दूर वृन्दावन नामका वन है। सर्वथा नवीन वन है और पशुओं के लिये तो बहुत ही उपयुक्त है। गोप, गोपी, गायें—सभी वहाँ प्रसन्न रहेंगे। परम पवित्र गिरिराज गोवर्धन का वह पादप्रान्त मृदुल तृणों एवं मधुर पक्वफलों के वृक्षों से परिपूर्ण है। हमारे लिये बरसानाधीश का वह पड़ोस सुरक्षा की दृष्टि से भी सर्वोत्तम है। मैं चाहता हूँ कि यदि आप लोगों को मेरी बात उचित जान पड़े तो छकड़े जोत दिये जायँ। गायें आगे जायँ और हम आज ही प्रस्थान करें !'

'निश्चय हम आज ही चल देंगे !'

'इससे अच्छा कोई दूसरा उपाय नहीं हो सकता ! शीघ्रता करनी चाहिये !' गोपों में—व्रज के गोपों में और मतभेद ! यह तो कल्पना से परे की बात है। सम्भवतः यहाँ सबकी बुद्धि एक ही धातु की बनी है। श्यामसुन्दर ने रही-सही कोर-कसर भी पूरी कर दी। जब सबके जीवन, संकल्प, विचार का वही एक केन्द्र है—कहाँ मतभेद सम्भव है। उपनन्दजी प्रस्ताव करें और वह स्वीकृत न हो ! वह तो आदेश की भाँति ग्रहण किया गया।

'मैंने महर्षि शाण्डिल्य का आशीर्वाद प्राप्त कर लिया है। ब्राह्ममुहूर्त में ही हमारे शङ्ख जयघोष करेंगे !' श्रीउपनन्दजी का प्रस्ताव पहिले से सर्वाङ्गपूर्ण न हो, यह तो कभी हुआ ही नहीं। महर्षि ने मुहूर्त बता दिया है। अब तो प्रस्थान को प्रस्तुत होना है।

× × × ×

"ब्राह्ममुहूर्त में ही प्रस्थान करना है !" घर-घर सभी व्यस्त हैं। छकड़े भरे जा रहे हैं। महर्षि शाण्डिल्य ने स्वयं समस्त विप्रों एवं मुनिमण्डली से अनुमति प्राप्त कर ली है। 'जब श्रीकृष्णचन्द्र जा रहे हैं, तो यहाँ रहकर करना भी क्या है !' वीतराग तपोमूर्तियों में स्थान का मोह तो होने से रहा। अवश्य ही उनके आत्माराम चित्त को व्रजराज के नवनीतचोर कुमार ने चुरा लिया है और अब तो जहाँ वह ले जाय, जाना ही है।

भगवती पूर्णमासी—उनके बिना तो गोपकुल का अब कोई मङ्गलकाय सम्पन्न नहीं हो पाता। उनका आशीर्वाद तो सदा ही अभीप्सित है। वे न जायँ तो—पर यह सोचा ही कैसे जा सकता है। उनका मधुमङ्गल तो कन्हाई को छोड़कर एक क्षण नहीं रह सकता। वह तो दिन भर श्याम के साथ ही धूम करता है। उसके बिना मोहन का मन भी कैसे लगेगा। गोपों की गोष्ठी से

उठकर बाबा ने सीधे उनके आश्रम में पहुँच कर प्रार्थना की और वे दयामयी—उन्होंने तो हँसकर कह दिया—'जब कृष्ण जा रहा है तो उसकी धाय कैसे नहीं जायगी!' कन्हैया को उन्होंने ही प्रथम गोदुग्ध-पान कराया और····वे तो साक्षात् करुणामयी महाशक्ति ही हैं!

'श्याम के लिये नवनीत चाहिये मार्ग में! वस्त्र बदलने होंगे! यह मणि-मयूर पता नहीं कब वह माँग बैठे!' मैया को तो अपने नीलमणि की वस्तुओं से ही अवकाश नहीं है। उस चञ्चल का क्या ठिकाना—कब किस वस्तु के लिये मचलने लगे। नवनीत, दधि, मिष्टान्न, वस्त्र, खिलौने—पता नहीं, क्या-क्या मैया सजाने में लगी है। बार-बार सोचती है—'कुछ छूट तो नहीं रहा है? श्याम की आवश्यकता की कोई वस्तु रही तो नहीं जाती?' अञ्जन, उबटन, तैल—शतशः वस्तुएँ हैं। उसने ढेर लगा दिया है इन सामग्रियों का और इनसे लदा छकड़ा उसके छकड़े के साथ-साथ ही चलना चाहिये। किसी क्षण भी कोई वस्तु आवश्यक हो सकती है। उसके भी वस्त्र हैं, बहुमूल्य आभरण हैं? उसकी आवश्यकताएँ—वे तो कब—पता नहीं कब नीलसुन्दर में एक हो गयीं। यह व्रजेश का विपुल कोषागार, व्रजराज की आवश्यकताएँ—मैया को मोहन से अवकाश हो तो इस ओर ध्यान दे। और ध्यान दे ही क्यों? ये माता रोहिणी हैं न। ये तो स्वयं सब सम्हालने में व्यस्त हैं। व्रजेश्वरी, व्रजराज की आवश्यकताएँ—अरे, इनकी दृष्टि से तो सेवकों, दासियों तक की आवश्यकताएँ छूट नहीं सकतीं। मैया चाहे जितना यत्न करे—जितनी सामग्री एकत्र करे, कन्हैया की आवश्यक वस्तुएँ भी सब क्या उसके ध्यान में आ जायँगी? वह तो एक वस्तु उठाती है—'श्याम इसे कब माँगेगा?' कैसे माँगेगा?' जैसे उसकी सुध-बुध खो जाती है। मार्ग में कन्हाई कुछ माँगेगा और तब वह चौंककर कहेगी—'अरे!' पर उसके 'अरे!' का समाधान तो हँसकर माता रोहिणी को ही करना है। उनके प्रबन्ध में कुछ छूट जाय, यह सरल नहीं है।

'गोकुल—गोकुल के ये रत्नमन्दिर—पिता-पितामहों का यह भवन और यह जन्मभूमि आज छूट जायगी! आज इसे सदा के लिये छोड़ रहे हैं!' जैसे किसी गोप, किसी गोपी के मन में यह बात ही नहीं आती। अवधूत भी रात्रि भर जिस वृक्षके नीचे निवास करता है, प्रातः वहाँ से जाते समय उसकी दृष्टि वृक्ष पर जाती ही है, पर ये गोप—ये इतने निःस्पृह, इतने वीतराग! घरों के प्रति जैसे इनमें कोई ममता ही नहीं। ये सब-के-सब तो इस उत्साह से जाने की प्रस्तुति कर रहे हैं, जैसे किसी महोत्सव में सम्मिलित होने जाना है और मार्ग में रात्रि-विश्राम के लिये इन गृहों में रुक गये थे। जैसे ये इनके गृह ही नहीं। इन गृहों से, इस भूमि से इनका कोई सम्बन्ध ही नहीं। पर कैसे जाय गृहों की ओर ध्यान? 'राम-श्याम सुरक्षित हो जायँगे!' कम उमंग की बात है। इस आशा, इस विश्वास पर वे क्या नहीं छोड़ सकते? इस समय तो समस्त भाव इसी आशा में एकाकार हो चुके हैं।

'ब्राह्ममुहूर्त में ही प्रस्थान करना है!' छकड़े भरे जा रहे हैं। सामग्री सम्हाली जा रही है। अस्त्र शस्त्र व्यवस्थित किये जा रहे हैं और वृद्ध गोप—व्रजेश्वर, ये सब लोग आदेश देने में व्यस्त हैं। 'कौन क्या करेगा? कौन कहाँ रहेगा! क्या वस्तु कैसे रक्खी जायगी।' श्रीव्रजराज स्वयं घर-घर पहुँचकर सबकी व्यवस्था अपने-आप देख लेना चाहते हैं। स्वयं सबको सारी बातें समझा देना चाहते हैं।

× × × ×

ब्राह्ममुहूर्त का प्रारम्भ—यह गूँजा व्रजराज का शङ्खनाद और एक क्षण में तो दिशाएँ गुञ्जित हो गयीं शङ्खों, शृङ्गों आदि के तुमुल रव से। गोपों ने अपने-अपने शृङ्ग मुख से लगाये और फिर क्या कुछ सुनायी पड़ सकता है। छकड़े जुते, गृह के समस्त उपकरण छकड़ों पर सजाकर रख दिये गये हैं। बालक, वृद्ध तथा स्त्रियाँ—विप्रवर्ग और दूसरे सम्मान्य विद्योपजीवी—ये सब तो छकड़ों पर ही चलेंगे। सुसज्जित वृषभ-रथ—कौशेय के आच्छादन, स्वर्ण-घण्टिकाएँ और रङ्ग-विरङ्गे रत्नों से जड़े हुए। सब व्रजराज के भवन के सम्मुख एकत्र हो रहे हैं। तरुण गोपों ने कटि में दोनों ओर खड्ग लगा लिया है, पीठ पर त्रोण कस गये हैं और चर्म ने कंधों को भूषित कर दिया

है। धनुष तो है ही—करों में चम-चम करते ये विशाल भल्ल—आवश्यकता हो या न हो, रक्षा के लिये सावधान तो रहना ही चाहिये।

भेरी का घनघोष, शृङ्गों का चारों ओर गगनभेदी निनाद और अब तो जयध्वनि के मध्य ये कोटि-कोटि गौएँ श्रीयमुनाकूल के सहारे हाँक दी गयीं। गोप इन्हें आगे-आगे लेकर चलेंगे। गोपकुल के आगे ये परम पूज्य गायें ही तो चलेंगी। जहाँ सम्मुख इनकी खुर-रेणु उड़नी चलती हो, वहाँ तो सब दिशाओं में मङ्गल-ही-मङ्गल है।

महर्षि शाण्डिल्य, विप्र वर्ग, मुनिमण्डली—भला, इन परम वीतराग निष्परिग्रह तपोधनों को क्या लेना है। जलपात्र, वल्कल और स्रुक्-स्रुवादि—अपनी अग्नियाँ उठायीं, चल पड़े। इनको भी क्या कोई प्रस्तुति करनी पड़ती है। वृषभ-रथों पर विराजमान ये अपनी अग्नियों के साथ साक्षात वैश्वानर-जैसे तेजोमय—व्रजेश्वर तो इनका अनुग्रह पाकर ही धन्य हो गये हैं। मार्ग में प्रातःकृत्य ठीक समय पर होने में कोई बाधा न पड़े, इसकी पूरी व्यवस्था हो चुकी है। महर्षि शाण्डिल्य कुछ दूर जाकर अपने इस मण्डल के साथ रुक जायँगे श्रीयमुनातट पर। प्रातः संध्या, हवन, तर्पणादि करेंगे विप्रगण। अतः इस मण्डल को भी अब शीघ्र प्रस्थान कर ही देना है।

गायें—कोटि-कोटि ये गायें—इन सबको कैसे सम्भव है कि आगे-आगे ले जाया जा सके। ये सब बार-बार भाग आती हैं, बार-बार घूम पड़ती हैं। श्यामसुन्दर पीछे हैं, वह मैया के साथ छकड़े पर बैठ गया है और उसी छकड़े पर बैठा है माता रोहिणी के साथ दाऊ भी। गायें इन दोनों को छोड़कर आगे कैसे बढ़ जायँ। व्रजराज को विवश होना पड़ा। गोप असमर्थ हो रहे हैं गायों को आगे ले जाने में। यह कन्हैया—गायें आगे हों, पीछे हों, दोनों ओर हों—चारों ओर गायें ही गायें हों, तब इसे आनन्द आता है। तब यह ताली बजाकर किलकता और फुदकता है, सम्भवतः गायें इसे समझ गयी हैं। गोपों ने बाबा की सम्मति से स्थिर कर लिया है कि छकड़ों को मध्यमें करके दोनों ओर गायों का यूथ चलाया जाय और यही शक्य है।

आगे-पीछे, अगल-बगल असंख्य रङ्ग-बिरङ्गी गायें, ऊँचे गर्जन करते वृषभ, कूदते बछड़े और इन सबों के कण्ठों से बजती घण्टिकाएँ! गोपों ने अपने शस्त्र सम्हाल लिये हैं। वे गायों की रक्षा में सावधान हैं और छकड़ों को तो उनका एक दल घेरकर ही चल रहा है। उनके मध्य में ये ऐरावत के बच्चों-जैसे उच्च वृषभ तथा घर्र-घर्र स्वर करते, स्वर्णघण्टियों की मधुर झंकृति से दिशाओं को गुञ्जित करते वृषभ-रथ। भला, क्या प्रतीत होना है इन वृषभों को इन रथों का भार। ये तो रथमें जुड़े होने पर भी गर्जन करते हैं। इन रथों के ये सारथि—अपने सीखे, सधे वृषभों पर इन्हें गर्व होना ही चाहिये। रश्मि का संकेत पाते ही वृषभ अश्वों की गति को पीछे छोड़ जायगे और संकेत मिलते ही तत्काल रुकने में तो कोई पशु वृषभों की समता कर ही नहीं सकता।

रथ चल रहे हैं—वृषभ-रथ चल पड़े हैं गोकुल से, चले जा रहे हैं। शङ्खनाद और मन्त्र-पाठ—विप्रों के रथों से तो यह मङ्गलध्वनि उठनी ही है। बाबा के साथ वृद्ध गोपों का समुदाय है छकड़ों पर और ये गोपियों के शकट—रङ्ग-विरङ्गे बहुमूल्य वस्त्र, ज्योतिर्मय रत्नाभरण और कल-कण्ठों से निकलता यह भुवनमङ्गल राम-श्याम का सुमधुर चरित—गोपियों के रथों की छटा की तुलना में सुरललनाओं के विमान तुच्छ हो गये हैं।

माता रोहिणी और मैया—दोनों एक ही छकड़े में बैठी हैं। दाऊ और कनूँ पृथक्-पृथक् चल ही नहीं सकते। कन्हाई का क्या ठिकाना कि कब वह बड़ी माँ या बड़े भाई के पास पहुँचने का हठ करने लगे। गोपियाँ बड़े उत्साह से, बड़े स्वर से इन दोनों के चरित गा रही हैं। मैया और माता रोहिणी के श्रवण इस सुधा-धारा से कभी भी परितृप्त होंगे—ऐसी तो आशा नहीं। ये दोनों तो इस प्रकार सुन रही हैं, जैसे कभी न सुना हो इन चरितों को।

भद्र—वह तो अभी से बाबा के पास रहने लगा है। मधुमङ्गल मार्ग में चपलता न करे, इसलिये भगवती पूर्णमासी उसे अपने साथ ही रक्खे हैं और तोक—तोक को माता का भय न हो तो अवश्य वह कूद आवे कन्हाई के पास। लेकिन कनूँ दूर कहाँ है। समीप से मिलकर ही तो यह

छकड़े पर बैठा है श्याम। अपने छकड़े पर से ही यह सखाओं को पुकारता, बातें करता चल रहा है। सखा सभी तो समीप ही हैं। बालकों को ही नहीं, गोपियों को भी लगता है कि उन्हीं का छकड़ा नन्दरानी के छकड़े के पास साथ-साथ चल रहा है। सबको यही लग रहा है। कौन जाने गायें भी अपने को इसी छकड़े के पास जानती हों, ये सब अब भाग-दौड़ तो कर नहीं रही हैं। बस, हुंकार कर लेती हैं बार-बार।

शङ्खनाद, शृङ्गनाद, घण्टिकानिनाद, वृषभगर्जन, गायों की हुंकृति, जयघोष, सामगान और गोपियों के कण्ठ की पावन स्वरलहरी—एक अद्भुत दृश्य हो गया है। रथचक्रों के घर्र-घर्र स्वर भी आज सङ्गीतपूर्ण हो गये हैं। गायें जा रही हैं, विप्रवृन्द जा रहे हैं, गोप जा रहे हैं, गोपियाँ जा रही हैं, पूरा गोपकुल जा रहा है। चल रहा है यह नन्दव्रज! व्रज--आज ही तो यह अपने वास्तविक व्रज के रूप में आया है। व्रज—चलता हुआ—आज गोकुल चलता हुआ हो गया है। चल रहा है—चला जा रहा है यह अपार जनसागर कोलाहल करता हुआ।

× × × ×

'माँ, यह किसका वृक्ष है? मैया, ये कैसे पुष्प हैं?' कन्हैया कभी माता रोहिणी से, कभी मैया से नाना प्रकार के पुष्प, तरु, पक्षी, पशुओं के सम्बन्ध में पूछता जाता है। दोनों भाई बार-बार छकड़े में खड़े हो जाते हैं। मैया के सम्हालने, बैठाने पर भी कठिनाई से बैठते हैं।

'कनूँ, देख तो! कितने बड़े-बड़े फल हैं।' दाऊ कभी छोटे भाई को कुछ दिखाता है, कभी श्याम अपने अग्रज को। पास के छकड़ों से सखाओं की कुतूहलभरी पुकार भी चल ही रही है।

'मैया, मैं ये फल लूँगा!' यहाँ तक तो ठीक। छकड़ा रोकना भी नहीं पड़ेगा, किसी सेवक को संकेत मिलेगा और कोई गोप फल ला देगा। झटपट; पर यह कनूँ इतने से ही मानता कहाँ है—'ये पुष्प तो मैं तोड़ूँगा—मैं अपने हाथों तोड़ूँगा!' और छकड़ा हाँकनेवाले को स्वयं आग्रह करने लगा है कि छकड़े को इस पुष्पित लता के नीचे ले चले। इतने सुन्दर सुरङ्ग सुकुमार पुष्प-गुच्छ—कन्हाई इन्हें अपने हाथों उतारेगा और मैया, बड़ी माँ या भाई की अलकों में उलझा देगा।

'तू ये किसलय तो तोड़ दे!' बालकों की माँग का कोई ठिकाना नहीं है। कभी छकड़ा रोककर मैया को स्वयं ऊपर की शाखा से किसलय चुनने हैं, कभी पुष्प और कभी फल। कभी कोई पक्षी देखना है मोहन को, कभी कोई पशु। यही क्या कम है कि किसी प्रकार यह चपल अपने छकड़े से उतरने की हठ बार-बार छोड़ देता है। आज ये सब बहुत प्रसन्न हैं। अत्यन्त उल्लास में हैं। राम-श्याम ने इतना वनपथ, इतने विभिन्न तरु, लता, फल-पुष्प, पशु-पक्षी आज ही देखे हैं। छकड़ों में पता नहीं क्या-क्या भरते जा रहे हैं सब। इनकी चले तो सब पशु-पक्षी भी छकड़े में ही बैठा लें। श्याम कभी मैया से एक हिरन पकड़ने को कहता है, कभी शशक। कभी इसे गवय भला लगता है, कभी झूमता वनगज। ये पशु-पक्षी—ये सब भी तो गायों में आ मिले हैं। ये तो इस प्रकार चल रहे हैं, जैसे गायों की भाँति पाले गये हैं और गोप इन्हें भी हाँके लिये जाते हैं।

'श्याम, तू कलेऊ करेगा न!' इतना दिन आ गया, इतनी देर हुई; पर बालक तो जैसे भूख-प्यास ही भूल गये हैं। कन्हैया तो अभी छकड़ा रोकना ही नहीं चाहता। मैया ने कितना प्रयत्न किया कि यह कुछ खा ले चलते ही छकड़े में। 'दोनों भाई एक-से हैं, तनिक-तनिक नवनीत दो-एक बार किसी प्रकार मुख में लिया और बस! पता नहीं व्रजराज को बालकों का भी ध्यान है या नहीं। ये गोप कहीं रुकेंगे भी?' मैया को अब गोपों का यह चलते ही जाना रुचता नहीं। सबको रुकना चाहिये, बालकों को कलेऊ करना चाहिये, ऐसी भी क्या दौड़ा-दौड़।

कलेऊ, मध्याह्न-भोजन, मध्याह्नोत्तर-जलपान और सायं-निवास—होना तो सभी है। श्रीउपनन्दजी ने पहिले से सब सोच लिया है। सबके उपयुक्त स्थल देख लिये हैं। लेकिन कन्हाई का कुतूहल, छकड़ों की यह गति, बार-बार रुकना—उपनन्दजी ने इसका बहुत पहिले अनुमान कर लिया था। यह सुन्दर स्वच्छ कालिन्दीकूल, पुष्पित, फलित वनराजि, मृदुल हरित तृणराजि—बस यहीं तो कलेऊ होना है। वह उठ रहा है हवन का सुगन्धित धूम्र! महर्षि शाण्डिल्य विप्रवर्ग

के साथ यहाँ अपने प्रातःकृत्य सम्पूर्ण करने पहिले ही पहुँच चुके हैं। गायें तृप्त हों, गोप स्नानादि करें और कनूँ तो अपने सखाओं के साथ कलेऊ करेगा। यह आया भद्र, यह तोक और यह मधुमङ्गल तो भोग भी लगाने लगा! अब इतनी देर पर सब एकत्र हुए हैं—जैसे वर्षों पर मिले हों। इस समय इनका उल्लास, कल-कल, उछलकूद—सबके नेत्र तो यहीं स्थिर हो गये हैं! सब-गोप भूल ही गये हैं कि उन्हें स्नानादि भी करना है और फिर गोपियों को ही क्या शीघ्रता है। भूल तो गयीं ये गायें तृण चरना। सब यहीं घेरकर एकत्र हो जाना चाहती हैं। कन्हैया कलेऊ करेगा! अपने सखाओं के साथ वह अब कलेऊ करेगा! मैया इन सबको कुछ खिला दे तो उसे तनिक संतोष हो। बालक भूखे हैं। बहुत विलम्ब हुआ आज। वह व्यस्त हो उठी है।

× × × ×

मध्याह्नभोजन के लिये आज किसीको कुछ बनाना तो था नहीं, गोपियों ने जो विविध पकान्न बना रक्खे हैं। वन में, सघन तरुओं की छाया में इस प्रकार एकत्र पूरे गोकुल का आज का यह सहभोज—यह तो जीवनभर स्मरण रहेगा। मध्याह्नोत्तर कलेऊ भी अब तो हो चुका बालकों का और अब यथासम्भव शीघ्रता करनी है। श्रीयमुनाजी को पार भी तो करना होगा। रात्रि-विश्राम तो कालिन्दी के उस कूल पर करने का निश्चय हुआ है। कन्हाई के आमोद, बालकों के कुतूहल और इन सबकी विविध माँगों की पूर्ति में छकड़े यहाँ तक आ सके, यही क्या कम बड़ी बात हुई।

'गोधन एकत्र क्यों हुआ? छकड़े खड़े कैसे हो गये?' श्यामने इधर-उधर देखा। अभी तो कलेऊ का समय नहीं हुआ। अभी-अभी तो कलेऊ हुआ है। यहाँ क्या है? यह चञ्चल तो उतर गया छकड़े से हाँकने वाले के समीप। अब मैया कितना पुकारे, कितनी चेष्टा करे—यह कहाँ सुनता है। यह उतरा श्याम, यह उतरा दाऊ—अरे, ये दोनों तो छकड़े से उतरकर बाबा के पास भाग चले।

'भद्र! तोक! मधुमङ्गल!' कन्हैया कूदता पुकारता दौड़ चला है आगे को। यह सम्भवतः बाबा के पास ही जायगा। यह आया भद्र, यह रहा तोक, यह मधुमङ्गल—अब तो सब एकत्र हो गये। सब छकड़ों से भूमि पर आकर हँसते, कूदते, ताली बजाते भागे जा रहे हैं।

'अरे, यमुनाजी पर तो मार्ग बन गया है!' कनूँ ने पहिले ही देखा है यह नौकाओं का सेतु। श्रीव्रजराज ने प्रातः ही व्यवस्था कर दी थी, नौका-सेतु तो यहाँ पहुँचने से पूर्व ही प्रस्तुत हो गया। श्याम भागा जा रहा है, भागा जा रहा है सेतु के समीप। ये चञ्चल बालक--गोप पुकार रहे हैं, दौड़ पड़े हैं, पर सब तो सेतु पर पहुँच भी गये। कन्हैया तो ताली बजा-बजाकर कूद रहा है। यह कभी स्रोत के एक ओर, कभी दूसरी ओर देख रहा है अब बालकों को दौड़कर पकड़ना भी ठीक नहीं। कहीं ये सब भागें.....। बाबा की गति में तीव्रता नहीं रही। वे पुकार रहे हैं—'राम, कृष्ण-चन्द्र, मुझे भी तो आने दो! मैं तुम लोगों के साथ ही चलूँगा! रुको! खड़े रहो!' अब भला, सेतु पर कन्हाई क्यों न खड़ा रहे। बाबा आ रहे हैं, इसे बहुत कुछ पूछना है—'यह सरिता पर मार्ग कैसे बना? यह डूबता क्यों नहीं? जल इधर-से-उधर कैसे जा रहा है? ये नौकाएँ क्या जल में भूमि तक टिकी हैं? ये सब नौकाएँ बहती क्यों नहीं?' पता नहीं क्या-क्या। बाबा आ जायँ तो समाधान करें इसके प्रश्नों का।

× × × ×

ये कोटि-कोटि गायें—भला, इनके लिये भी कोई सेतु बन सकता है। कन्हैया उस पार पहुँच गया। वह खड़ा है तट पर अपने सखाओं के साथ। गायों को गोपों ने प्रेरित किया, यह कहना ठीक नहीं है। गायों ने देखा उस ओर—उस तट की ओर और वे उतर पड़ीं जल में। गोप तो उन्हें केवल पीछे से प्रोत्साहित कर रहे हैं।

कान उठाये, मुख ऊपर किये, कभी-कभी पूँछें उठातीं, तैरतीं ये असंख्य गायें--उसपार सम्मुख से गोप पुकार रहे हैं, पीछे से इस तट से प्रोत्साहित कर रहे हैं। सबसे बड़ा प्रोत्साहन तो यह बालकों की ताली और किलकार है। कन्हैया बड़ा प्रसन्न है, सब एकटक गायों को—तैरती आती गायों को देख रहे हैं। गायें, वृषभ—सभी तो आ रहे हैं।

यह आया धर्म! यह भीगे शरीर को झाड़ती, पूँछ उठाये कूदती कामदा आयी! वह निकली नन्दा और यह अरुणा तो बहुत कम बहकर प्रायः सीधे ही लगी है। कालिन्दी का प्रवाह यहाँ कुछ कम है। श्रीउपनन्दजी ने कुछ सोचकर ही यह स्थान यमुना-पार करने के लिये निश्चित किया। यह आ रहे हैं पशु—कोई यहाँ, कोई वहाँ—सब भीगे शरीर को हिलाते, कान-पूँछ उठाये, कूदते बाँ-बाँ करते उछलते आ रहे हैं। कन्हाई इन्हें देख रहा है, खिलखिला रहा है। बालक प्रसन्न हो रहे हैं।

सद्यःप्रसूता गौओं को गोपों ने कितनी कठिनाई से रोका है। इन्हें शीत लग सकता है। इनको तो सेतु पर से ही पार करना चाहिये। अङ्क में बछड़ों को लेकर, कितनी सावधानी से इन सबको लाया गया है इस पार। पर ये बछड़े—माताओं को जैसे इन बछड़ों की चिन्ता ही नहीं है। ये सब तो बालकों के समीप भाग जाने की धुन में हैं।

दो-तीन मास के बछड़ों को गोप सहारा देते, जल में तैराते ला रहे हैं। ये सब बड़े चञ्चल हैं, सेतु पर उछल-कूद कर कहीं गिर पड़ें--इन्हें कोई कहाँ तक नियन्त्रण में रख सकता है। श्रीयमुना की इस धार में इनको सहायता की आवश्यकता है। कुछ छोटे बछड़ों को तो गोप कंधों पर धरे तैरते आ रहे हैं। कुछ को सहारा दे रहे हैं। कुछ केवल प्रोत्साहन की ही अपेक्षा रखते हैं।

'माँ, बाँ' बछड़ों की यह पुकार, गायों की हुंकृति—बालक जो उसपार तटसे इन्हें ही पुकार रहे हैं। कन्हैया वह क्या पुकार रहा है। बाबा, उपनन्दजी, दूसरे गोप यदि इन बालकों को इस प्रकार रोके न खड़े हों—ये तो कदाचित् जल के ठीक किनारे आ जायँ। क्या ठिकाना कि जल में किसी बछड़े के कान पकड़कर उसे बाहर खींचने ही दौड़ पड़ें।

'कहाँ गया नीलमणि? श्याम कहाँ गया? सब कहाँ चले गये?' मैया तो व्याकुल हो उठी है। सब उस पार पहुँच गये। बड़े चञ्चल हैं, पता नहीं कब जल के पास आ जायँ।' उस पार बाबा हैं, उपनन्दजी हैं, दूसरे वृद्ध गोप हैं बालकों के समीप और अब तो तरुण गोप भी पहुँच गये हैं। मैया को इससे संतोष कहाँ। कन्हाई को गोप नियन्त्रित रख सकेंगे—यह कैसे मान ले वह। उसे पार जाना है—शीघ्र जाना है उस पार। छकड़े नौका-सेतु से पार होने लगे हैं, पर इतना धीरे क्यों चल रहे हैं! मैया की आतुरता को कोई व्यवस्था इस समय कैसे संतोष दे सकती है।

× × × ×

श्रीयमुना-तटपर छकड़ों के घेरे में यह वस्त्र-नगर! गोपों ने कितनी शीघ्रता से यह शिविर खड़ा कर दिया था। सबके लिये पर्याप्त सुविधा—जैसे सब अपने ही घरों में हों। गोप सावधान रात्रिभर शस्त्र लिये प्रहरी बने रहे हैं। गोपियों को आज कहाँ निद्रा आनी थी। इस प्रकार वन में एकत्र मिलने का अवसर क्या बार-बार आता है। सब-की-सब मिलकर रात्रि भर राम-श्याम के मङ्गल-चरितों का गान करती हैं।

'बालक बहुत थक गये हैं। छकड़ों पर भी दिन भर ये सब उछलते ही रहे हैं। कन्हाई ने दिन में पलकें ही बंद नहीं कीं। यहाँ पहुँचने पर भी यह बालकों के साथ गुञ्जा, पुष्प, किसलय, फल, मयूरपिच्छ संग्रह करने इधर-से-उधर दौड़ता रहा। कितनी कठिनाई से अँधेरा होने पर ये सब लाये जा सके हैं।' मैया ने बाबा को कह दिया है कि प्रातः शीघ्रता न की जाय। बच्चों को भरपूर विश्राम करने का अवसर मिलना चाहिये।

'अभी तो अरुणोदय ही हुआ है! यह अभी शङ्ख बजा! ये शङ्ख बजने लगे!' मैया को लगता है कि गोप बहुत उतावली करते हैं। यह कन्हाई जग गया। यह अब बाहर भाग जाना चाहता है, छकड़े पर बैठने को उतावली कर रहा है। कौन कहे गोपों को—उन्होंने तो छकड़े जोत दिये। मैया ने राम-श्याम का मुख-हाथ धुलाया, कुछ कलेऊ कराया। गोपों ने उतावली कर दी, बालक कहीं शीघ्रता में कुछ खा पाते हैं। अब तो व्रजराज का शङ्ख गूँज रहा है। छकड़े प्रस्थान करने वाले हैं। यह कनूँ तो पहुँच भी गया अपने शकट पर।

—❀-❀-❀—

वृन्दावन

पुरेयं बत व्रजभुवो यदयं नृलिङ्गगूढः पुराणपुरुषो वनचित्रमाल्यः ।
गाः पालयन् सहबलः क्वणयंश्च वेणुं विक्रीडयाञ्चति गिरित्ररमार्चिताङ्घ्रिः ॥

—भागवत १० । ४४ । १९

'दाऊ भैया, वह—वह ऊँचा-ऊँचा हरा-हरा पर्वत—अपने छकड़े तो उधर ही जा रहे हैं !' कन्हैया को दूर से गिरिराज की नील छटा बहुत प्रिय लगी ।

'वे गिरिराज हैं !' श्रीरोहिणीजी ने बताया ।

'गिरिराज—गिरिराज !' कन्हैया ने जैसे कोई भूली बात सोची हो । 'हम सब गिरिराज के पास रहेंगे !' उसने दोनों लाल-लाल हथेलियों से ताली बजायी । दाऊ ने अपने छोटे भाई के उल्लास में साथ दिया । माताएँ आनन्दमग्न हो गयीं ।

'अब अपने छकड़े खड़े कर दो ! गिरिराज तो आ गये !' कन्हैया ने माता के मुख की ओर देखा । छकड़े गिरिराज गोवर्धन के समीप से ही चल रहे हैं ।

'यहाँ नहीं—श्री यमुनाजी के समीप !' माता ने श्यामसुन्दर की ठुड्डी स्नेह से छूकर आगे दूर उँगली से संकेत किया ।

'यमुनाजी—यमुनाजी हैं क्या वहाँ ?' कन्हैया को इस यात्रा में यमुनातट छोड़ना पसंद नहीं आया था । यमुनातट मिलेगा आगे यह तो उसने सोचा ही नहीं था । 'लेकिन गिरिराज ?' वह असमञ्जस में पड़ा । किसे पसंद करे—गिरिराज को या श्रीयमुनाजी को ।

'गिरिराज के पास ही वहाँ श्रीयमुनाजी का प्रवाह है !' माता ने पुत्र के असमञ्जस को समझ लिया ।

'ओहो ! गिरिराज के पास यमुनाजी !' कन्हैया तो चलते छकड़े में माता की गोद से उठ खड़ा हुआ । मैया ने पकड़कर फिर बैठा न लिया होता तो अवश्य वह कूदता, फुदकता ।

अत्यन्त सुन्दर वन—पुष्पों से झुकी ढँकी लताएँ, फलभार से पृथ्वी को स्पर्श करती शाखाओं वाले घने वृक्ष । स्थान-स्थान पर लताओं ने कुञ्ज बना लिये हैं । कदम्ब अपने पुष्पों से पीला या अरुणिम हो रहा है । मौलिश्री से कुसुमों की झड़ी लगी है । कर्णिकार के पीत, श्वेत लाल पुष्पों से भरे झुरमुटों की विचित्र ही शोभा है । अनेक सरोवर मिले मार्ग में, रङ्ग-विरङ्गे कुमुद मुख बंद किये और अनेक रङ्गों के कमल खिले हुए । हंस-सारसादि पक्षी आनन्द से तैर रहे हैं । भ्रमरों के झुंड-के-झुंड चारों ओर गुन-गुन कर रहे हैं ।

'कनूँ, वह देख—वह व्याघ्र !' एक कुञ्ज से सुपुष्ट स्वर्णशरीर पर काली धारियों वाला शक्ति की मूर्ति व्याघ्र शान्त खड़ा छकड़ों की ओर देख रहा था । उसके साथ उसकी सङ्गिनी थी ।

'माँ, वह तो मृगों के बीच में आया है !' दाऊ ने ठीक ही कहा । मृगयूथ पहिले से वहाँ इन छकड़ों को देखने आ गया था । बाघ कुञ्ज में से पीछे निकला और उनके बीच में ही खड़ा हो गया । जैसे वह भी एक बड़ा-सा हरिण हो, मृगों ने उसकी ओर देखा तक नहीं ।

'यह वृन्दावन है ! यहाँ कोई पशु-पक्षी परस्पर झगड़ते नहीं !' श्रीरोहिणीजी ही आज परिचय देने में लगी हैं । चञ्चल बालकों के अटपटे प्रश्नों का उत्तर देने में उन्हें आनन्दानुभव हो रहा है । 'वृन्दावन !' कन्हैया फिर खिलखिलाया । उसे जैसे आज प्रत्येक नाम परिचित लग रहा है ।

'माँ, तनिक छकड़ा रोक न !' श्याम ने माता के मुख को हाथ से एक ओर फेरकर दिखाया—' मैं एक बिल्ली पकड़ूँगा !' ऐसी विचित्र बिल्लियाँ गोकुल में उसने नहीं देखीं।

'पगले, वे सिंह के बच्चे हैं !' केसरी भी एक ओर एक कुञ्ज से निकल कर खड़ा है और उसके दोनों छोटे शिशु कभी अपनी माता के और कभी उसके पेट के नीचे कूदते हुये परस्पर खेल रहे हैं।

'माँ, माँ, मयूर ने माला पहिन रक्खी है !' श्यामसुन्दर ने दूसरा दृश्य दिखाया। कई कृष्णसर्प फण उठाये झूम रहे हैं। अनेक मयूर पंख फैलाये थन-गन नाच रहे हैं; किन्तु एक मयूर के गले में तो एक नागराज इस प्रकार लटक रहे हैं जैसे मयूर ने माला पहिन रक्खी हो। मयूर अपने नृत्य में मग्न है।

'कनू, वह भल्लूक !' दाऊ भैया का वाक्य पूरा होते-न-होते एक मोटा-सा रीछ दोनों ओर धनुष चढ़ाये पंक्तिबद्ध सावधान रक्षकों के मध्य से निकला और चढ़कर छकड़े के पार्श्व के काष्ठ पर आ बैठा। उसके हाथमें कोई कन्द है उज्वल-सा। उसे उसने कन्हैया की ओर बढ़ा दिया। कन्हैया ने एक बार माता के मुख की ओर देखा और कन्द ले लिया। मैया जब तक सावधान हों, तब तक तो रीछ छकड़े से उतर चुका। रक्षकों ने हँसकर उसे निकल जाने का मार्ग दे दिया। इधर दोनों भाइयों ने कन्दका भाग कर लिया और भोग लगाना प्रारम्भ कर दिया। 'माँ, बड़ा मधुर है! तू देख न !' लड़के बड़े चपल हैं, परन्तु माता ने सुन रक्खा है कि रीछ को स्वादिष्ट एवं गुणवाद् कन्दों का बहुत ज्ञान होता है। जब यह वन-पशु इस प्रकार भेंट दे गया है, तब अवश्य वह हानिकर नहीं होगा। उन्होंने कन्द को बच्चों के हाथ से लेकर फेंकने का प्रयत्न नहीं किया।

वह—वे दीखती हैं श्री यमुनाजी !' माता ने संकेत किया।

'वे उज्ज्वल दूध-सी ?'

'अरे नहीं, वह तो पुलिन है उनके तट के समीप का। उसके पास वह नीली-नीली धारा !'

'हाँ—मैं पुलिन पर भैया के साथ खेला करूँगा !' कन्हैया अभी से सोचने लगा है—वह श्रीयमुनाजी में पत्तों की नौकाएँ प्रवाहित करेगा, पुलिन पर खेलेगा, गिरिराज पर बहुत ऊँचे चढ़ जायगा, वृन्दावन की कुञ्जों में आँखमिचौनी खेलते समय छिपना सुविधा-जनक होगा। पता नहीं क्या और कितना सब एक साथ कर लेना चाहता है वह। दोनों भाइयों की मन्त्रणा समाप्त ही होने को नहीं आ रही है। माताएँ बच्चों की योजना सुन-सुनकर मग्न हो रही हैं। उनसे बीच-बीच में सम्मति माँगी जाती है और इस समय तो सब प्रस्ताव स्वीकार कर लेने में ही भलाई है। अभी से कौन श्यामसुन्दर को रूठने का अवसर दे।

'वह बरसाना दिखायी देता है ! वह ऊँचे पर श्रीवृषभानुजी का प्रासाद है !' श्रीरोहिणीजी माता यशोदा को दिखा रही हैं और श्यामसुन्दर एकटक उधर देखने लगा है। उसका मुख कुछ अद्भुत गम्भीर सा बन गया है।

× × × ×

'आप ग्राम में ही पधारें ! मेरा निवास भी तो पवित्र हो !' श्रीवृषभानुजी पुरोहित एवं अपने यहाँ के प्रतिष्ठित लोगों के साथ व्रजराज की अभ्यर्थना करने सीमा से बाहर तक आये हैं। छकड़ों में उपहार हैं, साथ में।

'मैं तो आया ही आप के यहाँ हूँ !' बाबा ने गले लगाया उन्हें। छकड़े रुक गये हैं और गोपगण निवास के योग्य उस समतल भूमि को चारों ओर से घूम-घामकर देखने में लगे हैं।

'यहाँ की व्यवस्था तो अब आप की ही है !'

'आप मेरे ग्राम को अपना लें तो मेरा सौभाग्य !' वृषभानुजी हिचक रहे हैं। क्योंकि नन्दव्रज को अपने ग्राम में मिला देने की बात तो अहङ्कार सूचित करती और व्रजराज का अपमान

वे सोच भी नहीं सकते। 'किंतु—जब तक यहाँ व्यवस्थित भवन नहीं बन जाते, कम-से-कम तब तक तो मुझे सेवा का अधिकार मिलना ही चाहिये !'

'आप का ग्राम तो सदा से ही मेरा है। ऐसा न होता तो गोकुल की नित्य की आपत्तियों से पीड़ित होकर आप के समीप आता ही कैसे !' नन्द बाबा तो पूरे भोले बाबा हैं। उन्हीं के योग्य है उनकी सरलता। 'मेरे भवन का क्या बनना और क्या व्यवस्थित होना ! व्रज—तो चलता, फिरता ही शोभा पाता है। अभी दो घड़ी में छकड़े व्यवस्थित हुए जाते हैं !' गोपों ने स्थान स्थिर कर लिया। छकड़े अर्धचन्द्राकार सजाकर खड़े किये जाने लगे। मध्य में व्रजराज के छकड़े रक्खे गये और दोनों पार्श्वों में छकड़ों की पंक्ति पतली होती गयी। सम्मुख श्रीयमुनाजी हैं ही। छकड़ों की पंक्ति के सम्मुख गौओं के लिये गोष्ठ निश्चित हुआ। श्रीगिरिराजजी की श्रेणियाँ पृष्ठभाग एवं वाम-पार्श्व को सुरक्षित किये हैं और दक्षिणपार्श्व में बरसाना है। इस प्रकार रक्षा की सम्यक् सुविधा सोच ली गयी।

× × × ×

श्रीवृषभानुजी के साथ उनके कुमार श्रीदामाजी भी आये हैं। मैया यशोदा ने संकेत कर के एक गोप के द्वारा बालक को अपने समीप बुला लिया। श्यामसुन्दर को तो किसी से मित्रता करते देर लगती नहीं। और भी बहुत-से बालक आये हैं बरसाने के। माता ने सबका सत्कार किया। बड़े आग्रह से सबको कुछ खिलाया-पिलाया। इतनी देर में ही कन्हैया ने उनसे मित्रता कर ली। दाऊ भैया और वे उनमें घुल-मिल गये। छकड़े खड़े होते ही साथ के भी सब बालक एकत्र हो गये थे। उनके परिचय में विलम्ब क्या होना है। बड़ों का परिचय ही समय की अपेक्षा करता है, क्यों कि उसमें स्वार्थ का प्रश्न होता है। बालकों ने तो एक दूसरे को देखा, एक क्षण संकोच रहा और दूसरे क्षण वे एक दूसरे का हाथ पकड़कर खेलने लगे।

कन्हैया को आज बहुत-से नवीन सखा मिले हैं। माता ने उन सबके सत्कार के साथ उसे कलेऊ करा ही दिया। बाबा और गोप छकड़ों की व्यवस्था में लगे हैं। मैया गोपियों को लेकर वस्तुओं को सज्जित कराने में लग गयीं। सब बालक श्रीयमुनाजी के पुलिन पर खेलने लगे। राम और श्याम अपने सभी सखाओं के साथ अत्यन्त प्रसन्न हैं। वे कभी श्रीयमुनाजी तक जाते हैं, कभी पुलिन पर रेत में उछल-कूद करते हैं, कभी वन में पुष्प-दल तोड़ते हैं और कभी गिरिराज की ओर देखकर ऊपर तक चढ़ने की बातें करते हैं। इस नवीन स्थान को कृष्णचन्द्र एवं बलरामजी के साथ सभी बालकों ने बहुत पसंद किया।

'श्यामसुन्दर कहाँ है ?' छकड़ों की व्यवस्था देखने के पश्चात् श्रीवृषभानुजी ने पूछा। उन्हें आशा थी कि वे उस नवजलधरसुन्दर को अचानक ही देख लेंगे; पर वह तो खेलने में लग गया सखाओं को लेकर।

बाबा ने पुकारा—पुलिन पर से दोनों भाई और सब सखा साथ ही आये। नन्द बाबा ने श्रीदामा को गोद में उठा लिया और श्रीवृषभानुजी ने एक ही साथ राम और श्याम दोनों को। बालक संकोच से चुप हो रहे हैं और वे दोनों वृद्ध—उनके अन्तर के आह्लाद ने उन्हें भी दो क्षण को मूक बना दिया है।

—❀⊂❀⊂❀—

ऊधम

"हे हे यशोदे तव बालकोऽसौ मुरारिनामा बसुदेवसूनुः।
आदाय वस्त्राभरणं मदीयं गतोऽतिदूरे यमुनानिकुञ्जे॥"

गोकुल से वृन्दावन में आकर मैया को संतोष हुआ, मथुरा दूर हो गयी। अब ये राक्षस रोज-रोज तंग नहीं करेंगे। कोई भूला-भटका आया भी तो इतनी दूर अकेला ही तो आयेगा। दल-के-दल तो आने से रहे। यहाँ इतने गोप हैं और अब तो बरसाने का मण्डल भी एक-ही-सा है। व्रजेश की शक्ति द्विगुण हो गयी है। कन्हैया के लिये अब वैसा कुछ भय नहीं है। यहाँ कन्हैया ने वह गोपियों के घर जाकर धूम करना छोड़ दिया है। वह अब दधि-माखन नहीं चुराता। गोपियों के उलाहने से छुट्टी मिली। यहाँ उसे बहुत नये सखा मिल गये हैं। वह सब के साथ सम्मुख पुलिन या उपवन में खेला करता है। वह यहाँ कितना संतुष्ट—कितना प्रसन्न रहता है। कितना सरल हो गया है। और यह कीर्ति की कन्या—मैया ने सम्मुख उपवन की ओर देखा। छोटे-छोटे बालक और वैसी ही बालिकाएँ, सब एक साथ उछलते, कूदते, हँसते खेल रहे हैं। यह वृषभानुकुमारी राधा—यह जैसे सबकी केन्द्र हो। सब उसका संकोच करते हैं। सब उसका आदर करते हैं और सबके झगड़े वह सुलझा देती है अपने भोलेपन से।

'कन्हैया कैसा एक हो गया है उसी दिन से, जब यह अपने आँगन में पहिले-पहिल अपने भाई श्रीदाम के साथ झिझकती, दुबकती आयी, श्याम दौड़ गया उसके समीप। किसी बालक से घुलते-मिलते उसे देर ही नहीं लगती और यह दोनों तो जैसे एकप्राण हो गये हैं। भगवान् ने ही बनायी है यह जोड़ी।' मैया पता नहीं क्या-क्या सोचती रही। उसके नेत्रों से बिन्दु गिर रहे थे। नेत्र ऊपर उठते और ओष्ठ कुछ हिलते थे। पता नहीं वह कौन-सी प्रार्थना कर रही थी अपने आराध्यदेव श्रीनारायण से।

'राधा भाभी! राधा भाभी!' मैया चौंकी। यह भद्र कितना नटखट है। लेकिन मैया का शरीर पुलकित हो गया है। कन्हैया भद्र से झगड़ने लगा है और लड़की का नन्हा पाटल मृदुल मुख कितना लाल हो गया है। ये सब लड़कियाँ उसी की ओर देखकर हँसने जो लगी हैं।

'अरे, ये सब श्रीयमुनाजी की ओर कहाँ जा रहे हैं!' मैया अब भला, अपनी भावना में कैसे तल्लीन रहती। 'यह दाऊ सबमें बड़ा है न, वह अपनी ही धुन में रहता है। अबतक तो लड़के-लड़कियों से अलग पता नहीं उस कदली के पत्ते को लेकर क्या कर रहा था और अब सबको ले चला धारा की ओर। मैया ने पुकारा। सेवक को दौड़ने को कहकर भी स्वयं द्वार तक दौड़ आयी।

× × × ×

'सुबल! देख तो तू ठीक निशान मारता है या मैं!' कन्हैया ने एक कंकड़ उठा लिया है अपने दाहिने हाथ में। वह एक ग्वालिन जा रही है यमुनाजी से घड़ा भरके। 'ऊपर के घड़े पर नहीं, नीचे वाले पर!' घड़े के ऊपर घड़ा सिरपर और एक बाईं ओर कक्ष में भी। बिचारी को क्या पता कि आज नयी विपत्ति आने वाली है।

'मैया से कह देगी तो!' सुबल का भय ठीक ही है। श्याम को मैया ने ऊखल से बाँध दिया था। भला, वह क्या भूलने योग्य दृश्य है। उसके ऊपर दो बड़े-बड़े वृक्ष गिरते-गिरते बचे थे, ओह!

'मैं क्या मक्खन चुराता हूँ !' सम्भवतः मैया मक्खन चुराने पर ही बाँधती है। कितना सुन्दर है यह तर्क। कदाचित् इसीलिये यह चोरी बंद हो गयी है। 'वह मोटी धारा से भीगकर कूदेगी। बड़ा मजा आयेगा। भद्र !'

'अरे, अरे, मैं मैया से कहूँगी.....' उस गोपिका की दृष्टि भी तो इधर ही है। वह सशङ्क हो गयी थी यह देखकर ही कि यह चपल उसी की ओर संकेत करके सखाओं से कानाफूसी कर रहा है। ये तीनों धीरे-धीरे उसके पीछे क्यों चलने लगे हैं ? मुख घुमाकर देखा तो कंकड़ लिये दो हाथ उठ चुके हैं। वह चिल्लाये-चिल्लाये कि 'भड़-भड़-भड़' तीनों घड़े फूट गये उसके। सिरसे पैर तक भीग गयी। ताली बजाते तीनों हँसते भागे और वह बाकी सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो रहे हैं।

फूटे घड़े झल्लाहट से फेंककर वह घूमी—पता नहीं क्रोध कहाँ चला गया। उसे स्मरण तक नहीं कि उसका शरीर पूरा भीग गया है। वस्त्रों से जल टपक रहा है। घरके लोग उलाहना देंगे। वह तो विस्मृत-सी, ठगी-सी एकटक देखने लगी है। वह श्यामसुन्दर भागा जा रहा है। वे अलकें लहरा रही हैं। वह मञ्जु हास्य गूँज रहा है। हँसते-हँसते उसका शरीर हिल रहा है। कितनी अद्भुत है यह छटा। कितना मनोहारी है यह दृश्य। उसे स्मरण ही नहीं आता, पर वह सखाओं के मध्य पहुँचकर उस नटखट ने घूसा दिखाया। हँसी आ गयी इसे भी। दाँतों से अधर दबाकर, मुख फेर कर अपने को सम्हाला। 'अच्छा' घर चलो !' वह मुड़ तो पड़ी कृत्रिम रोष का प्रदर्शन करके तीव्रता से, पर क्या इसी गति से जा सकेगी ? मुड़-मुड़कर डाँटने के बहाने क्या देखती जाती है फिर ?

'कनूँ, इसने मैया से कह दिया तो .....' भद्र के मुखपर चिन्ता के भाव आये।

'मैं कह दूँगा, दोनों घड़े मैंने ही फोड़े !' श्याम कहीं किसी सहचर को उदास देख सकता है।

'उहूँ, तू बोलना मत ! भद्र को क्या अपने लिये चिन्ता है ? वह तो डरता ही इसलिये है कि कहीं मैया श्याम को फिर न बाँध दे।

'मैं उसके सब घड़े फोड़ दूँगा !' दाऊ ने घूसा बाँधा। जैसे वह इस धमकी को सुन ही रही है।

सबने देखा, वह चली जा रही है, बार-बार पीछे देखती चली जा रही है। लड़कों ने भी पीछा किया उसका। कहीं वह मैया के पास ही तो नहीं जाती। अरे, वह तो सीधे नन्द-भवन में ही गयी। बड़ी तेज है यह गोपी। वह मानेगी नहीं। सबने मन्त्रणा की और भाग खड़े हुए। पुलिन छोड़कर वे सब चले गये समीप की कुञ्जों में।

'आज सब अब तक लौटे नहीं।' मैया ने देखा कि कोई बालक सम्मुख पुलिन पर नहीं है। 'देर हो गयी सबको भवन से बाहर गये। मध्याह्न होने को आया। पता नहीं सब कहाँ चले गये। खेल में लगने पर इन सबों को भूख का कहाँ पता होता है। गये कहाँ ? पता नहीं किधर निकल गये।' मैया तो पल-पल पर व्याकुल हो उठती है। एक, दो, चार, उसे ढूँढ़ने वालों पर विश्वास ही नहीं। एक को भेजा और वह द्वार से बाहर गया कि दूसरे को भेजने लगी।

'देर हो गयी, मैया बुला रही है।' आज किसी ने आने में आना-कानी नहीं की। सबने एक दूसरे का मुख देखा। सबने समझ लिया कि संदेश में ऐसी ध्वनि तो है ही कि मैया से उस गोपी ने कुछ कहा नहीं। अब चलने में देर करना ठीक नहीं। सब घर आये और देखा, वह गोपी नहीं है। मैया तो केवल विलम्ब का उलाहना देकर रह गयी।

यह क्या—कलेऊ करके सब उठे और वह तो आ धमकी। ठीक तो है, भला, घर जाकर वस्त्र बदले बिना क्या गीले वस्त्रों ही वह मैया के पास आती।

'मैया, यह गोपी है न ?' भद्र ने देखा कि वह कुछ कहे और श्याम डाँटा जाय, इससे पहिले वह सब दोष अपने सिर ले ले।

'मैंने आज इसका एक घड़ा फोड़ दिया !' कन्हैया ने मैया के गले में दोनों हाथ डालकर विचित्र भङ्गी से बात कह दी। भद्र को रोष आया—'यह कनूँ उसे बोलने भी नहीं देता।' लेकिन श्याम तो मैया को, इस ग्वालिन को, किसी को बोलने नहीं देना चाहता। वह तो कहता ही गया—

'मैया, यह देख कितनी पतली है। दो घड़े तो सिर पर भरकर रक्खे थे और एक बगल में। ऐसे चलती थी।' सचमुच नटखट ने उठकर उसके चलने का पूरा अभिनय दिखा दिया। ग्वालिन ने मुख फिरा लिया! मैया खुलकर हँस पड़ी।

'यह तो अवश्य कमर पर से टूट जाती। भला, कोई इतना भार उठाता है। इतने बड़े-बड़े घड़े।' दोनों हाथ पूरे फैलाकर कन्हाई ने बताया। 'मैंने एक कंकड़ मारकर एक घड़ा फोड़ दिया कि थोड़ा भार तो कम हो। मैया, फिर इसने बाकी दोनों घड़े अपने ही पटक दिये और झल्लायी चली आयी। तू इसे मार तो! यह दो घड़े क्यों फोड़ आयी?' वह भङ्गी, वह भोला मुख—कोई क्या उलाहना दे और क्या डाँटे। मैया हँस रही है और वह भी हँस रही है।

'क्यों री, तू इसी प्रकार घड़े फोड़ती है!' मैया ने हँसते-हँसते डाँटने का अभिनय किया। बच्चों ने ताली बजायी और वह गया कन्हैया तो उनके साथ। वह तो द्वार से बाहर हो गया उछलता, कूदता। सब एक-दूसरे को ठेलते कैसे प्रसन्न दौड़े जा रहे हैं। वह ग्वालिन देखती रह गयी। मैया पुकारती रही—'अरे, दूर मत जाना!'

× × × ×

नन्दगाँव में यही एक तो पनघट नहीं है। अब तक तो अनेक घाटों से सब जल भर ले जाया करती थीं। अब सब को यहीं जल भरना है। नन्दग्राम की ही नहीं, बरसाने की गोपियों को भी यहीं जल भरना है। कन्हैया को तो एक ऊधम चाहिये। इन सबों के पास कदाचित् घड़े बहुत हैं। जान-बूझकर नहीं तो यहीं जल भरना क्या—श्याम और उसके सहचर—यह उछलती, कूदती सहस्रशः बालकों की मण्डली—भला, इससे कोई घड़ा बचकर कैसे निकल जाय। बचकर ही निकलना होता तो वह और कहीं भरा जाता या इन उपद्रवियों का समय बचाकर घाट पर पहुँचा जाता। लेकिन यहाँ तो जितनी उत्कण्ठा, जितना उल्लास घड़ा फोड़ने वालों में है, उससे कम घड़ों में तथा घड़ेवालियों में नहीं है कि उनका घड़ा फूटे ही।

उलाहने—वे तो एक बहाने हैं कन्हाई को फिर से देखने के। मैया के आगे वह जैसे मुँह बनाता है, जैसी युक्तियाँ गढ़ता है, उसको देखने-सुनने का लोभ कौन संवरण कर ले। मैया क्या करे! वह नित्य उलाहने सुनते कदाचित् अभ्यस्त हो गयी है। वह भी कदाचित् जानती है कि ये गोपियाँ उसके नीलमणि की वह अद्भुत बालभङ्गी देखने के लिये ही ये सब बहाने बनाकर आती हैं। वह जब रोष की मुद्रा बनाती है, डाँटना चाहती है, तब ये सब तो श्याम के पक्ष में होकर उसकी अनुनय करने लगती हैं, और सच्ची बात तो यह है कि कन्हैया के मुख को देखने पर रोष आ कैसे सकता है।

यह गोपी है तो चतुर—आज यह ताम्र-कलश ले आयी है। 'अब फोड़ दो तो जानूँ!' जैसे आज उसके नेत्रों में चुनौती है। कैसी मटकती गयी है वह तट तक।

'हूँ!' नटखट ने संकेत किया मधुमङ्गल को। कन्हाई भला यह चुनौती सह लेगा? उसने वह रक्खा एक कलशा माँजकर तटपर और दूसरे को भरने लगी। 'भल्-भल् ठन्-ठन्!' और लाओ कलश। एक लाठी से ठेल दिया उसे और वह चला जल फेंकता, लुढ़कता वह यमुनाजी में। हाथ का कलश छोड़ गोपिका उसे सम्हालने झुकी तो इस कलश को लुढ़का दिया। अब जल में उतरे बिना छुटकारा नहीं। कलश तो वह कटि से नीचे जल में जा पहुँचा। बालक हँसते-कूदते दूर जा खड़े हुए। वे ताली बजाते, कूदते, हाथ नचाकर चिढ़ाते जा रहे हैं। अब यह कितना भी झल्लाये, सुने कौन।

'कनूँ, इसको कैसे छकायेगा तू?' सचमुच बात तो टेढ़ी है। यह तो एक ही कलश ले आयी है और उसे लेकर ही स्नान कर रही है।

'तू देख तो!' कन्हैया ने सखा की ओर इस प्रकार देखा, जैसे कहता हो कि हम सब क्या इससे कम चतुर हैं; और सचमुच वह दौड़ा-दौड़ा गया, तट पर रक्खे उसके वस्त्र उठाकर भागा,

भागा, वह भागता जा रहा है। वह चिल्ला रही है बिचारी और लड़के हँस रहे हैं। कन्हैया तो वस्त्र पता नहीं कहाँ, किस कुञ्ज में छिपाकर लौटा है। अँगूठे दिखाकर वह कैसा मुख बना रहा है।

× × × ×

'कनूँ !' भद्र के सम्बोधन में आज रहस्य है। अरे, आज ये लड़कियाँ नन्ही-नन्ही लुटिया-सी स्वर्ण-कलशियाँ लेकर जल भरने कैसे आ गयीं ? भला, इनको क्या पड़ी है जल भरने की और ये कीर्तिकुमारी.....भला, इनकी कलशी कौन लुढ़कायेगा ? भद्र यही सब लिये सम्भवतः श्याम को सम्बोधन करके मुस्करा रहा है।

'मैं आज जल लाऊँगी।' पिता की पूजा के लिये जल लेने का हठ श्रीराधा ने आज क्यों किया, यह तो वे ही जानें; किंतु जब वे छोटी स्वर्णकलशी लेकर चल पड़ीं, तब उनकी सहेलियों को साथ आना ही था। जल भी भरना है इसी व्रजराज के घाट पर। श्याम सबके घड़े फोड़ देता है, यह देखने की स्पृहा खींच नहीं लायी इन्हें—कौन कह सकता है।

जैसे बालक, वैसी बालिकायें। अपनी-अपनी कलशी लिये वे निकलीं और विनोदपूर्वक कुछ ने बालकों को चिढ़ा दिया अँगूठा दिखाकर। अब बालक हार कैसे मान लें। कन्हैया की ओर सबकी दृष्टि गयी। श्याम ने झटपट कुछ कहा और सब एकत्र हो गये। एकत्र होकर घाट के पास आ गये।

'तुम सब ने हमारे घाट पर जल क्यों भरा ? हमारा कर दे दो, तब आगे जाओ !' भला, श्रीयमुनाजी में जल भरने का भी कोई कर होता है; लेकिन इस व्रज के लड़ैते से कौन तर्क करे। यह मयूरमुकुटी पटुके को कटि से कसे सबसे आगे दोनों पैर फैलाकर दृढ़ मुद्रा में जो आ डटा है और उसके पीछे खड़ी है उसकी यह अपार सेना।

श्रीवृषभानुकुमारी ठिठक गयीं। उन्होंने पीछे देखा सखियों की ओर। सब एक दूसरे का मुख देखकर धीरे-धीरे मुस्करा रही हैं। 'अब क्या होगा ?' शङ्का भी है।

'तुम्हारा घाट कहाँ से आया ? हमारा मार्ग छोड़ो, नहीं बाबा से कह देंगी। जमुनाजी पर भी कहीं कर लगता है !' पीछे से किसी ने साहस किया बोलने का।

'जा, तू कह देना; जल तो मैं ऐसे ले नहीं जाने दूँगा !' कन्हैया को क्या इस प्रकार कोई धमका सकता है। उसे और उत्तेजना मिली।

'मुझे देर होती है !' कीर्तिकुमारी और क्या कहें।

'मैं क्या करूँ !' लेकिन यह नटखट मानता कहाँ है।

'हम तो जायँगी !' सखियों ने हठपूर्वक बढ़ाया पद आगे और यह लो—श्याम ने लपक कर कलशी पकड़ी और लुढ़का दी। छीना-झपटी चलने लगी। बालक ताली बजाने और कूदने लगे। विजय तो उनकी ही है।

लड़कियों ने उलाहना दिया होगा ? छिः—वे भीग गयीं थीं, छीना-झपटी में किसी के वस्त्र फटे, किसी के आभूषण टूटे और भला, जल तो क्या आता उनके साथ। घर पर बड़ी विचित्र सूचना दी उन्होंने—कोई फिसल गयी थी, उसे नन्दनन्दन ने दया करके उठा दिया था। कोई बंदर के भय से भागी थी—कृष्णचन्द्र ने बंदर को भगाकर उसकी रक्षा की थी, कोई अचानक वस्त्र झाड़ी में उलझने से गिरी थी, श्यामसुन्दर ने उसे दौड़कर खड़ा कर दिया था। इसी प्रकार.....।

कन्हैया तो ऊधमी है ही और उसके ये सहचर उससे बढ़कर हैं। फिर जब सबको उनके क्रीड़ाक्षेत्र में ही आना है, उसके ऊधम के बिना जब इन सब को चैन नहीं पड़ती, तब वह ऊधम करे क्यों नहीं। उसके ऊधम—ऊधमों के नये-नये रूप...चलते ही रहते हैं वे।

गो-दोहन

"गावो मे ह्यग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे सर्वतः सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥"

"बाबा, नन्दिनी को मैं दुहूँगा !" पता नहीं कैसे कन्हैया आज सबेरे सोते से उठ गया और मैया की दृष्टि बचाकर खिरक में आ गया है। उसने बाबा का हाथ पकड़ लिया और दोहनी लेने के लिये हठ करने लगा। मैया ने उसे अवश्य ही उठते देखा नहीं है। निद्रा से उठने के सब चिह्न अभी उसके मुख पर हैं। अब भी वह जम्हाई लेता है छोटा-सा मुख खोल कर और पलकें तो भारी हैं ही। दोनों हाथों से नेत्र मलते ही आया है यहाँ। अलकें मुख पर, भाल पर बिखर गयी हैं। पटुके का पता ही नहीं है। गले की मुक्तामाल उलझी पड़ी है। कटि की कछनी अस्त-व्यस्त हो रही है। आते ही वह बाबा की दक्षिण भुजा पर शरीर का पूरा भार देकर उझक पड़ा।

'तू अभी छोटा है; देख, दाऊ भी तो दूध नहीं दुहता ! बाबा ने गोद में खींच लिया श्याम को। उसकी अलकें सुधारने लगे वे।

'भद्र तो दुहता है, यह तो मुझसे छोटा है !' कन्हैया क्या इतनी जल्दी माननेवाला है। सचमुच भद्र तो गायें दुहता है; पता नहीं कितने दिनों से दुहता है। कल उसी ने तो श्याम को बताया था कि वह कैसे गो-दोहन करता है, कितनी मोटी धार निकालता है। श्रीकृष्ण ने तो तभी निश्चय कर लिया था कि कल वह भी अवश्य दुहेगा। वह क्या भद्र से कुछ दुर्बल है।

'तू छोटा है मुझ से ! मैं कहाँ छोटा हूँ।' भद्र यह कैसे सह ले कि कन्हैया उसे छोटा बताये। 'बाबा, कनू मुझसे छोटा है न ? तुझे नापना हो तो आ !' बाबा बतावें भी कि भद्र लगभग ढाई महीने छोटा है तो क्या वह मान लेगा ! वह तो नापकर निश्चय करने को खड़ा हो गया है।

'आ !' कन्हैया ही भला, अपने को छोटा कैसे माने वह झटके से बाबा की गोद से उठ खड़ा हुआ, दोनों पास-पास सटकर खड़े हुए। दोनों ने एक दूसरे के कंधों पर हाथ रक्खा और दोनों ने नीचे झुककर देखा कि कोई ऊँचाई पर तो नहीं खड़ा है। दोनों ने मस्तक झुकाकर सटाया और इसी समय कन्हैया पैर के अगले भाग पर खड़ा हो गया। भद्र ने भी उसका अनुकरण किया। 'मैं बड़ा हूँ !' दोनों की एक ही बात और जब ऐसे काम न चला तो वे कूदकर ऊँचाई सिद्ध करने का प्रयत्न करने लगे।

बाबा ने आज गोदोहन समाप्त कर दिया है। कन्हैया आया तो वे उठने ही जा रहे थे। अब तो उनके नेत्र बालकों के चञ्चल मुख पर लगे हैं। दोनों ने उन्हें पकड़ लिया। श्याम दाहिनी भुजा से उलझ गया और भद्र बायीं से। दोनों की माँग है कि बाबा बता दें कि दोनों में बड़ा कौन है। बाबा क्या बता दें ! वे तो इसीसे प्रसन्न हैं कि श्याम को गो-दोहन की बात तो भूल गयी। उन्होंने कह दिया 'तुम मैया से पूछ लो !'

'मैया ! मैया !' दोनों कूदते, दौड़ते भीतर पहुँचे।

'अरे, तू कहाँ भाग गया था ? मैं तुझे ढूँढ रही थी। चल, मुख धो !' मैया बड़ी व्यग्र हो उठी थी श्याम को न देखकर। वह इधर-उधर घर में पुकारने और ढूँढने लगी थी। उसने दोनों को गोद में लेना चाहा।

"मैं भद्र से बड़ा हूँ न ?" श्याम अपनी धुन में है।

"मैया, यह कनू मुझसे छोटा है, फिर भी मुझसे झगड़ता है!' भद्र ने मैया का हाथ झकझोर दिया।

"तुम दोनों बड़े हो; चलो, कलेऊ करो मुँह धोकर!" मैया हँस पड़ी। अच्छा झगड़ा ले आये ये सब सबेरे-सबेरे।

'नहीं मैं बड़ा हूँ!' दोनों अपनी-अपनी ओर खींचने लगे मैया को।

'भद्र तो बाबा का है न?' मैया ने सीधा उपाय निकाल लिया। भद्र बाबा के साथ ही सोता है, बाबा के पास ही रहता है; तब वह बाबा का और कनू मैया का है—इसमें तो पूछना ही क्या।

'बाबा का है तो क्या!' कन्हैया ने कहा तो, पर उसकी चञ्चलता कुछ शिथिल-सी हो गयी है। वह सम्भवतः समझ गया है कि अब वह हारेगा। स्वर में उत्साह के बदले झल्लाहट ही अधिक है।

'इसी से तो मैं तुझसे बड़ा हूँ!' भद्र ने मैया का हाथ छोड़ दिया और उछलने लगा।

'मैं तो गाय दुहूँगा!' इस झगड़े में विजय न मिलती देखकर श्याम अपनी हठ पर आ गया।

'गाय तो सब दुही जा चुकीं।' भद्र ने चिढ़ा दिया उसे अँगूठा दिखाकर।

'यह भद्र बड़ा नटखट है!' मैया ने श्याम का पक्ष लिया। 'महर्षि शाण्डिल्य से तेरे बाबा मुहूर्त पूछ लेंगे आज। तू पूजा करेगा न गायों की। भला, बिना पूजा के भी कहीं कोई गाय दुहना प्रारम्भ करता है! चल, मुख धो ले! भद्र तो बिना पूजा के गाय दुहता है!'

बात तो ऐसी ही है। भद्र जब से चलने लगा है, तभी से वह बाबा के समीप ही सोता है। एक दिन उसको बाबा के पास सायंकाल खेलते-खेलते निद्रा आ गयी और तभी से वह और कहीं सोता ही नहीं। अपने घर तो भला, वह क्या रहेगा। जागते समय तो वह शिशु था, तब भी अपनी माता की गोद में नहीं रहा है। उसकी माँ बड़े सबेरे उसे ले आती। देर होने पर रोते-रोते वह सब को तंग कर लेता। नन्दभवन में जेठानी को पुत्र देकर माँ चली जाती यह कहकर कि 'अपने लाड़ले को सम्हालो!' रात्रि में जब वह सो जाता, माता आकर उठा ले जाती। यह क्रम भी थोड़े ही दिनों चला। घुटनों चलने लगा वह और घर जाना बंद हुआ। रात्रि में निद्रा टूटते ही जब वह रो-रोकर हिचकियाँ लेने लगता तो उसी समय नन्द-भवन पहुँचाना पड़ता उसे। कब तक यह क्रम चल सकता था। उसने मैया का ही दूध पिया श्याम के साथ और मैया की गोद में ही वह पला; पर पता नहीं क्यों वह मैया की अपेक्षा बाबा से अधिक हिल गया और उन्हीं के पास सोने लगा। बाबा को रात्रि के तृतीय प्रहर में ही उठ जाना ठहरा। वे गायों की सेवा और गो-दोहन सेवकों पर छोड़ नहीं सकते। वृन्दावन आने पर भद्र की नींद टूटी एक दिन और वह ढूँढ़ते-ढूँढ़ते बाबा के पास खिरक में जा पहुँचा। इस क्रम में वह गो-दोहन करने लगा। बाबा उसे मना कर नहीं सकते थे, वह रूठता जो बड़ी जल्दी है और पूजा की ओर ध्यान ही नहीं गया किसी का। लेकिन कन्हैया जो गो-दोहन की हठ किये बैठा है।

'मैं तो कल ही दुहूँगा!' श्याम ने किसी प्रकार मुख धुलाया और कलेऊ किया।

× × × ×

'मैं इस हेमा को दुह लूँ!' श्याम आज फिर सबेरे उठ गया। चुप-चाप कहीं से एक छोटी-सी लुटिया उठा लाया है वह। उसे पता है कि यदि मैया जान जायगी तो रोक लेगी। मैया उसके लिये मक्खन सँवारने और दूध देखने में लगी और वह चुपके से उठकर खिसक आया। बाबा ने देखा और बलात् हँसी आ गयी उन्हें। यह कृष्णचन्द्र उनसे भी डरता है। वे कहीं रोक न दें, इसलिये उनसे भी दूर एक बछड़ी को दुहने बैठ गया है। सोने-सी पीली बछड़ी—अभी वह पिछले साल की ही तो है, अभी तो एक वर्ष लगेगा उसे बच्चा देने में; लेकिन श्याम तो उसीको दुहने बैठा है और वह भी उसका मस्तक सूँघ रही है। बाबा के हाथ रुक गये, उनका दुहना बंद हो गया। वे

देखने लगे अपने पुत्र की क्रीड़ा। कन्हैया बार-बार उनकी ओर देखता है। उसने दोनों घुटनों के बीच में लुटिया दबा ली है और ठीक दुहने की मुद्रा में बैठ गया है।

'उसका बछड़ा कहाँ है ? तू बिना बछड़े को पिलाये दुहेगा कैसे ?' भद्र ने भी देखा श्याम को। उसने चिढ़ाने का प्रयत्न किया।

'बछड़ा, बछड़ा कहाँ है ?' कन्हैया ने लुटिया तो नीचे रख दी और इधर-उधर देखने लगा। सचमुच इस हेमा का बछड़ा तो कहीं दीखता नहीं। बछड़ा हो या न हो, उसे तो दूध दुहना है—दुहना ही है आज और वह भी इसी हेमा को। एक क्षण सोचा उसने और तब स्वयं मुख लगाकर पीने लगा उस बछड़ी के छोटे-छोटे स्तनों को। अनेक बार वह गायों के स्तन इस प्रकार पी चुका है, तब आज बछड़े के बदले क्यों नहीं पी सकता।

'कनू तो बछड़ा है !' भद्र ने दुहना छोड़ दिया और ताली बजाने लगा। बाबा का ध्यान इधर नहीं। वे तो कृष्णचन्द्र की ओर देख रहे हैं। यह हो क्या रहा है ? बछड़ी ने कोख नीची की, पैर फैलाये, मूत्र किया और उसके स्तन तो फूल कर मोटे-मोटे हो गये हैं ! तब क्या सचमुच श्याम दूध पी रहा है ? दूध ही तो पी रहा है, क्योंकि बछड़ी के शेष तीन स्तनों से तो उज्वल दूध की धारा गिरने लगी है। वह अद्भुत भङ्गी से शान्त खड़ी है। बड़ी बात क्या है ? व्रज में साधारण गायें तो कभी थीं नहीं और सच तो यह है कि गौ कभी साधरण होती ही नहीं। वह तो नित्य काम-दुघा है और व्रज में ये जो गो-लोक की सुरभियाँ हैं·····कोई उनसे दूध के अतिरिक्त अन्य कामना करे ही नहीं तो वे क्या करें। जो त्रिलोकी के समस्त ऐश्वर्य को सहज दे सकती है, उसके पास उसका नित्य गोपाल दूध के लिये आ बैठा तो वह दूध भी न दे सकेगी ?

'तेरा दूध तो सब भूमि पर गिर रहा है !' भद्र ने पुकार कर सावधान किया। कन्हैया तो दूधके स्वाद में भूल ही गया था कि वह दुहने आया है। भद्र की पुकार ने उसे सावधान किया। मुख हटाकर उसने देखा—दूध तो सचमुच भूमि पर गिर रहा है। शीघ्रता से लुटिया उठा कर उसमें दूध लेने लगा वह। भूमि पर दूध गिरे तो उसका उपहास होगा। भद्र कहेगा कि उसे दुहना नहीं आता। पर छोटी-सी लुटिया में चारों थनों की धार आये कैसे। एक को लेने के प्रयत्न में दूसरी धार नीचे जाने लगती है।

'बाबा, तुम अपनी दोहनी दो !' श्याम की लुटिया तो भर गयी। उसने लुटिया बाबा को दी और दोहनी के लिये हठ करने लगा। हेमा के स्तनों से दुग्धधारा गिरती जा रही है। अब तो वह ऐसे ही गोपाल के लिये दूध दिया करेगी। श्याम ही जिसका बछड़ा है, वह अब और कोई बछड़ा-बछड़ी क्यों दे।

'तू ने दूध दुह लिया न, अब रहने दे !' बाबा ने दोनों हाथ बढ़ाकर कृष्णचन्द्र को गोदमें उठा लिया; किंतु दूसरे ही क्षण इस चञ्चल को धुन सवार हुई मैया को बताने की। वह अपनी लुटिया लेकर घर में भागा।

× × × ×

मुहूर्त तो जैसे श्याम की इच्छा की प्रतीक्षा किया करते हैं। बाबा ने पूछा और महर्षि शाण्डिल्य ने दूसरे ही दिन प्रातःकाल गोदोहन का मुहूर्त बता दिया। कल प्रातः श्याम गो-दोहन करेगा। आज उसने एक बछड़ी से दूध ले ही लिया तो क्या हुआ। ऐसे तो वह सदा ही मुख लगा कर गायों को पी लेता है। व्रज में महोत्सव की योजना बनी-बनायी है। गोष्ठ स्वच्छ हो रहे हैं, सजाये जा रहे हैं। गायों और बछड़ों का शृङ्गार हो रहा है।

'मैं इसी दोहनी में नन्दिनी को दुहूँगा !' श्याम ने अपनी नवीन सोने की मणिजटित दोहनी छाँट ली है। दाऊ ने अपनी दोहनी पर चिह्न बना दिया है। फिर दूसरे गोप-बालक भी तो हैं। यहाँ तो सभी महोत्सव साथ-साथ ही चलते हैं।

रात्रिभर नन्द-भवन में गोपियों और गोपों की भीड़ लगी रही। ब्राह्ममुहूर्त में ही गोष्ठ में महर्षि शाण्डिल्य का विप्रों के साथ स्वस्तिपाठ प्रारम्भ हो गया। दाऊ एवं सखाओं के साथ कन्हैया

ने गायों का पूजन किया, चञ्चल बछड़ों के मस्तक पर तिलक लगाकर उनके गले में पुष्प-माला पहिनायी। सबको मोदक, पूप, यवस आदि से तृप्त किया। गायों के तृप्त हो जाने पर सामगान, भेरी-घोष एवं गोपियों के मङ्गल-गान के मध्य गोपाल के करों में बाबा ने दोहनी दी। उसने धीरे से नन्दिनी के उज्ज्वल बछड़े को छोड़ दिया। चञ्चल बछड़ा तो माता के पास जाता ही नहीं। वह तो कन्हैया को सूँघ-सूँघ कर फुदकने लगा है। नन्दिनी बार-बार हुंकार कर रही है।

'तू थोड़ा-सा दूध पी ले तो मैं दुहने लगूँ।' कन्हैया ने दोहनी भद्र को दी और दोनों हाथ गले में डालकर बछड़े को पकड़कर ले गया उसकी माता के समीप। 'ले, दूध पी!' बछड़े ने तब स्तनों में मुख लगाया, जब उसका मुख वहाँ श्याम ने पहुँचा दिया।

कन्हैया जैसे ही दोहनी लेकर बैठा, बछड़ा दूर कूदने लगा। नन्दिनी के स्तनों का उन कोमल अङ्गुलियों के स्पर्श करते ही दूध की मोटी धारा गिरने लगी स्तनों से। साथ ही वे लक्ष-लक्ष गायें हुंकार करने लगीं।

'मैं सबको दुहूँगा!' बाबा ने जैसे ही कन्हैया के हाथ से दोहनी ली, वह दूसरी दोहनी उठाकर कामदा के नीचे जा बैठा। ठीक भी तो है, आज किस गौ को वह इस सौभाग्य से पृथक् कर दे। सभी हुंकार कर रही हैं और सभी के स्तनों से दुग्धधारा स्वतः चलने लगी है। दाऊ तथा गोप-बालक भी गो-दोहन में लगे हैं और लगे हैं बड़े विचित्र ढंग से। कन्हैया नन्दिनी के नीचे से उठा तो वहाँ भद्र आ बैठा और स्वयं श्याम भी तो दाऊ के स्थान पर ही कामदा के नीचे जा बैठा है।

'पात्र लाओ!' थोड़ी देर में नित्य के पात्र तो पूर्ण हो गये। आज श्याम गो-दोहन कर रहा है पहिले-पहिल। आज समस्त देव-मन्दिरों में पूरे आठ प्रहर अखण्ड दूध की धारा चढ़ेगी श्रीविग्रहों पर। समस्त ब्राह्मणकुलों को आज बाबा के यहाँ पायस का प्रसाद ग्रहण करना है और उनके पश्चात् नन्दग्राम एवं बरसाने के सभी नर-नारी बिना किसी भेद के आज बाबा के द्वारा आमन्त्रित हैं; आज तो कन्हैया के हाथ से दुहे दूध का पायस प्राप्त होना है।

'पात्र लाओ! पात्र लाओ!' गोपों में दौड़ा-दौड़ मच गयी है। आज किसी वयस्क ने गायों का स्तन स्पर्श नहीं किया है। केवल बालक दुह रहे हैं। दुहने का तो नाम है, वे केवल अँगुली लगाते हैं। लक्ष-लक्ष गायों के स्तनों से अखण्ड दूध की धारा गिर रही है। इतना दूध गायों के शरीर में कहाँ से आता है? आज वे सब क्या दूध ही बन जायँगी? धाराएँ तो रुकने का नाम नहीं लेतीं। घरों में दूध तो क्या, जल तक के पात्र दूध से भर गये। महर्षि की आज्ञा से भगवान् गोपेश्वर का सहस्रधारा से दुग्धाभिषेक भी चल रहा है; पर दूध का स्रोत तो जैसे अनन्त हो गया है।

गायें हुंकार कर रही हैं। बछड़े फुदक रहे हैं। गोपियाँ मङ्गलगान कर रही हैं। ब्राह्मण वेदध्वनि में लगे हैं। गोष्ठ से बाहर मङ्गलवाद्य बज रहे हैं। बालक एक गाय के नीचे से उठकर दूसरी के नीचे जा बैठते हैं। गोप दुग्धपात्र उठाने, भरने, ढोने में व्यस्त हैं। गोष्ठभूमि दुग्ध से पिच्छल हो चुकी है। बालकों के अङ्ग दूध के बिन्दुओं से भूषित हो रहे हैं। कन्हैया के श्याम अङ्ग पर ये छोटी उज्ज्वल बूँदें बड़ी भली लगती हैं। वक्ष, बाहु, मुख और भाल पर पता नहीं कितनी छोटी-बड़ी बूँदें हैं। अलकों पर भी वे उलझी-सी अटकी हैं।

आकाश में अरुणिमा आयी दिशाओं का राग भूमि पर प्रतिफलित हुआ। महर्षि शाण्डिल्य ने श्यामसुन्दर के समीप जाकर स्नेह से कहा—'अब गो-दोहन समाप्त करो!'

'सब गायें दुही गयीं।' कन्हैया ने दुग्धसीकरों से मण्डित अलकें सम्हालीं, एक बार चारों ओर देखा। सचमुच वह सभी गायों को दुह चुका है। महर्षि का आदेश वह कभी टालता नहीं। पूरे दिन और रात्रि मन्दिरों में अखण्ड दुग्धाभिषेक होता रहा, गोपियों का मङ्गलगान दिनभर और रात्रिभर चलता रहा और पायस—उस सुरदुर्लभ पायस से तो व्रज के मर्कट-मयूर तक आकण्ठ तृप्त हो गये हैं आज।

× × × ×

कृष्णचन्द्र अब गायें दुहने लगा है। जब तक वह गोष्ठ में न आ जाय, गायें दूध देना नहीं चाहेंगी। गो-दोहन का समय आया और सब द्वार की ओर मुख उठाकर हुंकार करने लगीं।

श्याम न आये, तब तक कोई बछड़े को मुँह न लगाने देगी और बछड़े ही कौन-सा दूध पीने चले हैं। यदि कन्हैया के आने से पहिले किसी ने भूल से बछड़ा छोड़ दिया तो वह कूदता-फाँदता सीधे नन्दभवन में चला जायगा और फिर कन्हैया को सूँघकर, अपने सिर से उसको धीरे से ठेलकर, हुंकार कर उलाहना देगा कि 'तू बड़ा आलसी है। अब तक यहीं है। मेरे साथ कूदता दौड़ता चल और दूध पी ले !'

मैया जानती है कि गायों की हुंकार कान में पड़ी और उनका नीलमणि भागा। फिर वह किसी के रोके रुकने का नहीं। बाबा अब गो-दोहन अरुणोदयकाल में कराते हैं; किंतु मैया को लगता है कि इतनी शीघ्रता क्यों रहती है व्रजेश को। ऐसी क्या जल्दी कि मोहन को शीघ्र जगाना पड़े। जगाना तो पड़ता ही है। क्योंकि यदि पहिले उठाकर मुँह न धुला दिया जाय तो वह बिना मुँह धोये ही गोष्ठ में भाग जायगा। कलेऊ तो वह गोदोहन के पीछे ही करता है।

श्याम गोष्ठ में पहुँचा और बछड़ों ने उसे घेर लिया। बछड़े उसके ठेलने पर माता के स्तनों से मुख लगाते हैं। जिस गौ के पास वह जायगा, उसके बछड़े को ठेलकर लगा देगा और बछड़ा एक-दो बार मुख चलाकर कूद खड़ा होगा। भला, श्याम दूध ले—इससे पहिले कौन दूध पिये। बछड़े सचमुच दूध तो पीते हैं गायों के दुहे जाने के बाद।

कन्हैया, दाऊ, भद्र—सब-के-सब दोहनी लेकर बैठ जाते हैं। गौएँ सम्भवतः प्रतीक्षा करती हैं। उनके स्तनों से बालकों की अंगुलियाँ लगीं और दूध की धारा चलने लगी। फिर तो गोपों का पात्र उठाना और भरना भर रह जाता है।

गोदोहन के अनन्तर बड़ी सावधानी से गोप बालकों के निकलते ही गोष्ठ का द्वार बंद कर देते हैं। द्वार न बंद किया जाय तो सब बछड़े श्याम के साथ नन्द-भवन में भीतर भाग जायँ। ये दूध पीयें ही नहीं।

उस दिन कन्हैया पूर्णा को दुह रहा था। उसकी बाहु, भाल और अलकों पर दूध के उज्ज्वल सीकर चमक रहे थे। पूर्णा का बछड़ा गौरव उसके चारों ओर कूद रहा था। कूदते-कूदते उसने अपनी कुछ नन्ही जिह्वा से श्याम की भुजा चाट ली। कन्हैया ने उसकी ओर देखा। बछड़ा कूद गया।

'कन्हैया तो जूठा हो गया—बछड़े का जूठा! हम इसे न छुएँगे !' भद्र ने देख लिया बछड़े को चाटते। दाऊ और भद्र दोनों ने चिढ़ाना प्रारम्भ किया।

'मैं छू लूंगा तुमको !' श्याम ने दोहनी रख दी और दौड़ा। दोनों गायों के इधर-उधर दौड़ने लगे।

'बाबा, यह भद्र मुझे जूठा बताता है और दाऊ भी !' बाबा के पैरों से जाकर वह उलझ गया।

'बाबा, इसे गौरव ने चाटा है, यह जूठा है !' भद्र और दाऊ ने भी बाबा का एक-एक हाथ पकड़ा और हाथ पकड़े-पकड़े ही वे बाबा के पीछे छिप गये।

'बड़ा अच्छा है, बछड़े का जूठा तो पवित्र होता है। बछड़ा न पीये तो गो-दोहन कैसे होगा! बछड़े का जूठा दूध तो नारायण को अर्पित होता है !' बाबा ने समाधान किया।

'मैं तो पवित्र हूँ, तुम दोनों से पवित्र हूँ। अब मैं तुम्हें नहीं छूऊँगा !' अब कन्हैया की बारी थी। वह बाबा को छोड़कर भागा गोष्ठ से बाहर। भला, मैया को छोड़कर वह जा कहाँ सकता है।

'मैया, मैं इन दोनों को नहीं छूऊँगा !' मैया की गोद में भी क्या कोई एक छिप सकता है। एक ओर से दाऊ और दूसरी ओर से भद्र, दोनों आये और मैया की गोद तो फिर मैया की है। उसमें तीन तो क्या, सब-के-सब आ जायँ, तो भी स्थान रहेगा ही।

हाँ, तो श्याम अब गायें दुहने लगा है। नित्य वही गो-दोहन सम्पन्न करता है।

—❀⊂❀⊂❀—

गोपाल

अधरबिम्बविडम्बितविद्रुमं मधुरवेणुनिनादविनोदिनम् ।
कमलकोमलनम्रमुखाम्बुजं कमपि गोपकुमारमुपास्महे ॥

—श्रीलीलाशुक

आजकल श्रीकृष्ण को एक नवीन हठ सूझ पड़ा है। यह नित्य बाबा से उलझता है, उनकी दाढी खींचता है, झगड़ता है और रूठता है। मैया से दिन में कई-कई बार आग्रह, अनुरोध विवाद और रूठने का क्रम चलता है। वह गाय चराने जायगा। सब गोप गाय चराते हैं, वह भी चरायेगा—अब वह बड़ा हो गया है, दाऊ भैया साथ रहेंगे, इतने सब सखा हैं, सबके साथ वह गायों को चराया करेगा। सच्ची बात तो यह है कि बरसाने के सखाओं की मण्डली संकोच करती है मैया और बाबा के सम्मुख उन्मत्त क्रीड़ा में। पुलिन और घाट भी भवन से समीप ही हैं। अतएव नन्दग्राम एवं बरसाने के मध्य के वनप्रान्त में खेलने का अवसर चाहिये। कन्हैया गाय चराने चले तो फिर सबको यह सुविधा मिल जाय। मोहन ने मन-ही-मन यह सब सोच लिया है।

'भला, इतना छोटा बच्चा कहीं गाय चरा सकता है!' बाबा ने स्पष्ट अस्वीकार कर दिया। अभी कृष्णचन्द्र है ही कितना बड़ा। तीन वर्ष का भी तो पूरा नहीं हुआ। भला, गायें चराने की बात उसकी मानी कैसे जाय।

लेकिन कृष्ण तो फिर कृष्ण ही है—अपनी हठ वह कहाँ छोड़ सकता है। गोष्ठ में भाग जाता है। गायों की सींगें पकड़कर झूलता है। बड़े-बड़े साँड़ों की पीठ पर चढ़कर कूदता है। पड़ने पर मचलता है और फिर वहीं लोटने लगता है। 'मुझे गायें चराने दो, नहीं तो मैं यहीं लूँगा!' उसके हठ को छुड़ाया कैसे जाय। पता नहीं क्यों, अभी से गायों में रहने की उसे धुन हो गयी है।

बाबा क्या करें? 'गायों में अनेकों के शृङ्ग तीक्ष्ण हैं। वे स्वभावतः मस्तक हिला सकती हैं। कहीं श्याम पीठ पर बैठा हो और कोई वृषभ उठ खड़ा हो। वह तो पीठ पर कूदता है। अब तक कोई उठ नहीं खड़ा हुआ, यही भगवान् की कृपा है। पता नहीं कब क्या हो जाय!!'

नन्दबाबा ने व्रजेश्वरी से सलाह की। कोई समुचित मार्ग माता को भी सूझ नहीं पड़ा। अन्त में बाबा ने स्वयं ही सोचा। श्यामसुन्दर को पुचकार गोद में बैठाया। बड़े स्नेह से कहा—'कृष्णचन्द्र, तू गायें चराना चाहता है?'

'हाँ, मैं गायें चराऊँगा! सब-की-सब गायें!'

'देख, गोप बड़े हैं, वे बड़ी-बड़ी गायें चराते हैं। तू छोटा है, तू छोटे बछड़े चराया कर!'

'हाँ, हाँ, मैं बछड़े ही चराऊँगा!' कन्हैया बड़ा प्रसन्न हुआ। अभी तक उसे यह बात क्यों नहीं सूझी। गायों की अपेक्षा चञ्चल बछड़ों से उसकी मित्रता अधिक है। 'कल से ही चराऊँगा!'

'मैं महर्षि से मुहूर्त पूछ लूँ! पूजन करके बछड़ों को चराना प्रारम्भ करना चाहिये!' बाबा ने समझाया और सचमुच महर्षि से पूछकर मुहूर्त निश्चित कर दिया। 'बछड़े माता के स्नेह से गोष्ठ में ही आया करेंगे। वे वैसे भी दूर नहीं जायँगे। गौ तो आराध्य देवता हैं व्रज की। उनकी सेवा-रुचि श्लाघ्य है। बालक का उत्साह भङ्ग नहीं करना चाहिये!' बाबा ने अपना समाधान कर लिया। श्यामसुन्दर के भरे दृग एवं हठ से वे बाध्य हुए।

माता को संतोष कैसे हो। 'कन्हैया अभी है ही कितना बड़ा। बछड़े बड़े चञ्चल होते हैं। उनका क्या ठिकाना कि किधर कूदते-फाँदते निकल भागें। उनका श्याम बहुत सीधा है, लड़के उसे दौड़ा-दौड़ा कर थका देंगे। कोई उसे चिढ़ायेगा तो वह रोने लगेगा। कहीं दूर निकल गया तो—खेल में लगने पर उसे भूख-प्यास का स्मरण ही नहीं रहता। वन में अनेक प्रकार के फल हैं—बच्चों का क्या ठिकाना। उन्हें कच्चे-पक्के फलों की न पहिचान होती, न चिन्ता। कहीं कोई न खाने योग्य फल खा लिया और हानि हुई—! कंकड़ हैं, काँटे हैं, धूप है! तीव्र वायु में शीत लगने का भी भय है। खेलते-खेलते धूप में सीधे जल पी लेना तो बच्चों के लिये स्वाभाविक ही है।' मैया की आशङ्काओं का कहीं अन्त नहीं है; 'किन्तु किया क्या जाय, कन्हैया हठ जो किये बैठा है। वह बड़ा हठी है। एक बार जो धुन चढ़ी-सो-चढ़ी। अपनी बात पूरी ही करके रहेगा। व्रजराज ने मुहूर्त भी निश्चित ही कर दिया है। अब बाधा देने का कोई अर्थ नहीं।'

× × × ×

आज श्यामसुन्दर बछड़े चराने प्रारम्भ करेगा! नन्दभवन में उत्साह का पारावार उमड़ आया है। नन्दव्रज के अतिरिक्त बरसाना भी आज वहीं आ गया है। अन्तःपुर में नारियों और बाहर गोपों की भीड़ है। महर्षि शाण्डिल्य ब्राह्मणों को साथ लेकर पूजन-यज्ञ में व्यस्त हैं। वेदियों पर नवग्रह, सर्वतोभद्र, नक्षत्र, योगिनी आदि के मण्डलअक्षत, मसूरिकान्न, चने की दाल, तिल आदि से बने हैं, उसका पूजन हो चुका है। दिग्पालों का पूजन हुआ। कलशों पर प्रदीप प्रज्वलित हुये अरणि-मन्थन के पश्चात् अग्नि में सस्वर मन्त्र पाठ से आहुतियाँ पड़ती रहीं। बाबा ही इन कृत्यों में यजमान हैं। अन्त में अपने बछड़े के साथ कपिला आयी और तब महर्षि ने श्यामसुन्दर का आह्वान किया।

बाहर गोप परस्पर अक्षत-चन्दन-दधि का एक दूसरे को तिलक कर रहे हैं। गोपियाँ मङ्गल-गान कर रही हैं। उन्होंने अपने उपहार नन्दरानी को निवेदित कर दिये हैं। व्रज में व्रजराजकुमार आज गो-चारण प्रारम्भ करेंगे। गोपजाति के लिये इससे अधिक महत्त्व का और कौन-सा समय हो सकता है। नट, नर्तक, वन्दी—सभी अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे हैं। तरुण गोप लाठियों, भालों, कृपाणों के परस्पर कृत्रिम युद्धकौतुक में लगे हैं। अनेक प्रकार की कलाओं का प्रदर्शन चल रहा है यहाँ। गोपियाँ अन्तःपुरमें गायन करतीं, नाचतीं और अनेक प्रकार के विनोद करने में मग्न थीं।

श्यामसुन्दर की उमंग का क्या पूछना। आज वह दाऊ भैया का हाथ ही नहीं छोड़ रहा है। दोनों भाइयों को नन्दगाँव एवं बरसाने की संयुक्त बालमण्डली ने घेर रक्खा है। कभी आँगन में, कभी बाहर और कभी यज्ञमण्डप में—यह मण्डली एक स्थान पर स्थिर होना जानती ही नहीं। सभी बालकों का माताओं ने भरपूर शृङ्गार किया है। सबने नवीन वस्त्र धारण कर रक्खे हैं और सभी स्वर्णजटित मणि-मय अलंकारों से आभूषित हैं। दोनों माताओं ने किसी प्रकार राम श्याम को स्नेह से पकड़कर स्नान कराया, शृङ्गार किया उनका।

महर्षि ने श्यामसुन्दर को यज्ञमण्डप में बुलवाया। गोपियों का पूरा समुदाय यज्ञमण्डप में एक ओर एकत्र हो गया। गोपगणों ने भी सारे प्रदर्शन बंद किये और सब यज्ञमण्डप में आ गये। वाद्यों ने अपना स्वर उच्च-मधुर-मधुरतर किया। शङ्खनाद के साथ विप्रों का वेदपाठ और उच्चतर हो उठा। श्रीनन्दरानी व्रजराज के वामभाग में आ विराजीं। श्यामसुन्दर माता की गोद में बैठ गये। स्वस्तिवाचन चलने लगा।

कन्हैया जैसे सदासे गोपूजन करता आया हो। महर्षि मन्त्रपाठ कर रहे हैं। कोई कुछ बताये, इससे पूर्व ही श्यामसुन्दर ने उठकर गौमाता को अर्घ्य दिया—चरण धोये। बाबा ने चाहा कि गोद में उठाकर शृङ्गों पर जल चढ़ाने की सुविधा कर दें; किंतु जैसे ही जलपात्र उन नन्हे हाथों में उठा, कामदा ने मस्तक नीचे कर दिया। शृङ्गों पर जल चढ़ा, मस्तक पर तिलक करके अक्षत

लगा और पुष्पमाल्य पहिनायी गयी! कपिला शान्तभाव से श्यामसुन्दर के अरुण मृदुल करों की पूजा ले रही है। श्रीकृष्ण भी पूजा के मध्य में बार-बार मुड़कर बाबा के मुख की ओर देख लेता है कि 'ठीक क्रम चल रहा है न? कहीं भूल तो नहीं हो रही है?' बाबा प्रोत्साहन दे रहे हैं। महर्षि का मन्त्रपाठ गद्‌गद स्वरों में चल रहा है। उनके नेत्र उस नीलोज्ज्वल मूर्ति से हटते ही नहीं। विधि-निर्देश वे कर भी सकते हैं या नहीं—इस समय यह संदिग्ध हो गया है।

गोपूजन के साथ ही बछड़े का पूजन हुआ। उस चञ्चल ने भी चुपचाप पूजा स्वीकार कर ली। न तो उछला और न इधर-उधर हुआ। अवश्य ही बार-बार वह श्यामसुन्दर के हाथों को सूँघ लेता था और जब कन्हैया ने उसे पुष्प-माल्य पहिनाया, बड़ी प्रसन्नता से मस्तक हिलाया उसने। जैसे उस माला से उसकी शोभा कितनी बढ़ गयी है, इसका उसे अनुभव हुआ है।

वृषभ-पूजन—वृषभ तो साक्षात् धर्म ही है न? वह उज्ज्वल पर्वतशिखर-सा उत्तुङ्ग, सुचिक्कण वृषभ। कौन जाने भगवान् शंकर का नन्दी ही आ बैठा हो तो—नन्दी इतना उज्ज्वल, इतना उच्च, इतना सुचिक्कण है, संदेह ही है। कन्हैया का सबसे प्रिय वृषभ है वह—गजराज के समान विशाल और धर्म के समान ही सरल। उनका पूजन तो होना ही चाहिये था।

महर्षि की आज्ञा से गोपों ने समस्त गायों, बछड़ों एवं वृषभों का पूजन किया। गोधन का शृङ्गार तो प्रातः ही हुआ था। सबको पूजन के अनन्तर यवस (भीगा हुआ अन्न) दिया गया। आज जब श्यामसुन्दर वत्सचारण को चलेगा, तभी सम्पूर्ण गोधन अनुगमन करेगा उसका।

पूजन का क्रम चलता रहा—आचार्य का पूजन, ब्राह्मणों का पूजन और अन्त में वृद्ध गोपों का पूजन। महर्षि भावमग्न हैं, बाबा ने चाहा भी कि कन्हैया के स्थान पर वे स्वयं सबका सत्कार कर दें; किंतु श्याम आज स्वयं सबके पूजन को उत्साहित है। माता को लगता है वह थक जायगा; किंतु शास्त्रीय कर्म में बाधा कैसे दी जाय?'

प्रायः सभी गोपों का चरण-वन्दन कर आया वह और तब गोपियों को अभिवादन करने उनकी ओर गया। विप्र-पत्नियों ने पूजन प्राप्त कर लिया है। अन्त में सखाओं का सत्कार हुआ। सबने अङ्कमाल दी। बाबा ने श्यामसुन्दर के साथ रहकर उसके करों से ब्राह्मणों को गायें, धन, रत्नादि दक्षिणा दिलवायी। गोपों को उपहार मिले। माता ने विप्र-पत्नियों को वस्त्राभरणों से तृप्त किया। गोपियों को उपहारों से आभूषित किया। अन्त में सखाओं का शृङ्गार किया श्यामसुन्दर ने। इतने सखा—कौन जाने कैसे—परंतु उसने किया स्वयं। सबको पटुके, उपवस्त्र, आभूषण देने के पश्चात् महर्षि ने उसे पुनः वेदिका के सम्मुख बुलाया। नट, नर्तकादिकों को बाबा ने इतना पुरस्कार दिया, जिसे माँगने की बात वे सोच तक नहीं सकते थे।

वेत्र-लकुट, मृदुल रज्जु, शृङ्ग और इन सबके साथ एक मुरलिका रक्खी है। महर्षि ने क्रमशः सबका पूजन कराया। हिंदू-संस्कृति में अधिष्ठाता देवता के बिना तो कोई वस्तु होती नहीं और किसी वस्तु के ग्रहण से पूर्व उसके अधिष्ठाता देवता का पूजन होना ही चाहिये। पूजन के पश्चात् बाबा ने लकुट उठाकर श्यामसुन्दर के हाथों में दे दिया। कन्हाई आज इस वेत्र को लेकर गोपाल हुआ। उसने महर्षि तथा पिता के चरणों में प्रणिपात किया! महर्षि ने उसे शृङ्ग दिया, वृद्ध उपनन्दजी ने पाश; और मुरली—वह तो उसी की वस्तु है।

× × × ×

मस्तक पर मयूर-मुकुट, भालपर अक्षताङ्कित कुङ्कुमतिलक, गले में वनमाला, कंधों पर पटुका, कटि की कछनी में मुरलिका, वाम स्कन्ध पर कुण्डलाकार रज्जु, वाम हस्त में शृङ्ग, दक्षिण हस्त में अरुणवर्ण सुन्दर वेत्र, कपोलों पर मणि-कुण्डल झलमला उठे, जब अन्तिम बार अपने पूरे गोपाल वेश में श्यामसुन्दर ने महर्षि को प्रणाम किया।

वेत्र उठा और वह उज्ज्वल बछड़ा संकेत पाकर मण्डप के बाहर की ओर कूद चला। वाद्यों के निनाद ने गगन गुञ्जित कर दिया। शृङ्गनाद के साथ भेरीघोष को भी शङ्खनाद पार करने की

प्रतिद्वन्द्विता है। ब्राह्मणों के करों से स्वस्तिपाठ के साथ अक्षत एवं पुष्प पड़ रहे हैं। गोपियों ने लाजा फेंकना प्रारम्भ किया। वृद्ध गोपों ने तथा विप्र-पत्नियों ने आशीर्वाद दिये। सखा अपने-अपने लकुट लेकर साथ चल रहे हैं।

वह अभिजित् मुहूर्त धन्य हो गया। द्वार से बाहर आते ही समस्त बछड़े साथ हो गये। गोप-बालक साथ हैं ही। सुरभियों ने अनुगमन किया और उनके पीछे गोपों को चलना है। आज केवल विधि-निर्वाह करना है; किन्तु श्याम ऐसे उल्लास में है, जैसे उसे सदा गोचारण ही करना है। उसका और काम भी क्या है—है भी तो वह शाश्वत चरवाहा ही।

वत्स-चारण—अद्भुत लगा सबको प्रथम यह संवाद। यह तो कोई प्रथा थी नहीं; किंतु जब श्यामसुन्दर बछड़े चराने जायगा तो दूसरे बालक घरों में रोके जा ही नहीं सकते।

फलतः बरसाने में यह महोत्सव पहिले ही सम्पन्न हो चुका है। नन्द-व्रज में जिन बालकों की अवस्था श्यामसुन्दर से वर्ष भर छोटी भी है, उनका वत्स-संचारण-संस्कार श्यामसुन्दर के साथ ही सम्पन्न हुआ। कोई बालक घर रहना कैसे चाहेगा, जब कि कन्हैया बछड़े चराने जाया करेगा। फलतः आज सखाओं का सम्पूर्ण मण्डल साथ ही है।

ग्राम-सीमा से बाहर तक आकर लौटना है; किंतु मैया को तो वही बहुत कष्टकर हो रहा है। 'पूजन में ही उनका नीलमणि बहुत थक गया है। वह इतनी दूर जाकर तो और श्रान्त हो जायगा। सभी गोप साथ ही गये। कोई है भी नहीं कि उसे भेजें। यह वाद्यध्वनि दूर ही होती जा रही है। व्रजराज को भी क्या सूझा है। वे लौटा क्यों नहीं लाते मोहन को। कहाँ तक जायँगे ये लोग!' वे द्वारपर से इस प्रकार नेत्र लगाये हैं मार्ग की ओर, जैसे युगों के पश्चात् उनका पुत्र लौटनेवाला है। वे ही क्यों, सभी गोपियों की तो यही दशा है। मार्ग में, ग्राम में आज कोई नहीं है। किसी का संकोच न होने से गोपियों का समूह मङ्गल-गान करता हुआ ग्राम-सीमा तक पीछे-पीछे चला आया है। गोप आगे बढ़ गये, अतः ग्राम-सीमा पर रुक जाना पड़ा इस समूह को। सबके मनमें एक ही बात है—'क्यों ये सब लोग आज श्याम सुन्दर को थकाये डालते हैं। लौट क्यों नहीं आते। कहाँ तक जायँगे?'

वाद्य दो भागों में विभक्त हुए। गोपों ने मार्ग के इधर-उधर खड़े होकर मध्य में स्थान प्रशस्त किया। विप्र-वर्ग भी दोनों ओर हट गया। श्यामसुन्दर लौट रहा है। सहस्रों रङ्ग-विरङ्गे उछलते हुए बछड़े, बार-बार वे पीछे को ही लौटते हैं। अपने अद्भुत चरवाहे को छोड़कर उन्हें जैसे और कुछ नहीं देखना है। उससे अधिक दर्शनीय विश्वमें और है भी क्या। जब वह अपना लकुट उठाता है, बछड़े उस लकुट को ही सूँघने लगते हैं। वे जान लेना चाहते हैं कि यह भी कोई हमारे चाट लेने योग्य वस्तु है या नहीं। कन्हैया उल्लसित है, प्रसन्न है; किंतु अवश्य थक गया है। मुख पर अरुणिमा आ गयी है। भाल पर स्वेदकण झलक उठे हैं।' सखाओं के समूह के साथ वह चला आ रहा है। दाऊ उसके दाहिने हैं, श्रीदामा बायें, सुबल और भद्र दोनों उससे लगे हुए पीछे चल रहे हैं। शतशः बालक हैं प्रसन्न, चपल, उल्लसित।

बच्चों के पीछे गौओं का समूह है। गोपों ने चाहा कि गायों को चराने के लिये हाँक ले जायँ, किंतु वे सफल न हुए। गायें श्याम के साथ ही भाग आती थीं। विवशतः लौटना पड़ा। उनके खुरों से उठी गोरज ने श्याम की अलकों को तनिक धूसर कर दिया है। गायें बार-बार हुम्भा करतीं हैं, एक-एक आगे को दृष्टि लगाये है और मार्ग तो जाते समय ही उनके स्तनों से प्रवाहित होती दुग्धधारा से सिंचित हो चुका है; अब तो वे उसे कर्दममय करती आ रही हैं। विप्रों के सम्मुख आकर श्यामसुन्दर ने मस्तक झुकाया। स्वस्तिवाचन के साथ अक्षत फेंकते उनके हाथ आशीर्वाद देने को उठे। तपःपूत इतने करों की छाया में वह चला आ रहा है। गोपों ने पुष्प वर्षाये और वाद्यों में द्विगुणित ध्वनि हुई। बाबा विप्रवर्ग के पीछे आ रहे हैं। गौओं के पीछे तरुण गोप-वृन्द, उसके पीछे महर्षि शाण्डिल्य के साथ विप्र-वृन्द और उनके पीछे व्रजराज श्रीवृषभानुजी के साथ। सब से

पीछे वाद्य, नट, नर्तकादि और ग्राम-सीमा में मङ्गलगान के साथ गोपियों का समूह पुनः पीछे-पीछे नन्दभवन की ओर चलने लगा।

विप्रों का सामगान, गोपों के शृङ्ग एवं शङ्खनाद और भेरी, नफीरी आदि की गगनभेदी ध्वनि; किंतु गायों और बछड़ों ने उधर ध्यान तक नहीं दिया। वे तो गृह-पशु हैं ध्यान तो उधर नहीं दिया कपियों ने, पक्षियों ने और मृगों ने। वन-पशु वन-सीमा पर शान्त खड़े रहे इस गोचारण के भव्य दृश्य को देखते। पक्षी और कपि तो गगन एवं भवनों पर उड़ते-उछलते साथ-साथ आये।

× × × ×

श्यामसुन्दर ने गोष्ठ में प्रवेश किया। गोष्ठ-पूजन की समस्त सामग्री प्रस्तुत ही है। माता रोहिणीजी ने उसे स्वयं सज्जित कराया है। महर्षि ने आते ही पूजन सम्पन्न कराया। श्यामसुन्दर ने पुनः गौ, गोवत्स एवं वृषभों का पूजन किया और तब भवन में गया।

'आज बहुत विलम्ब हो गया—श्यामसुन्दर क्षुधित होगा!' मैया को तो कब से यही चिन्ता है। मोहन ने भी आते ही कहा—'मैया, भूख लगी है!' दाऊ भैया के साथ समस्त सखाओं की मण्डली में बैठकर भोजन करने का यह प्रथम ही अवसर है—अन्यथा बरसाने का सखासमूह संकोच किया करता है यहाँ भोजन करने में। कौन जाने इस सुयोग ने ही क्षुधा बढ़ा दी है या और कुछ.....।

श्यामसुन्दर ने सबके साथ, उछलते-कूदते, हँसते-हँसाते भोजन किया। वह भोजन भी करता है और परसने में भी मैया के साथ लग जाता है। चल रहा है यह आनन्द!

बाबा को तो आज अवकाश ही नहीं। ब्राह्मण-भोजन, गोपसमूह का सहभोज और फिर महोत्सव तो रात्रि भर चलता रहेगा।

—❀:⊂:❀:⊂:❀—

वेणु-वादन

"वंशीविभूषितकरान्नवनीरदाभात् पीताम्बरादरुणबिम्बफलाधरोष्ठात्।
पूर्णेन्दुसुन्दरमुखादरविन्दनेत्रात् कृष्णात्परं किमपि तत्त्वमहं न जाने॥"

—श्रीमधुसूदन सरस्वती

मोहन मुरली बजा रहा है—वह तो बजाता ही रहता है। श्याम का वंशीरव क्या कभी विरत होता है। नित्य-चिरन्तन एकरस गूँजती है वह ध्वनि। उस वेणु-वादक को कार्य भी क्या है। वह ध्वनि—वह आकाश का तन्मात्रारूप शब्द तो है नहीं कि उसे सामान्य कान सुनें या यन्त्र पकड़ें, वह तो स्थूल-सूक्ष्म-कारण से परे और तीनों को झंकृत करता गूँजनवाला नाद है। प्रणव के ऊपर अर्धमात्रारूप में तो चन्द्राकार उसकी छाया आती है। भावशुद्ध हृदय, उत्कण्ठा-निर्मल कर्ण उससे परिपूत होते हैं।

मोहन मुरली बजा रहा है—कब से? कैसे? सो कुछ नहीं। वह तो बजाता ही रहता है। सुननेवाले ही सुनते हैं उसे और जो सुनते हैं—उनकी बात वे ही जानते हैं; पर इतना ठीक कि फिर वे और कुछ सुनना भी चाहेंगे—ऐसी आशा नहीं करनी चाहिये।

मोहन मुरली बजा रहा है—वह चिरचञ्चल अधरों पर जब इस वेणु-खण्ड को रख लेता है, स्वयं स्थिर हो जाता है—शान्त, निस्पन्द। थिरकती हैं उसकी पल्लवमृदुल अङ्गुलियाँ मात्र और स्वर की लहरियों पर तो ब्रह्माण्ड का अणु-अणु थिरकता है। प्रत्येक परमाणु उसी लहरी पर ही तो थिरक रहा है।

श्याम की वंशी-ध्वनि—वह साकार नीलोज्ज्वल ज्योतिर्मय सुकुमार ब्रह्म—और तब तो एक पशु-पाषाण भी ऋषि हो जाता है। श्रुति जो नाद-ब्रह्म कहती है, उसका अर्थ प्रत्यक्ष दर्शन कर ले कोई भी। मुरली की यह ध्वनि—यही तो नाद-ब्रह्म है। उसे मोहन को छोड़कर कौन दूसरा व्यक्त कर सकता है।

श्रीवृन्दावन में तमाल के सघन तरु के नीचे—तमाल या फिर कदम्ब अथवा नीप की छाया ही उसे पसंद है। यहाँ तो आक-ढाक भी इस दिव्य-भूमि में अपवर्ग तक देने में समर्थ हैं, फिर उस अमरावती के कल्पतरु को पूछे कौन। हाँ—तो कन्हैया किसी सघन तमाल के मूल से टिककर, ललित त्रिभङ्गी से स्थित, अधरों पर मुरली रक्खे उस नाद-ब्रह्म को नित्य ही मूर्तिमान किये रहता है। बड़ी भव्य है वह उस व्रजेन्द्रनन्दन की छटा—

अंसालम्बितवामकुण्डलधरं मन्दोन्नतभ्रूलतं
किंचित्कुञ्चितकोमलाधरपुटं साचीप्रसारेक्षणम्।
आलोलाङ्गुलिपल्लवैर्मुरलिकामापूरयन्तं मुदा
मूले कल्पतरोस्त्रिभङ्गललितं ध्यायेज्जगन्मोहनम्॥

—श्रीलीलाशुक

वह ललित त्रिभङ्गी से खड़ी है व्रज-सौभाग्य की पावन मूर्ति, वह वामस्कन्ध पर कुण्डल टिका है और वे मन्दोन्नत भ्रूलतिकाएँ—वे क्या एक बार हृदय में आ जायँ तो फिर निकलनेवाली हैं। सुदीर्घ लोचन कुछ झुक गये हैं और कोमल पतले-पतले लाल-लाल ओष्ठ को सिकुड़ाकर वे मुरली के छिद्रों को स्वरपूरित करने में लगे हैं। पल्लवमृदुल अङ्गुलियाँ छिद्रों पर कैसी फुदक रही हैं और कितना आनन्द-मग्न है यह श्याम! यह त्रिभुवन-सुन्दर, जगन्मोहन व्रजेन्द्रनन्दन तमालमूल में खड़ा ध्यान में ही आ जाय—आ जाय एक क्षण को—और—और—

'लोकानुद्धरयन् श्रुतीर्मुखरयन्क्षोणीरुहान्हर्षयन्
शैलान्विद्रवयन्मृगान्विवशयन्गोवृन्दमानन्दयन् ।
गोपान्संभ्रमयन्मुनीन्मुकुलयन्सप्तस्वराञ्जृम्भयन्
ओंकारार्थमुदीरयन्विजयते वंशीनिनादः शिशोः ॥'

—श्रीलीलाशुक

प्राणों में, मन में, अन्तर में उस शिशु का वह वंशी-निनाद ही विजयी हो—वही, एक-मात्र वही विजयी हो।

वेणु-वादन का वह चिरव्यसनी नवजलधरसुन्दर इस धराधाम पर, इसी अभी बीते द्वापर के अन्त में, अपने ही वृन्दावन में, अपने नित्य सहचरों के मध्य धूम करता व्यक्त हो गया था और फिर वंशी—भला, उसे अधरों पर लगाये बिना वह क्या रह सकता है।

'भद्र ! आ, तुझे वंशी बजाना सिखा दूँ।' यही एक ऐसा काम है, जिसमें कोई सखा श्याम की समता नहीं कर सकता। नहीं तो और सब बातों में तो कन्हैया से सब अपने को बड़ा ही मानते हैं। यह फूल-सा सुकुमार कनूँ उनसे दुर्बल तो है ही। न वह उनके बराबर दौड़ सकता, न मल्ल-युद्ध में नसे जीत सकता और न शृङ्ग ही उनके समान बजा सकता। जब वह शृङ्ग फूँकता है, उसका शृङ्ग भी वंशी के समान लहराता-सा बजता है। कोई भी सुनते ही पहिचान लेगा कि यह तो श्याम की शृङ्ग-ध्वनि है। वृद्ध संनन्दबाबा कहते हैं, 'श्रीकृष्ण के मुख से लगकर शृङ्ग भी सुरीला हो जाता है।' यह भी कोई सुरीलापन है—जैसे फूँक ही पूरी नहीं मिलती शृङ्ग को।

'यह पीं-पीं मेरे बस की बात नहीं !' भद्र भला, क्या मुरली बजायेगा। उससे कहो तो वह बाबा का बड़ा शङ्ख उठाकर अवश्य फूँक सकता है। बाबा का शङ्ख दाऊ को छोड़कर सखाओं में केवल वही तो बजा पाता है और है भी उसे शङ्ख की गुरु गम्भीर ध्वनि ही प्रिय। वह क्यों सीखे वंशी बजाना। 'छोकरियों की भाँति नाचना और इस जरा-सी वंशी को लेकर चीं-चीं, पीं-पीं करना तुझे ही भला लगता है।' उसने चिढ़ा दिया।

'तू बजा भी तो !' बालकों के साथ श्याम भी हँसते-हँसते दुहरा हुआ जाता है। वह भद्र को तंग करने का यह अच्छा ढंग पा गया।

'यह मेरे बस का रोग नहीं। तू कहता है तो ले !' भद्र ने मुरली के बदले कटिवस्त्र से अपना शृङ्ग निकालकर मुख में लगा लिया। धूतू, धूतू, धू, धू, यह तो मानना ही होगा कि भद्र के समान गुरु गम्भीर शृङ्ग-नाद कोई तरुण गोप ही कर सकता है।

'ना, मुरली बजानी पड़ेगी तुझे।' कन्हैया ने शृङ्ग झपट लिया भद्र के हाथ से और मुख बनाया। मुरली भद्र के हाथों में देकर उसने अपने ही हाथ से उसके मुख पर लगा दी।

भद्र और मुरली ! भला, क्या सामञ्जस्य है इसका। उसने सभी छिद्र अङ्गुलियों से बंद करके फूँका तो स्वर ही नहीं निकला। झुँझलाकर उसने सब छिद्र खुले छोड़ दिये और पूरे बल से फूँक मार दी, जैसे यह भी शङ्ख या शृङ्ग हो। एक सीटी-सी बज गयी। सखाओं ने तालियाँ बजायीं और यह श्याम तो हँसते-हँसते लोट-पोट ही हो रहा है।

'ले, अब तू बजा तो ! मुझसे जोर से बजा दे तो जानूँ !' भद्र ने वंशी श्रीकृष्ण के करों में दी और दोनों हाथों से उसे उठाकर खड़ा कर दिया। उस नित्य मुरली-मनोहर ने वंशी सम्हाल ली दोनों करों में। वनराजि झूम उठी। कपिदल समीप कूद आया। गायों ने कर्ण उठाये। मृग, मयूर—सब पशु-पक्षी अपनी क्रीड़ा छोड़कर उन्मुख हो गये एक क्षण में। 'श्याम वंशी बजाने जा रहा है !'

सघन फलभार से झुके तरु, पुष्पगुच्छों से झुकी झूमती उन तरुओं से लिपटी लताएँ और उनके मध्य यह अति सघन नील तमाल—सुरपादप कैसे समता कर सकता है इसकी। मयूर, शुक, पिक आदि पक्षी उसपर, समीप के पादपों पर एकत्र हो गये हैं। वनपशु और गायें सब एक साथ बृहत् यूथ बन गयी हैं। सबके नेत्र लगे हैं तमाल की ओर। सहस्रों सखाओं से घिरा वह नव-

जलधर-सुन्दर, विद्युद्वसन मुरली बजाने जा रहा है। वंशी बजायेगा अब वह! सब उत्कर्ण हैं, सबके प्राण कर्णों में ही जैसे आ गये हों।

यह झुका मयूरमुकुट, ये लहरायीं अलकें और ये दीर्घ पलकें अर्धनिद्र-सी हुयीं। वाम कुण्डल कंधे पर और दाहिना कुण्डल कपालकण्ठ-संधि पर स्थिर हो गया, जैसे इन्दीवर के नीलदल पर दो स्वर्ण-भृङ्ग मधुपान-मत्त होकर सो गये हों। गोरोचन की खौर और उसके मध्य यह अरुण कुङ्कुम-तिलक, काली रेखा-सी कुटिल भृकुटियाँ और कपोलों पर ये जो सखाओं ने श्वेत धातु के कुसुमचित्र अङ्कित कर दिये हैं, इन्हें देख पायें, वे ही नेत्र सच्चे नेत्र हैं।

ये पलकों से झाँकते अरुणाभ विशाल लोचन और पलकें, सुकुमार, इन्द्रवधूटी-से अरुणाभ अधर-पल्लव कैसे आकुञ्चित हो गये हैं। धन्य है यह वेणु खण्ड। अधरों की अरुणाभा से अलंकृत हो गया है वह और उसके छिद्रों को नन्ही पतली कुसुम-कलिका-सी कोमल लाल-लाल अङ्गुलियों ने आच्छादित कर लिया।

स्वर्णाङ्गदभूषित, मणिकङ्कणसज्जित, कुसुमदाममण्डित, धातुचित्रखचित ये श्याम भुजाएँ और ये विशाल स्कन्ध! कम्बुकण्ठ कुछ तिरछा कितना मनोहारी है। वनमाल, मुक्तामाल, कौस्तुभ, गुञ्जामाल और सखाओं की यह दल, तुलसी, वनकुसुमों की माला, ऊपर से पटुका! भला कितना भार सम्हाले यह कोमल कण्ठ, कदाचित इसी से झुक गया है और वक्ष—यह विशाल वक्ष तो ढक-सा गया है; बस, यह तनिक-सी वाम वक्ष की स्वर्णिम रामराजि झलकती है! देखने योग्य है यह त्रिवलीयुक्त नाभि! पीताम्बर पर कसी यह अरुण कछनी और आगे—मुनिजनमानस-मराल, शंकरहृदयधन ये अरुण चरण, यह शत-शत-चन्द्रद्युति निन्दक नख-मणिज्योति।

हरित दूर्वादल पर ललित त्रिभङ्गी से सज्जित ये पल्लव-मृदुल, किंशुक-अरुण चरण.....! पीताम्बर मन्द-मन्द लहरा रहा है, अलकों में सखाओं ने ढेर-से सुमन उलझा दिये हैं, मयूरपिच्छ में स्पन्दन-सा है और श्याम—यह चिरचञ्चल स्थिर हो गया है—शान्त, स्थिर। ये अङ्गुलियाँ हिलीं, ये अधर लगे छिद्र से और यह ध्वनि—वंशीध्वनि—कान्ह वंशी बजा रहा है।

× × × ×

मोहन मुरली बजा रहा है—मुरली की स्वरलहरी—जैसे सृष्टि के प्राण एकाकार हो गये हैं उसमें। श्रवण में, मन में, प्राण में, हृदय के अन्तरतम प्रान्त में और शरीर में, रोम-रोम में, समस्त सचराचर जगत् में वही एक स्वर, एक ध्वनि गूँज रही है सबको आत्मसात् करके।

बालक—ये तो श्याम के सहचर हैं। कन्हैया पता नहीं मुनियों के मानस में बहुत प्रयत्न करने पर कुछ क्षण को आता भी है या नहीं, परंतु इसमें तो संदेह ही नहीं कि ये सब इस इन्दीवर-दल-श्याम के हृदय में ही नित्य निवास करते हैं। इनकी भावस्थिति का वर्णन कर सके, इतनी शक्ति तो शारदा में भी नहीं है। जैसे किसी कुशल कलाकार ने सहस्रों मूर्तियाँ बनाकर नाना भङ्गियों में सजा दी हों, स्थिर! शान्त! निस्पन्द! अपलक नेत्रों से अजस्र धाराएँ चल रही हैं और धाराएँ तो चल रही हैं उनके रोम-रोम से। अश्रु एवं स्वेद के इस पावन प्रवाह में ये सब भीग गये हैं—भीग गये हैं उनके वस्त्र और मन—मन की बात कौन करे। स्रष्टा का मन भी तो इनके अन्तर को झाँकने में समर्थ नहीं।

गायें—उनके कान खड़े हैं, मुख में लिया तृण ज्यों-का-त्यों है और ज्यों-का-त्यों है उनका शरीर। उनके नेत्र भी झर रहे हैं और झर रही हैं उनके स्तनों से उज्ज्वल धाराएँ। यह भेद भी आज नहीं रह गया है कि किसने बच्चे दिये हैं और कौन देनेवाली हैं। बछड़ियों के स्तनों से भी जब यह हृदय का शुद्ध सत्व उज्ज्वल धारा बनकर प्रवाहित हो रहा है, तो गायों की चर्चा कौन करे। बछड़ों ने माता के स्तनों से मुख लगाया था। मुरली ध्वनित हुई, कान खड़े हुए, मुख के दोनों ओर से बह चला मुख का दूध। उसे पी लेने के लिये क्या अब प्राण रहे हैं उनके देह में? प्राण तो कर्णों में आ बैठे हैं।

काक ने अपने शावक के मुख में चोंच दी थी चारा देने के लिये, शावक के चञ्चु खुले रह गये, काक की चोंच वहीं पड़ी है, चारा—वह वहीं स्थिर है। शुक ने पंख फैलाये थे दूसरी डाल पर बैठने के लिये, वे फैले रह गये हैं उसके पंख। मृग ने अगला बायाँ पैर उठाया था कि मुख खुजला ले, वह रहा पैर; न नीचे आया, न मुख से लग सका; बीच में उठा-का-उठा रह गया। वह कपि कदाचित कूदना चाहता था, कैसा कूदने की मुद्रा में स्थिर है। जैसे किसी ने एक साथ वन-भूमि के समस्त प्राणियों को वे जैसे थे, उसी रूप में स्थिर कर दिया हो, उनकी चेतना पृथक् करके। पुष्पों पर पंख फैला कर उड़ने को उद्यत भ्रमर, तृणों पर आधे लटके लघुकीट से लेकर मृग, शशक, व्याघ्र, केहरी—सब पशु-पक्षी शान्त, स्थिर, चित्र की भाँति हो रहे हैं। गति का नाम नहीं है किसी में। सबके नेत्रों से अश्रु चल रहे हैं और यही प्रेमाश्रु एकमात्र सूचित करते हैं कि उनमें जीवन है।

मोहन मुरली बजा रहा है! मुरली का अमृत-नाद—तरुओं के तनों से मधु-धाराएँ चल रही हैं। तनों से ही नहीं, शाखाओं से, टहनियों से, पत्तों से, कोंपलों से भी रसस्राव हो रहा है। धाराएँ चलती हैंशाखाओं से और पत्ते-पत्ते टपकते हैं। वृक्षों में भी रोमाञ्च होता है? मनुष्य, गौ, मृग, पक्षी आदि चेतन प्राणियों के रोम-रोम कदम्ब की भाँति पुष्पित हो उठे हैं, यह तो समझ में आने की बात है; किंतु ये तृण, ये क्षुप, ये वीरुध, ये लताएँ, ये वृक्ष, इनको भी रोमाञ्च होता है? यह जो उनके शरीर पर काँटों का जाल-सा सहसा प्रकट हो गया है और तब यह रस-स्राव—इनसे भी प्रेमाश्रु चल रहे हैं? यह मुरली जो बज रही है।

तृण-तरुओं में चेतना तो होती है, अन्तश्चेतना सही। वंशी के स्वर ने जब समाधि में स्थित जन एवं तपोलोक के महापुरुषों की अन्तश्चेतना को उत्थित कर दिया है, जब अपने कमलासन पर वृद्ध पितामह और उनके परम ज्ञानी, नित्य ब्रह्मलीन सनकादि पुत्र, भृगु जैसे महर्षिश्रेष्ठ, लोमश-जैसे नित्य, कालातीत भी चञ्चल हो गये हैं, उझककर नीचे देखते हैं, सिर झुकाकर सोचते हैं--यह कौनसी शक्ति है जो उनके सहज समाधि के नित्य अभ्यस्त मानस को बलात् खींच रही है, प्रयत्न करने पर भी स्थिर नहीं हो पाते, और जब वे—वे चले आ रहे हैं इस वंशीध्वनि की रज्जु में बँधे, विवश, खिंचते-से अस्त-व्यस्त अपने वाहनों पर बिराजमान तो इन तरुओं की अन्तश्चेतना को मुरली ने जगा ही दिया—क्या बड़ी बात हो गयी; लेकिन ये पर्वत, ये पाषाण--ये तो पूर्णतः जड हैं। इनमें तो चेतना ही नहीं; पर—पर ये तो जैसे पूरे ही पिघल जायँगे। इनसे तो जल के शतशः प्रवाह फूट पड़े हैं। नन्हा-सा कंकड़ भी आज निर्झर का उद्गम बनने की स्पर्धा में है। कोई इस समय यदि किसी कंकड़ या पाषाण को स्पर्श करे—कोई नहीं कह सकता कि वह नवनीत से अधिक मृदुल नहीं है।

कालिन्दी—आज क्या कालिन्दी अपने समस्त कमल यहीं एकत्र कर लेंगी। कितनी उत्तुङ्ग हिलोरें उठ रही हैं उनमें! यह क्या—यह हो क्या रहा है, उनके प्रवाह की गति क्या नीचे से ऊपर को उलटी चल रही है? नीचे की ओर से ये ढेर-के-ढेर रङ्ग-विरङ्गे कमल, पुण्डरीक, इन्दीवर, शतपत्र, कह्लार एवं कुमद कैसे बहते चले आ रहे हैं यहाँ? यमुना की ये उत्ताल तरङ्गें--समुद्र के समान इतनी ऊँची तरङ्गें कभी किसी सरिता में उठ सकती हैं—कौन विश्वास करेगा। आज कालिन्दी अपने समस्त सुमन अपने आराध्य चरणों पर चढ़ाकर ही रहेंगी। अपनी तरङ्गबाहुओं को दीर्घ, दीर्घतर बढ़ाती वे ढेर-के-ढेर पुष्प उसी तमाल मूल में स्थित मुरलीधारी के श्रीचरणों को लक्ष्य करके ही तो उत्सर्ग करती जा रही हैं।

गति—गति तो आज जैसे मुरली ने चेतन से लेकर गतिहीनों को दे दी है। यमुना का प्रवाह उलटी दिशा में ही तरङ्गित है। वायुदेव उस मयूरमुकुटी के मयूर-पिच्छ तथा वस्त्रों में मन्द स्पन्दन करके ही थकित हो रहे हैं, द्रवित हो रहे हैं। तरु एवं पाषाण और पक्षी, पशु आदि समस्त प्राणी मूर्ति बन गये हैं। एक पल्लव भी हिलता नहीं।

मुरली बज रही है—बज रही है मुरली और रसस्राव हो रहा है उस रसमयी सुधा के स्पर्श से समस्त जड-चेतन के द्वारा। अश्रु, स्वेद, मधु—सबने एकाकार होकर सम्पूर्ण भूमि को,

समस्त धरातल को रस-पिच्छल बना दिया है। रोमाञ्च—पशु, पक्षी, कीट, भृङ्ग के रोमाञ्च की चर्चा ही व्यर्थ है, रोमाञ्च तो हो आया है इस सर्वसहा धरा को। यह एक-एक तृण ऊपर उठ गया है। एक दूर्वा की एक पत्ती तक झुकी नहीं है। यह रोमाञ्च ही तो है धरा का।

श्याम—यह चिर-चञ्चल स्थिर हो गया है, मुरली जो बजा रहा है यह। शान्त, स्थिर—त्रिवली में मन्द-मन्द गति होती है, छिद्रों पर अँगुलियाँ फुदक रही हैं, मयूर-पिच्छ तनिक तनिक हिलता है, पीतपट स्पन्दित होता है और मोहन—इसे जैसे कुछ पता नहीं, यह तो निमग्न है अपने राग में सचराचर को निमग्न करके। बड़ी-बड़ी पलकें झुक गयी हैं, किञ्चित् अरुणाभ लोचन कमल-कोरकों की भाँति केवल मुरलिका को देखते हैं, कुञ्चित पल्लव-मृदु अधरों की अरुणाभा वेणु में प्रतिफलित हो रही है।

यह श्याम अङ्ग, यह इस श्रीअङ्ग की नीलोज्ज्वल द्युति और इस द्युति से स्नात यह स्वर्ण-पीत पीताम्बर, वनमाला, रत्नाभरण, मुक्ता-माल, पुष्प-दाम, धातु-चित्र – सबके वर्ण विचित्र हो गये हैं। सब कन्हैया को भूषित करने के बदले स्वयं भूषित हो उठे हैं उसकी कान्ति से और यह कन्हैया—इसे भी क्या और कुछ काम है। यह तो मुरली बजाता है। बजाया ही करता है। इसी ललित त्रिभङ्गी से, ऐसे ही तमाल-मूल से टिका, यह वंशी ही बजाया करता है।

—❀⊂❀⊂❀—

वत्सोद्धार

तम्यां तमोवन्नैहारं खद्योतार्चिरिवाहनि ।
महतीतरमायैश्यं निहन्त्यात्मनि युञ्जतः ॥

—भागवत १० । १३ । ४५

श्यामसुन्दर प्रातः पलक खोलते ही पूछता है—'मैया दाऊ उठा तो नहीं ?' नित्य रात्रि में शयन करते समय माता को सावधान करता है कि उसे शीघ्र जगा दिया जाय; कल की भाँति भूल न हो। किंतु मैया की यह भूल क्या कभी सुधरने की है। श्याम सोचता है—'मैया बहुत शीघ्र भूल जाती है। यह भी कोई बात है कि जब सब सखा द्वार पर आ जायँ, दाऊ भैया हाथ मुँह धोकर उसके समीप आ खड़ा हो, तब उसके नेत्र खुलें। वह सबसे पहिले उठेगा। दाऊ भैया को पता तक नहीं लगने देगा कि कब उठा। चुप-चाप उठकर हाथ-मुख धोकर बछड़े खोल देगा और तब शृङ्ग फूँकेगा। सब सोते से चौंक कर उठेंगे और भागेंगे। बड़ा आनन्द आयेगा।' लेकिन मैया को यह सब कहाँ स्मरण रहता है। वह बार-बार स्मरण कराने पर भी नित्य भूल जाती है। प्रातः बहुत देर से उठाती है उसे। उठते ही हड़बड़ी पड़ती है मोहन को। प्रत्येक कार्य में शीघ्रता करना चाहता है वह।

हाथ-मुख धोकर कलेऊ करने को कन्हैया भला कहीं अकेला बैठ सकता है। मैया जानती है कि यदि सब सखा साथ न बैठेंगे तो मोहन शीघ्रता में कुछ खायेगा ही नहीं। आग्रह करके वे सबको पुचकार कर बैठाती हैं। मैया का स्नेह, उनका अनुरोध, श्याम के संग कलेऊ करनेका सु-अवसर, भला कौन नहीं बैठेगा। कहने को तो सब अपने घरों से कलेऊ करके ही आते हैं; किंतु घर पर क्या कुछ रुचिकर भी लगता है। कन्हैया के साथ मैया के हाथ का नवनीत मिलने की आशा हो तो फिर घर पर पेट कैसे भरे। माताओं की संतुष्टि के लिये मुख जूठा कर लेना ही नो कलेऊ नहीं होता। गोपियाँ भी जानती हैं कि उनके बच्चों को कौन-सा रस लगा है। किसी को न तो आश्चर्य होता और न आपत्ति।

'गोप-बालकों को कलेऊ करने साथ बैठा देने से सखाओं के कारण शीघ्रता करने की आशङ्का तो दूर हो जाती है, किंतु व्रजेश्वर को क्या किया जाय। उन्हें गोदोहन में पता नहीं क्या शीघ्रता रहती है। गौएँ तनिक धीरे-धीरे दुही जायँ तो क्या बिगड़ता है। बछड़े तो सम्भवतः आज-कल दूध पीते ही नहीं। वे दूध पीते तो क्या तनिक भी देर न लगती। यों ही कन्हाई कुछ भोजन नहीं करता, फिर ये सब द्वारतक भाग आते हैं और 'हुम्मा, हुम्मा' करके उसे शीघ्रता करने को उत्सुक बना देते हैं।' माता को कैसे समझाया जाय कि बाबा स्वयं गोदोहन में पर्याप्त विलम्ब करने का प्रयत्न करते हैं। कन्हैया को, दाऊ को, भद्र को वे शीघ्र गोष्ठ से भीतर भेज देते हैं और फिर विलम्ब करने का प्रयत्न करते हैं; बछड़ों को तो सचमुच शीघ्रता रहती है। बाबा को भी संदेह है कि उनके श्रीकृष्णचन्द्र के साथ खेलने की उत्सुकता में वे थनों में एक-दो बार मुख मारकर भाग खड़े होते हैं और यदि द्वार बंद न हो तो सीधे भवन-प्राङ्गण में ही पहुँचें। बड़ी सावधानी से द्वार बंद करा दिया करते हैं।

कलेऊ समाप्त होते ही गोपाल लकुट उठाता है। माता के मुख-हाथ धोने में भी शीघ्रता रहती है। कछनी, पटुका, आभूषण, मयूर-मुकुट, वनमाला, भाल पर गोरोचन की खौर, कुङ्कुम-तिलक और कस्तूरी का बिन्दु—माता का शृङ्गार ही न पूरा हो यदि उसे अवसर मिले। नित्य वह

कुछ-न-कुछ भूलती है, क्रम तो कभी रह नहीं पाता। कन्हैया इतनी शीघ्रता करता है कि उसमें क्रम विस्मृत हुए बिना रहता नहीं। भृङ्ग, लकुट, मुरली सिर के समीप रखकर सोता है। पता नहीं क्यों उसे शङ्का हो गयी है कि कोई उसकी वंशी चुरा लेगा।

माता कभी दाऊ की मनुहार करती हैं, कभी श्रीदामा की और कभी सुबल और भद्र की। 'कन्हैया को दौड़ाना मत! वह नित्य थक जाया करता है। बड़े अच्छे हो तुम लोग, परस्पर भगाड़ना मत और चिढ़ाना भी मत। बहुत दूर मत जाया करो। यहीं भवन के सम्मुख तो बहुत तृण हैं। भला, इस सामने के मैदान से हरी-हरी अच्छी दूर्वा कहाँ मिलेगी। यहीं बछड़ों को चरने दो! यहीं बछड़ों को चरने दो। यहीं सब खेलो। बस, उस बड़े वृक्ष से आगे तो जाओ हो नहीं। हाँ—दोपहरी होने से पूर्व ही लौट आना। आजकल धूप तीव्र होने लगी है। वायु उष्ण चलता है।' पता नहीं क्या-क्या समझाना रहता है उन्हें। 'ये बालक हूँ-हाँ तो कर देते हैं; किंतु ध्यान कहाँ देते हैं। बच्चे हैं सब—भूल जाते हैं। एक बात इसीसे तो बार-बार कहनी पड़ती है।'

'कन्हैया तो बहुत चञ्चल है। बहुत सीधा है। खेल में लग जानेपर उसे दूसरा ध्यान ही नहीं रहता। बचपन से ढीठ है। पता नहीं कहाँ जाय, क्या करे। भय तो जैसे उसने जाना ही नहीं।' बार-बार माता समझाती हैं कि वह दूर न जाय और दाऊ का साथ न छोड़े। दाऊ को भी बराबर सावधान करती हैं कि 'वे अपने छोटे भाई को कहीं अकेले न जाने दें। किसी वृक्ष पर कोई चढ़ने का प्रयत्न न करे। यमुनाजी के किनारे भूलकर भी न जाय। प्यास लगते ही सब लोग घर लौट आवें। बछड़े भागकर कहीं जा नहीं सकते, अतः वे भाग भी जायँ तो उनके पीछे दौड़ने की आवश्यकता नहीं है। वे स्वयं घर लौट आवेंगे।' पता नहीं और कितनी आशङ्काएं, कितनी अत्यावश्यक चेतावनियाँ हैं, पर ये बालक सुनते कहाँ हैं। उन्हें तो बस, खेलने की पड़ी है।

कलेऊ कराके श्यामसुन्दर का मैया शृङ्गार करने में लगती हैं और बालक अपने-अपने बछड़े लाने चल पड़ते हैं। माता को इतनी देर लगती है कि कन्हैया चाहे जितनी शीघ्रता करे; सभी सखाओं के बछड़े द्वार पर आ जाते हैं और जब पुनः सखा आ जाते हैं, तब उनके साथ ही वह भवन से निकल पाता है।

× × × ×

बछड़ों को लेकर दूर जाना न तो सम्भव है और न वैसा करने की आवश्यकता ही है। नन्दग्राम एवं बरसाने का तो अब नाम ही दो रह गया है। दोनों इस प्रकार एक हो गये हैं कि उनकी सीमा का कोई चिन्ह नहीं। जैसे एक ही ग्राम विस्तीर्ण हो गया हो। दोनों के सम्मुख कालिन्दी-कूल के मध्य में तो गोष्ठ ही है। नन्दग्राम के पृष्ठ-भाग में गिरिराज की तराई का समतल भाग बछड़ों के चरने की भूमि है। बछड़े गिरि-शृङ्ग पर तो चढ़ने से रहे और विस्तृत खुला भू-भाग बरसाने से आगे जाने पर प्राप्त होगा। गोपबालक इतनी दूर भला, कहीं जा सकते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह कि घड़ी-घड़ी पर नन्द-भवन से कोई न कोई आकर देख जाया करता है और सावधान कर जाता है कि बछड़े अब और तनिक भी आगे न जायँ। कुछ आगे बछड़े गये हों तो वह लौटा लाता है और दूर भागे बछड़ों को घेरकर एकत्र कर जाता है। बाबा किसी को भेजना थोड़ी देर भूल भी जायँ तो मैया कहाँ भूलती है। उसकी सब इच्छा पूरी हो तो एक व्यक्ति के लौटने से पूर्व ही पता नहीं वह पाँच और भेज चुके या पच्चीस। वह तो बस, एक ही धुन लिये भवन के द्वार तक बार-बार चक्कर लगाती है। 'कोई देख आओ, बालक कहाँ हैं? दूर तो नहीं गये? बछड़े उन्हें हैरान तो नहीं करते? कन्हैया को किसीने चिढ़ाया तो नहीं? अब तो बहुत विलम्ब हो गया। लौटा लाओ सबको। कम-से-कम उन्हें एक बार जल पीने को तो भेज दो!' पुरुष बड़े निष्ठुर होते हैं। कई-कई बार कहने पर तो कहीं एक बार जाते हैं और वह भी केवल समाचार लेकर लौट आते हैं।

'बालक आनन्द से खेल रहे हैं !' माता के मन में यह बात बैठती ही कम है। 'इतनी देर हो गयी, अब तो सब थक गये होंगे। अब तो सूर्य के ताप में उष्णता आ गयी है। अब लौटना चाहिये सबको !' जब तक श्यामसुन्दर लौट न आये, उन्हें दूसरी बात सूझने से रही। गृह में कुछ कार्य है तो बस, एक ही कि उनका नीलमणि आता होगा—उसके लिये स्नान का जल, उस की वनमाला के लिये पुष्प और उसके लिये भोजन-सामग्री, इनके संकलन में भी वे एकाग्र कहाँ हो पाती हैं। श्याम वन में जो है। उसे विलम्ब जो हो गया। 'वह क्षुधित होगा। थक गया होगा !'

× × × ×

बछड़ों को चरना कहाँ रहता है। वे इधर-उधर कभी-कभी तृण में मुख मार लेते हैं और कूदते रहते हैं। मृगों के मध्य में जैसे वे भी मृग ही हों। उनके चरवाहे भी तो कपियों के साथ किलकते, कूदते, मुख बनाते दौड़ते हैं।

कन्हैया कभी-कभी तमालमूल में ललित त्रिभङ्गी से खड़ा हो जाता है। मुरलिका अधरों से जा लगती है और—आगे तो कहने की बात रह नहीं जाती। कोई नहीं जानता कि उस समय संसार में क्या होता है। सब भूल जाते हैं अपने-आपको। पशु, पक्षी तक विस्मृत हो जाते हैं। बालक जब उस रससिन्धु से उत्थित होते हैं, वे आश्चर्य से देखते हैं—वृक्षों से जलप्रवाह चल रहा था, वह अभी-अभी मुरली के मूक होने के साथ ही कदाचित् रुका है। पाषाण अब भी आर्द्र एवं कोमल हैं। सम्भवतः वे मोम की भाँति कोमल हो गये थे। तभी उनपर खड़े बछड़ों, मृगों तथा स्वयं उनके चरण-चिह्न अङ्कित हो गये हैं।

पक्षी ने शावक के मुख में चारा देने के लिये चञ्चु डाला था। वह अब तक वैसे ही रह गया था। अभी उसने मुख हटाया है धीरे से। मृगों के मुख में तृण पड़े हैं और कुछ मुख से गिर गये हैं। फण फैलाकर झूमते सर्पों ने अभी सिर झुकाया है और सरकते जा रहे हैं। मयूर ने पक्ष फैलाये थे; पर नृत्य तो निश्चय ही वह नहीं कर सका था। और ये पुष्प—इतने पुष्प यहाँ पृथ्वी पर कहाँ से बिछ गये ? वृक्षों और लताओं से क्या इतने पुष्प गिरे हैं ! ऐसे पुष्प तो समीप के वृक्षों या लता-कुञ्जों में हैं नहीं; तब क्या आकाश से जल की भाँति पुष्प भी गिरते हैं। कौन जाने—कन्हैया जब मुरली बजाता है, सब विचित्र ही बातें तो होती हैं।

सदा मुरली ही नहीं बजती—प्रायः बालक खेलते हैं। सब स्पर्धा कर लेते हैं और तब फल, पुष्प, पाषाण फेंकते हैं और देखते हैं कि कौन सबसे अधिक दूर फेंक सकता है। कभी-कभी श्यामसुन्दर के साथ कई एक नृत्य करते हैं। किङ्किणी एवं नूपुर रुनझुन बजने लगते हैं। गुन-गुन करके भौंरे गाते हैं। दूसरे ताली बजाते हैं। कभी वे परस्पर गौएँ और चरवाहे बन जाते हैं और कभी दो बालक वृषभ बनकर हुंकार करते हुए मस्तक से टक्कर करते हैं।

कोई कोकिल के साथ 'कुहू-कुहू' करता है, कोई बिल्ली के समान 'म्याऊँ-म्याऊँ' और कोई बकरी के बच्चे के समान 'म्याँ-म्याँ'। अनेक पशुओं की बोलियों का वे बड़ी सफलता से अनुकरण कर लेते हैं। एक एक पशु की बोली बोलता है तो दूसरा दूसरे पशु की। परस्पर एक दूसरे को दौड़कर छूते हैं, भागते हैं और बराबर तालियाँ बजा-बजा कर हँसते हैं। चलती रहती है यह बालक्रीड़ा।

× × × ×

'भैया, यह किसका बछड़ा है ? कितना सुन्दर है यह !' श्यामसुन्दर ने बड़े भैया को एक बछड़े की ओर आकर्षित किया। यह बछड़ा इससे पूर्व तो इस यूथ में कभी देखा नहीं गया। पास के किसी व्रज से भाग आया होगा। सम्पूर्ण शरीर सुचिक्कण कृष्णवर्ण। कहीं दूसरे रङ्ग का एक बिन्दु नहीं है। अत्यन्त चञ्चल, सभी बछड़ों से कुछ बड़ा, सबसे पुष्ट ! बछड़ों से बालक तनिक दूर खेल रहे हैं। नवीन बछड़ा बालकों की ओर धीरे-धीरे चरता-चरता चला आ रहा है। उसके नेत्र लाल-लाल हैं और बार-बार सिर उठाकर बालकों को वह देख लेता है।

'कितना सुन्दर है !' कन्हैया ने उसे पकड़कर पुचकारने की इच्छा की। नवीन बछड़ा है, सम्भव है कि समीप जाने से चौंककर भाग खड़ा हो, अतः घूमकर पीछे की ओर से दबे पैर

धीरे-धीरे श्याम उसके समीप तक गया। बालकों ने देखा और सब उधर ही आकर्षित हो गये। पता नहीं किसका बछड़ा आ गया है आज अपने यूथ में। गोपाल कोई नवीन क्रीड़ा करेगा, सबकी यही धारणा है।

लपककर श्रीकृष्ण ने पूँछ पकड़ ली; किंतु बछड़े ने पैर चलाया मारने के लिये। इसके लिये तो कन्हैया सावधान ही था। उसने पहिले से सुन रक्खा है कि काले बैल प्रायः लात मारते हैं। बछड़े ने जैसे ही पैर चलाया, पूँछ वाले हाथ से ही वह पैर पकड़ लिया गया। बछड़े ने दूसरा पैर चलाया और वह दूसरे हाथ में आ गया।

'कनूँ, दैत्य है यह!' दाऊ भैया चिल्ला उठे। गोप-बालक तो सन्न रह गये; किंतु कन्हैया कुछ कच्चा खिलाड़ी तो है नहीं। उसने दोनों पैर एवं पूँछ तो पकड़ ही रक्खी है, अब लगा घुमाने सिरके चारों ओर। स्वयं घूमता जाता है और वह असुर आकाश में चक्कर खा रहा है।

'हाथ ढीले मत करना, नहीं तो वह मारेगा!' सुबल ने सावधान तो किया; परंतु आगे क्या होगा सो सोचना कठिन है। भला, कब तक इस प्रकार कोई घुमाता रहेगा, सो इतना बड़ा साँड़ उठाकर। कन्हैया थक तो जायगा ही। बहुत सोचना नहीं पड़ा। घुमाते-घुमाते उसे श्याम ने एक बड़े से कपित्थ (कैथ) के वृक्ष पर फेंक दिया। वृक्ष का वह ऊपरी भाग उसके आघात से टूटकर धड़ाम से गिर पड़ा।

'ठीक! बड़ा अच्छा किया!' बालक ताली बजाकर खिल उठे। उन्होंने दौड़कर अपने श्यामसुन्दर को घेर लिया। उसे हृदय से लगाया और क्रमशः उसके दोनों हाथ बारी-बारी से देखते रहे कि कहीं हाथों में कुछ आघात तो नहीं लगा है, वे अधिक लाल तो नहीं हो गये हैं। निश्चय ही उन्हें हाथ कुछ अधिक लाल जान पड़े। उन्होंने फूँक मारकर उनको ठीक किया।

देवता पुष्प-वर्षा कर रहे हैं। आकाश में विमानों का ठट्ट लगा है। दैत्य का शरीर फट गया है। उससे रक्त की धारा चल रही है; किंतु यह सब तो पीछे देखने की वस्तुएँ हैं। बछड़े, मृग तथा कपि तक घेरकर कन्हैया को ही देख रहे हैं। वह तो अक्षत है न?' उसे क्षत पहुँचा हो—ऐसी सम्भावना होने पर फिर क्या और कुछ देखा जा सकता है?

—❀⊂❀⊂❀—

बक-वध

कर्ण-लम्बितकदम्बमञ्जरीकोमलारुणकपोलमण्डलम् ।
नीलनीरदविहारविभ्रमं नीलिमानमवलम्बयामहे ॥

—श्रीलीलाशुक

बक—मूर्तिमान् पाखण्ड, दूसरों को तो वह भीत ही करता है। श्रीकृष्ण के सहचर उससे भयभीत ही होते हैं। उससे भागते ही हैं। बक के लिये भी वे ग्राह्य नहीं। उसके आहार तो हैं जल-जीव। भौतिक जीवन में ही निमग्न प्राणी।

हम कुछ चाहते हैं—बिना श्रम किये चाहते हैं और पाखण्ड के आखेट होते हैं। उथले जल की मछलियाँ ही बक को प्राप्त होती हैं। जो उद्योग का परिपाक चाहते हैं, आडम्बर भ्रान्त नहीं कर पाता उन्हें।

बक को संतोष कहाँ—वह तो श्रीकृष्ण को ही निगल जाना चाहता है। मुख में रख भी लिया उसे, किन्तु वह नवनीतसुकुमार वहाँ तप्ताङ्गार हो गया। उगलना पड़ा। पचा नहीं सके तो तुण्डाघात ही सही ! तब तो श्रीकृष्ण ने पकड़कर चीर फेंका।

पाखण्ड भी यही करता है। वह वास्तविकता को ही तिरोहित कर देना चाहता है। श्रीकृष्ण को अन्तर्हित करने का ही प्रयास है उसका। वह क्षणभर ही ऐसा कर सकता है। उगलना ही पड़ेगा उसे और तब उसका प्रयत्न होता है उसे नष्ट कर देने का। आक्षेप ही उसका आश्रय है। नष्ट न हो तो क्या ? श्रीकृष्ण सदा से बकारि है—पाखण्ड का नित्य विनाशक है वह।

× × × ×

प्रातः कलेऊ करके नित्य की भाँति राम-श्याम सखाओं के सङ्ग बछड़ों को लेकर वन में आ गये। खेल में लगने पर कहीं समय का ध्यान रहता है, कई व्यक्ति नन्दभवन से बुलाने आये और लौट गये। वैसे अब बुलानेवालों की संख्या धीरे-धीरे पर्याप्त घट गयी है। नित्य बालकों का बछड़े चराने ही हैं। वे एक निश्चित स्थान से अधिक दूर नहीं जाते। मध्याह्न होने के पूर्व घर लौट आते हैं। अपने समय से पहिले बहुत आग्रह करने पर भी नहीं लौटते, अतः बाबा ने व्यर्थ बार-बार लोगों को वहाँ भेजना कम कर दिया है। नित्य सायंकाल श्रीकृष्ण उनसे आग्रह करता और झगड़ता है कि वे किसी को न भेजा करें, इतने पर भी चार-पाँच व्यक्ति तो मध्याह्न तक भेजे ही जाते हैं। जब से वत्सासुर मारा गया, बाबा पुनः सशङ्क हो गये हैं। मैया ने तो शक्तिभर हठ किया कि बालकों का वन में जाना बंद ही कर दिया जाय; किंतु कन्हैया जो हठ करता है। उसके बड़े-बड़े कमलनयन भर आते हैं। सखाओं के साथ वनमें खेलने का लोभ वह कैसे छोड़ दे। बालक को निरुत्साह करना बाबा को अभीष्ट नहीं। अतः बुलाने के बहाने देख आने वालों की फेरी लगती रहती है। अभी ही वन से एक गोप बड़ी कठिनता से लौटाया गया है। सभी आनेवाले तो यही हठ लिये आते हैं कि वे बछड़े सम्हाल लेंगे, श्यामसुन्दर सखाओं के साथ लौट जाय।

बालकों को खेलते-खेलते प्यास लग गयी है। आँख-मिचौनी खेलते, बंदरों के साथ कूदते और 'खो, खो' में भागते-दौड़ते थक भी गये हैं वे। लेकिन उन्होंने जो गोप आया था, उसे लौटा दिया। 'अभी से घर कौन जाय। घर जाने पर तो फिर मैया सायंकाल के समीप ही निकलने देगी भवन से।' अतः जल पीकर यहीं खेलते रहना उनके अनुकूल है। श्रीदामा ने अपने को प्यास लगने की बात कही, श्याम ने बताया कि वह भी प्यासा है। फिर तो सबने अनुभव किया कि जल की आवश्यकता प्रत्येक को है।

'यहाँ पास में ही तो 'सरोवर' है !' सुबल ने परसों एक बछड़े को जो कुछ दूर चला गया था, हाँकने जाकर सरोवर देख लिया है। वह उन घने वृक्षों के मध्य में ही तो है !' उसने संकेत किया।

अपने को प्यास लगी है तो बछड़ों को भी लगी होगी। सबने अपने-अपने बछड़ों को घेरा। श्यामसुन्दर ने पुकारा और उसके सब बछड़े कूदते हुए समीप आ गये। सुबल को आगे चलना है मार्ग दिखलाने के लिये। बड़ा सुन्दर सरोवर है—खूब विस्तृत। निर्मल नीला-नीला जल भरा है। लाल, श्वेत, नीले, पीले कमलों से भरा हुआ। अवश्य ही रात्रि को इसी प्रकार कुमुदिनियों से भर जाता होगा। उनके सम्पुटित पुष्प कमलों के मध्य ऐसे लगते हैं, जैसे कमल-कलिकाएँ हों। हंस तैर रहे हैं, सारस एक पैर पर खड़े धूप ले रहे हैं। सरोवर के किनारे के सघन वृक्षों की डालियाँ झुककर जलका स्पर्श कर रही हैं।

बछड़ों ने जल पिया। साथ आये कपि वृक्षों पर से जल में कूदने और लम्बी डुबकी लगा कर तैरने में परस्पर स्पर्धा करने लगे। गोप-बालकों ने कमलपत्र तोड़े। सुबल ने एक पत्रपुटक दाऊ के और एक श्याम के हाथ में दे दिया। उन दोनों से सबने जल पिया। पता नहीं क्यों, उस घाट पर ही सरोवर की सारी मछलियाँ एकत्र हो गयी हैं। जल पीकर बालक उनका उछलना-कूदना देखने लगे हैं।

सहसा हंस क्रन्दन करते हुए जल से उड़ भागे, सारसों ने पंख फड़-फड़ाया और दूसरे किनारे के वृक्षों पर जा बैठे। कपियों ने एक साथ चीत्कार किया। बालक चौंके, उन्होंने इधर-उधर देखा। 'बाप रे !' उनके समीप ही एक बगुला बैठा है और दबे पैर धीरे-धीरे उन्हीं की ओर आ रहा है। साधारण बगुला होता तो समझ लेते कि इतनी मछलियों को देखकर इधर आ बैठा है; परन्तु वह बगुला—वह तो जैसे इन्द्र के वज्र से हिमालय का कोई हिमाच्छन्न शिखर टूटकर गिर पड़ा हो। इतना बड़ा कि पूरे हाथी को खड़ा निगल ले। भला, कहीं इतना बड़ा बगुला होता है। बालक डर गये—भय के कारण भाग भी नहीं सके वे। देखते-के-देखते रह गये उसे। बगुला—बकासुर, कंस ने भेजा है उसे। उसकी बड़ी बहिन पूतना को इस नन्द के लड़के ने मार डाला—आज वह बदला लेने आया है।

बगुला झपटा और उसने श्रीकृष्ण को चोंच में उठाकर बंद कर लिया। लिखने, कहने, सोचने में तो बहुत विलम्ब होता है; किंतु बालकों ने बगुले को देखा और बगुले ने टपसे श्रीकृष्ण को उठा लिया, इसमें विलम्ब नहीं हुआ। जैसे सबके हृदयों की गति बंद हो गयी हो। श्याम—धक् से हो गये हृदय। भय सहसा आया—जैसे वे निष्प्राण हो गये हों। कन्हैया को इस विशाल बगुले ने निगल लिया—मन, बुद्धि, प्राण, रक्त—सब जहाँ, जैसे थे रह गये वैसे ही।

दो पल—दो पल भी मिल गया होता तो दाऊ को सावधान होने को पर्याप्त था। बक ने दो पल भी तो नहीं दिये थे कन्हैया को उठा लेने में। ऐसे ही दो पल वह उस नवनीतसुकुमार, सजल-जलदश्याम को मुखमें भी नहीं रख सका। जैसे भूल से लाल तप्त लौहगोलक उठा लिया हो—पूरी चोंच खोलकर उगल दिया श्रीकृष्ण को! एक बार इधर-उधर चोंच झाड़ी और फिर मारने के लिये अपनी वही तीक्ष्ण चोंच उठाकर झुका।

हो क्या रहा है—बालकों को यह सब सोचने का अवकाश मिला ही नहीं। श्यामसुन्दर ने एक हाथ से चोंच पकड़ ली। दूसरे हाथ से उसे बलपूर्वक खोल लिया। चोंच के नीचे के भाग पर दाहिना चरण रक्खा और हाथ से ऊपरवाले भाग को ऊपर-ऊपर—और ऊपर एक ही झटके से उठाता गया। जैसे कास को पात्र बनानेवाले चीरते हैं, बगुले को उसने चीरकर फेंक दिया। उसके चरण और कर उस असुरपक्षी के रक्त से लाल हो गये हैं। श्याम शरीर पर कुछ रक्तबिन्दु शोभित होने लगे हैं।

× × × ×

बालक!—बालकों ने जैसे ही देखा कि श्याम ने बगुले को चीरकर फेंक दिया है, जैसे उनमें द्विगुणित प्राण आ गये हों। दौड़कर उन्होंने अपने सखा को घेर लिया। मस्तक से लेकर पदतल तक प्रायः प्रत्येक ने रत्ती-रत्ती उनके शरीर को भली प्रकार देखा अँगुलियों से स्पर्श करते हुए कि कहीं खँरोंच तो नहीं आयी है। संतोष नहीं हुआ—अनेक स्थानों पर बगुले का रक्त लग गया है—चरण और कर में विशेषतः जल से उन स्थानों को भली प्रकार धोकर उन्होंने विश्वास किया कि आघात नहीं लगा है।

ऊपर आकाश में बाजे बज रहे हैं। आज बालकों को पता लगा कि ये विमानों पर देवता गाते-बजाते और उनके ऊपर पुष्पवर्षा करते हैं। बड़ा आश्चर्य हुआ उन्हें। 'लोग देवताओं की पूजा करते हैं। देवताओं पर पुष्प चढ़ाते हैं। उनकी स्तुति करते हैं। उनके सम्मुख शङ्ख, घण्टा, घड़ियाल बजाते हैं। ये देवता क्यों इस प्रकार बाजे बजाकर कुसुमवृष्टि में लगे हैं और कुछ गाते भी हैं!' कौन बताये उन्हें कि यह जो देवताओं का परमदेवता उनके मध्य में खड़ा है, उसकी अर्चा का यह समारम्भ है।

'अब तो सीधे घर चलना है!' सुबल ने कहा और सम्मति की अपेक्षा किये बिना बछड़े हाँक दिये। ठीक भी तो है, इतना बड़ा दैत्य बगुला अभी मरा, पता नहीं इसका कोई भाई-बेटा और आस-पास हो। सभी बालक चलने के लिये उद्यत हो गये। दाऊ और कन्हैया ने एक दूसरे की ओर देखा। दोनों हँसे। मध्याह्न समीप है, सब सखाओं की सम्मति है तो नित्य से तनिक शीघ्र ही सही। वे विरोध भी करें तो कोई अब सुनने वाला है नहीं।

× × × ×

'मैया श्याम को गोद में मत लेना! छूना मत इसे।' मधुमङ्गल ने आगे दौड़कर सुनाया।

'क्यों रे, हुआ क्या है?' हँसते हुए माता ने पूछा।

'इसे एक बगुले ने खाकर उगल दिया है। जूठा है यह!'

'बगुले ने...!' मधुमङ्गल को पता नहीं क्या-क्या कहना है; किंतु माता का मुख देखकर वह मूक हो गया! माँ को आशङ्का हो गयी।

'बड़ा भी—पहाड़-सा भारी बगुला था!' सुबलने झटपट घटना सुना दी।

'मेरा लाल!' माता दौड़ीं यह देखने कि उनके नीलमणि को कहीं आघात तो नहीं लगा है।

बालकों से बाबा को समाचार मिला। वे भीतर आये और यह देखकर लौट गये कि श्रीकृष्णचन्द्र प्रसन्न एवं अनाहत हैं। उन्हें अपने कुलपुरोहित महर्षि शाण्डिल्यजी को झटपट बुलवाना है। ये फिर असुर आने लगे। 'शान्ति' होनी चाहिये।

गोप-गोपियाँ—भीड़ लग गयी नन्दभवन में। श्यामसुन्दर एक की गोद से दूसरे की गोद में जाने लगा। सब उसके शरीर को ही देख रहे हैं।

'ओह, इस बच्चे के जन्म से ही इस पर आपत्तियाँ आ रही हैं। अवश्य इसके द्वारा उन असुरों का पूर्वजन्म में कोई बड़ा अप्रिय कार्य हुआ है। इसी से सब इसे कष्ट देने बार-बार आ जाते हैं!' एक वृद्ध गोप गम्भीरता से कह रहे हैं।

'कितने भयङ्कर हैं ये राक्षस; परंतु जैसे पतिंगे अग्नि में पड़कर स्वयं भस्म हो जाते हैं, वे स्वयं ही नष्ट हो गये। बालक का वे कुछ बिगाड़ नहीं सके!' उपनन्दजी ने सबको समझाया।

'पता नहीं क्या होनेवाला है। जिन दैत्यों के भय से गोकुल छोड़ा, वे यहाँ भी आने लगे। अब कहाँ जायँ। नारायण मेरे नीलमणि की रक्षा करें।' मैया की आशङ्का-आकुलता सीमातीत है।

'ब्राह्मणों की वाणी मिथ्या नहीं होती! गर्गाचार्यजी ने जो कुछ कहा था, वह अक्षरशः सत्य सिद्ध हो रहा है!' रोहिणीजी माता को अन्तःपुर में आश्वासन दे रही हैं।

'तुम सब अब फिर से स्नान करो!' मधुमङ्गल को एक ही परिहास सूझा है। 'तुमने जूठे कनूँ को छुआ!'

'चल, बड़ा अच्छा हुआ ! अब कोई राक्षस इस मुख से गिरे ग्रास को लेने नहीं आयेगा!' माता को इस परिहास में आन्तरिक आश्वासन मिला।

बछड़े सबके वन से लौटकर नन्द-गोष्ठ में ही आये हैं। यह तो नित्य का क्रम है कि गोप उन्हें अपने घरों को लौटा ले जाते हैं; किंतु बालक तो बछड़े नहीं हैं कि उन्हें बलात् ले जाया जाय। वे सब मध्याह्न-भोजन श्याम के साथ ही करते हैं। दोपहरी में वहीं खेलते हैं। सायंकाल जब सूर्य-ताप अत्यन्त क्षीण हो जाता है, श्याम को माता बहुत आग्रह करने पर निकलने देती हैं। उस समय भवन के सम्मुख सब खेलते रहते हैं।

माता को ही आना पड़ता है कन्हैया को घर ले जाने के लिये। दूसरों की बात तो वह सुनता ही नहीं। सो भी माता सब सखाओं को साथ ले जाती हैं। अकेला श्याम तो घर जाने से रहा। सभी बालकों की माताएँ सायंकाल नन्द-भवन से अपने बालकों को लिवा जाती हैं। बालक बड़ी कठिनाई से तो जाते हैं, और अवसर मिलते ही पुनः मार्ग से ही भाग आते हैं। बार बार उन्हें ले जाना पड़ता है। इसी बहाने श्यामसुन्दर को बार-बार देखने का अवसर मिलता है। केवल श्रीदामा ही अपने घर से किसी सेवक के आते ही चला जाता है। उसके यहाँ का सखा-मण्डल भी उसका अनुगमन नहीं करता।

× × × ×

माता तो चाहती हैं कि यह बछड़े चराना ही बंद हो जाय और कन्हैया की हठ है कि वह दोनों समय बछड़े ले जाया करेगा। गोप तो गायें लेकर प्रातः के गये सायंकाल लौटते हैं; फिर वह दूसरे समय क्यों चराने न जाय। माता की इच्छा कहाँ पूर्ण होती है। उनका यह हठी पुत्र अपनी हठ कहाँ छोड़ता है। वह जब आग्रह पर उतर आया है तो उसे पूरा करेगा ही। बालकों ने शीघ्र ही दोनों समय बछड़े ले जाना प्रारम्भ कर दिया।

व्योम-वध

तं निगृह्याच्युतो दोर्भ्यां पातयित्वा महीतले ।
पश्यतां दिवि देवानां पशुमारममारयत् ॥

—भागवत १० । ३७ । ३१

मय के पुत्र—माया की संतति व्योम—आकाशोपलक्षित पञ्चभूतात्मक जगत्—विषयसमूह !

तुम्हारी महामाया तो विख्यात ही है और तुम्हारा पराक्रम भी लोकविश्रुत है। कौन है जो तुम्हारे महाप्रभावशाली स्वरूप को विस्मृत हो जाय।

'कृष्णः शरणं सताम्' बस, जब इसे तुम भूलते हो, तभी तुम्हारा विनाश होता है।

ठीक है कि तुम प्रबल हो, ठीक है कि तुम्हारी माया दुर्भेद्य है। यह भी ठीक है कि श्रीकृष्ण की संनिधि में ही तुम उनके सखाओं को—उनके जनों को हरण कर सके। तुमने उन्हें प्रलुब्ध कर लिया और गिरि-गह्वर में घोर तमस में बंदी बना दिया।

सीधे-सादे ग्वाल-बाल—अबल जीव—क्रीड़ा में वह अपने नित्य सहचर से दूर जा पड़ते हैं। तुम उन्हें आक्रान्त कर लेते हो। तुम्हारा प्रतिकार करने में वे सदा से अक्षम हैं। श्रीकृष्ण से दूर हुए और व्योम ने—विषयों ने आक्रान्त किया। अन्धतमस गिरि-गह्वर में बंदी हो गये।

तुम जानते थे कि श्रीकृष्ण के सहचर अपने सखा को आपत्ति में पुकारेंगे। वे दूसरे किसी को पुकार ही नहीं सकते। सखा पुकारें और श्याम न सुने—तुमने बेचारों की वाणी रुद्ध कर दी। वे पुकार भी नहीं सकते।

मृत्यु के समय तो गोपाल का स्मरण ही पर्याप्त होता है। तुम जानते थे कि मोहन वाणी से पुकारने की अपेक्षा नहीं करता। इस भय से तुम सावधान थे। तुमने गोप-बालकों को मूर्छित कर दिया था। स्मरण भी छीन लिया उनसे तुमने और बंदी कर दिया अतल अन्धकार में।

जो व्रजराजकुमार के हैं—वे स्मरण करें तब आयेगा वह ? यहीं भ्रान्त हुए तुम, व्योम ! उसके जन जब तुम्हारी माया में मुग्ध होकर अन्धतमस के बंदी हो जाते हैं, वह स्वयं उन्हें स्मरण कर लेता है। व्यर्थ है तुम्हारा विषय-जाल, वह जीव को ही मूर्छित कर सकता है। हमारा स्मरण ही छीन सकता है वह—श्याम का स्मरण आवृत नहीं होता।

तुम्हें उस अच्युत ने पकड़ लिया। जो उसके स्वभाव में नहीं, जो उसने कभी नहीं किया, वही उसने तुम्हारे साथ किया। वह असुरों को मारता तो है, परंतु तुम्हारे लिये तो वह नृशंस हो गया। भूल गया वह अपने दयामय रूप को। छल—उसके निज जनों से छल और वह भी उसीका सखा बनकर ! इतना बड़ा दम्भ वह सह नहीं सकता था।

तड़पा-तड़पा कर, गला घोंटकर, लात, घूसे और थप्पड़ों से उसने तुम्हारी हत्या की। मारा उसने बहुतों को, पर निर्दय केवल तुम्हारे प्रति हुआ। दूसरे उसके जनों को पीड़ित मात्र करते हैं, पर तुमने ? तुमने उसके जनों को अन्धकार में बंद किया और उनसे अपने नित्य सखा का स्मरण तक छीन लिया ! वह भी उन्हीं का रूप धारण करके। इतनी धृष्टता तुम्हारी !!

जो गिरिवर को कनिष्ठिका पर उठा सकता था, उसे शिला फेंकने में क्या श्रम होना था। गुहा का अन्धकार—वह ऐसा, सूर्य नहीं जिससे प्रकाश प्राप्त करने के लिये गृह के द्वार उन्मुक्त करने पड़ते हैं। उसके सखा जब अन्ध-गह्वर में होते हैं और मूर्छित होते हैं--स्मरण भी नहीं कर पाते

व्योम की माया से मोहित होकर, तब वह महासूर्य शिला-द्वार फेंककर स्वयं पहुँच जाता है। स्वयं स्मरण कर लेता है।

व्योम—श्यामसुन्दर को एक बार जिन्होंने अपना कहा, उनके साथ माया—दम्भ! फिर तो पशु की भाँति—कुत्ते की मौत मरना ही चाहिये तुम्हें। अपनों के लिये उसने तुम्हें मार डाला। आध्यात्मिक जगत् की यह नित्यलीला जब वृन्दावन की भूमि पर भौतिक जगत् में व्यक्त हुई, तब वह यों ही नहीं आयी। उसमें श्यामसुन्दर गुफा में अपने सखाओं को उठाकर कह रहा है—'भैया, भूल तो मेरी ही है। मुझे थोड़ी देर हुई तुम्हारा स्मरण करने में! बड़ा कष्ट हुआ तुम्हें!' और उसके बरद बाहु उनके कंधों पर फैले हुए हैं।

सदा के लिये शाश्वत आश्वासन की वह अमूर्त क्रीड़ा जब भूमि पर मूर्त होकर मङ्गल-संचार-संलग्न हुई—हम उसके उस मूर्त रूपका ही स्मरण करें।

मध्याह्न व्यतीत हो चुका है। दोपहर के वन-भोजन के उपरान्त थोड़ी देर श्यामसुन्दर ने एक सखा की गोद में मस्तक रखकर किसलय-आस्तरण पर विश्राम कर लिया है। बछड़े उछलना भूल चुके हैं। कोई चुपचाप खड़े हैं, कोई अपने अगले पैरों के जानु पर गर्दन जोड़कर, मस्तक रखकर सो रहे हैं। मयूर कुञ्जों में अपने पंखों पर गर्दन रक्खे अलस भाव से पड़े हैं। केवल कपिदल में कभी-कभी उछल-कूद हो जाती है।

'आज तो 'भेड़-चोरी का खेल खेलें।' एक गोपाल ने प्रस्ताव किया। श्रीकृष्ण ने उसके मुखकी ओर देखा। पता नहीं नेत्रों में क्यों एक चमक आयी और समर्थन हो गया। दूसरे बालकों ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। यह नया गोपबालक किसी दूसरे ग्राम का है। आज ही उनकी मण्डली में आया है। उसका यह प्रथम प्रस्ताव है। अतः उसका मन तो रखना ही चाहिये।

'अब मेरा उद्देश सिद्ध होगा।' उस गोप-बालक ने बड़ी प्रसन्नता प्रकट की। उसने मनमें यह वाक्य दुहराया, इसे कौन जान सकता था, किंतु उसकी मुट्ठियाँ एक बार बँधकर खुल गयीं और उसका दक्षिण पाद भूमि को एक ठोकर दे गया, इसे भी किसी ने लक्षित नहीं किया। अपने प्रस्ताव के स्वीकृत होने से वह हर्षित हुआ तो इसमें विशेष बात क्या हो गयी।

सब बालक तीन दलों में विभक्त हुए। एक दल के भेड़ बने। वे हाथ-पैरों से चल रहे हैं। श्रीकृष्ण ने उनको चराने का भार लिया। वह सदा का चरवाहा जो ठहरा। उसके साथ तीन-चार बालक और हुए, एक चोर बना। सबसे छोटा रक्षक-दल। चोर उससे अधिक हैं और नवीन बालक इसी दल में है। शेष सब भेड़ बन गये हैं। यही ठीक है। भेड़ बनना ही ठीक है—शेष तो स्वाँग है सब।

मन्द-मन्द पवन के झोंके आ रहे हैं। वृक्षों से पुष्प गिर रहे हैं। लताएँ झुककर झूम रही हैं। मृदुल हरित भूमि पर गोपबालकों का समूह हाथ-पैरों के सहारे घूम रहा है। सबने पटुके कटि में बाँध लिये हैं। सबके लकुट एक ओर रख दिये गये हैं। केवल श्रीकृष्णचन्द्र तथा उनके दल के लोग लाठियाँ लिये उस भेड़ बने दल को घेरे खड़े हैं। एक दल बालकों का लताकुञ्जों में छिपा है, इस छिपे दल के बालक एक साथ दो-तीन ओर से दौड़कर आते हैं। कभी-कभी छिपकर हाथ-पैरों के बल आकर भेड़ बने दल में आकर मिल जाते हैं। रक्षक बालक जब एक ओर भेड़ें लौटाने दौड़ते हैं तो चोर बना दल दूसरी ओर से प्रयत्न करता है। भेड़ बने बालकों को केवल इतना करना है कि जो उनको स्पर्श कर दे, उसके संकेत की दिशा में चलें।

पीठ पर काली चिकनी अलकें लहरा रही हैं। कटि में मुरलिका लगा दी गयी है। एक छोटी-सी छड़ी लेकर श्याम कभी इधर दौड़ता है और कभी उधर भागता है। चोर एक-दो भेड़ भी ले जा पाते हैं तो खूब ताली बजती है। लौटाकर भी सब प्रसन्न होते हैं। बंदरों ने इस क्रीड़ा को देखा तो वे भी वृक्षों से भूमि पर कूद आये। उनकी उछल-कूद और किलकारी ने आनन्द और बढ़ा दिया।

× × × ×

'मेरे पिता दानव-सम्राट् हैं।' उस दिन महा मायावी, असुर-कुल के विश्वकर्मा मय का पुत्र व्योमासुर पृथ्वी पर विचरण करता हुआ वृन्दावन पहुँच गया था। उसने सुन लिया था कि नन्दनन्दन बकासुर को यमधाम भेज चुके हैं। वृन्दावन वह रुष्ट होकर पहुँचा था। "धरा के असुर हमारी प्रजा हैं। मुझे उनकी रक्षा करनी चाहिये। कंसराज हमारे अनुगत हैं। उनकी अनुनय रक्षित होनी चाहिये।" कंसने उसे प्रेरित किया था। मथुरा होकर ही वह आया था।

उसने दूर से गोपमण्डली एवं गायों के समूह को देखा। गोवर्धनधारी उस समय अपनी बालमण्डली के साथ शीतल छाया में विश्राम कर रहे थे। 'मैं सफल होऊँ या असफल; किंतु प्रतिकार पूरा करके छोड़ूँगा।' व्योम मय का पुत्र था। वह सहज भ्रान्त नहीं हो सकता था। उसने देख लिया कि श्रीकृष्ण से सीधे भिड़ना आपत्तिशून्य नहीं है।

'आप लोग क्या मुझे भी अपने साथ रहने देंगे! मैं दूर से आपके साथ खेलने के लोभ में चला आया हूँ।' व्योम ने एक सुन्दर गोप-बालक का वेश बनाया और समीप जाकर उसने बड़ी नम्रता से प्रार्थना की।

'इसमें भी भला, कोई पूछने की बात है!' श्यामसुन्दर के साथ सभी बालक हँस पड़े। वह उनकी बालमण्डली में सम्मिलित हो गया। केवल श्रीकृष्ण ने उसे एक बार गम्भीरता से देखा। एक क्षण को उनके नेत्रों में अरुणिमा आयी और चली गयी। वह काँप उठा। व्यर्थ था वह भय। उसे ऐसी कोई बात नहीं जान पड़ी कि वह पहिचान लिया गया है। थोड़ी ही देर में जब बालक खेलने को उद्यत हुए, उसीने एक खेल का प्रस्ताव किया। 'दम्भ—वह भी मेरे सखाओं के वेश तक का—ठीक!' श्याम मन-ही-मन कुछ गुनगुनाता-सा गम्भीर हो गया। लक्षित नहीं किया किसी ने।

'बक—मेरा सखा' उस अपने एक सखा के बदले इन सब गोपकुमारों का अन्त तो मैं करके ही रहूँगा। ये बालक तो गुफा में खुद ही जायँगे।' उसने निश्चय किया 'श्रीकृष्ण को अकेला कर दूँगा और जब वह अपने सखाओं को ढूँढ़ने लगेगा, तब कहीं उपयुक्त स्थान पर छिपकर उसपर आघात करूँगा।'

व्योम को कोई कठिनाई अपने कार्य में नहीं हुई। क्योंकि वह आज ही इस मण्डली में आया है, अतः रक्षक बालक उसे संकोचहीन करने के लिये प्रोत्साहित करना चाहते हैं। उसे भेड़ों को चुराने में अधिक सुविधा दी जाती है। यहाँ आने से पूर्व वह एक भयङ्कर गुफा गोवर्धन पर समीप ही देख आया है। बहुत भारी एक शिला वह उस गुफा का द्वार बंद करने योग्य वहाँ रख आया है। भेड़ बने बालक उसके द्वारा संकेत पाने पर वहाँ तक चले जाते हैं। बालक समझते हैं, यहाँ छिपना अच्छा है। यहाँ रक्षकों को अन्वेषण करने में कठिनाई होगी। बड़ा आनन्द आयेगा।

गुफाद्वार खुलने पर बालक उसके महा अन्धकार को देखकर हिचकते हैं, पर व्योम उन्हें अपनी माया से मूर्छित करके गुफा में रख आता है और द्वार बंद कर देता है। इस क्रम से जब भेड़ बने बालकों की संख्या थोड़ी रह गयी, तब चोर बने बालकों में से भी जिसे वह अकेले पाता, बलपूर्वक पकड़कर गुफा में लाकर बंद कर देता।

धीरे-धीरे चोर बने बालकों में दो-तीन ही रह गये। भेड़ बने बालक तो प्रायः सभी रक्षकों के हाथ से निकल गये। व्योम ने अन्त में चोर बने बालकों में से बचे उन बालकों को भी एक-एक करके बलात् ले जाना प्रारम्भ किया।

'कन्हैया, सब सखा गये कहाँ?' एक रक्षक बालक ने इधर-उधर देखकर पूछा। उसे आश्चर्य हो रहा है कि चोर बने बालक अपनी विजय पर भी ताली बजाकर हर्ष क्यों नहीं प्रकट करते। पास की कुञ्जों में उनके छिपे होने के लक्षण भी तो नहीं हैं।

'हाँ, यहाँ से सब कहीं चले गये!' सशङ्कित की भाँति श्रीकृष्ण ने इधर-उधर देखा। 'हम उन्हें ढूँढ़ें!'

एक कुञ्ज में एक बालक दूसरे को पकड़ कर लिये जा रहा है। वह बालक छूटने का यत्न नहीं कर रहा है, पर भेड़ों की भाँति भी नहीं जा रहा है।

'कुमुद है यह तो !' भद्र चौंका। 'वह तो भेड़ नहीं बना है। वह तो चोर है। उसे क्यों यह ले जाता है ? कुमुद कैसा हो रहा है ?' बहुत ही आश्चर्य से बालक ने श्रीकृष्ण को दिखलाया। ले जानेवाला आज ही गोपमण्डली में सम्मिलित होनेवाला नवीन बालक है। वह तीव्रता से भाग रहा है उसे लेकर।

जैसे सिंह अपने आखेट पर कूद पड़ा हो—सखाओं ने तो पीताम्बर की एक विद्युत्-रेखा-सी बनते देखी और भय से वे स्तम्भित हो गये। कुमुद मूर्छित है। वह भूमि पर गिर पड़ा है और कन्हैया ने जिसे पकड़ लिया है, वह तो गोप-बालक नहीं है। काला, पर्वतकाय, लाल रूखे केश, भयङ्कर जलते नेत्र—एक दैत्य है वह—दैत्य !

'वहाँ क्या देखता है !' केशव ने एक हाथ से दैत्य का गला पकड़ रक्खा है। दूसरे हाथ से उन्होंने एक थप्पड़ मारा कसकर। ऊपर देखा गोपकुमारों ने। दैत्य ने बड़ी आशा से ऊपर क्यों देखा, यह जानने के लिये। वहाँ देवताओं के दिव्य विमान दूर-सुदूर नभ में पीले-पीले, सायं-सूर्य की किरणों में चमकते मेघखण्ड से उन्हें जान पड़े। उन्होंने नहीं देखा कि उन्हीं के मध्य हिमधवल वृषभ पर भगवान् शंकर भी विराजमान हैं और अपने पिता के उन परमाराध्य से सहायता की कातर याचना लेकर ही असुर के नेत्र ऊपर उठे थे। व्यर्थ थी वह आशा। भगवान् शंकरने मुख फेर लिया है और इधर कन्हैया के हाथ-पैर चल रहे हैं। वह ओष्ठ काटते हुए कह रहा है 'तू गोप-कुमार है न !—मेरे सखाओं के रूपमें उन्हीं को ले चलने आया है न !'

'ओह, बड़ा निष्ठुर है तू भी ! मार भी दे !' बेचारा दैत्य तड़फड़ा रहा है। उसके नेत्र निकल पड़े हैं। मुख से फेन तथा रक्त आ रहा है। उसकी ऐंठ और उछल-कूद तो क्षण भरमें चली गयी; पर कन्हैया जो उसे सता-सताकर मार रहा है, यह तो देखा नहीं जाता। अब उसे बचाना तो सम्भव नहीं। हाथ टूट गये, नेत्र फूट गये, अब जीवन मिले तो क्या; पर गोप-बालकों को—जो तीन-चार वहाँ हैं दया आयी। 'तू नहीं मारता तो हमी मार देंगे। तू थक गया, दूर हट !' उन्होंने अपनी लाठियाँ उठायी। श्रीकृष्ण को रोकना चाहा।

"हूँ" कन्हैया की हुंकार के साथ उसकी दृष्टि देखकर तो बेचारे बालक सन्न-से हो गये। उनका सखा आज इतना रुष्ट है—वह रुष्ट होना भी जानता है, यह उन्होंने पहिली बार देखा। 'बड़ा दुष्ट है यह ! घोर दम्भी है" श्रीकृष्ण ने एक हाथ से दैत्यका गला दबा रक्खा है। मरोड़-कर उसके दोनों हाथ तोड़ डाले हैं। वे छिन्न-अस्थि हाथ झूल रहे हैं। पदाघात से दोनों जङ्घाएँ भी भग्न कर दी हैं। अब उसे एक हाथसे घूसे, थप्पड़ तथा पैरों से बराबर मारता जाता है। उसके शरीर में ऐंठने की शक्ति भी नहीं। अस्थियाँ टूटती जा रही हैं। जैसे शरीर को ऊखल में रखकर कूटा गया हो। श्रीकृष्ण ने उस निष्प्राण दैत्यदेह को भूमि पर फेंक दिया और एक ओर तीव्रता से दौड़ चला। गोपबालकों ने अनुगमन किया। कुमुद की चेतना लौट आयी। वह आश्चर्य से सब देखता रहा।

एक बड़ी-सी शिला फेंककर कन्हैया एक गुफा में घुसा हीं चला गया। उसके कण्ठ की दिव्यमणि ने गुफा को प्रकाशित कर दिया। 'भैया, वह नवीन बालक—वह सखा नहीं है अपना !' वहाँ मूर्छित बालक सहसा उठ खड़े हुए। श्रीकृष्ण को घेरकर उन्होंने कहा। उन्होंने समझा, उस दुष्ट ने श्याम को भी यहाँ बंद किया है।

'बड़ा निष्ठुर है यह !' साथ आये बालकों में से एक ने बताया—'उस बेचारे को इसने कुत्ते की मौत मारा !' और जब बालक बाहर आये—उन्हें एक भयंकर काला लोथड़ा मिला देखने को, जो स्थान-स्थान से फटकर रक्त से लथपथ हो रहा था। कौन बताये कि उनके सखा की निष्ठुरता के आवरण में जो दया थी, उसने इस लोथड़े के भीतर के कलुष तत्त्व को परमोज्ज्वल पद दे दिया है।

देवताओं ने—केवल देवताओं ने ही देखा कि वह असुर सचमुच गोप-बालक बनकर श्रीकृष्ण के नित्य धाम में जा रहा है और अब महेन्द्र को भी मार्ग में उसे पाद्यार्घ्य से सत्कृत करने में गौरव की अनुभूति होनी ही है। वह श्रीकृष्णचन्द्र का नित्यसखा जो बन चुका।

—❀⊂❀⊂❀—